दाई-ए-इस्लाम
सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम की

हयात-ए-तय्यबा

मौलाना
मुहम्मद अब्दुल हई रह०
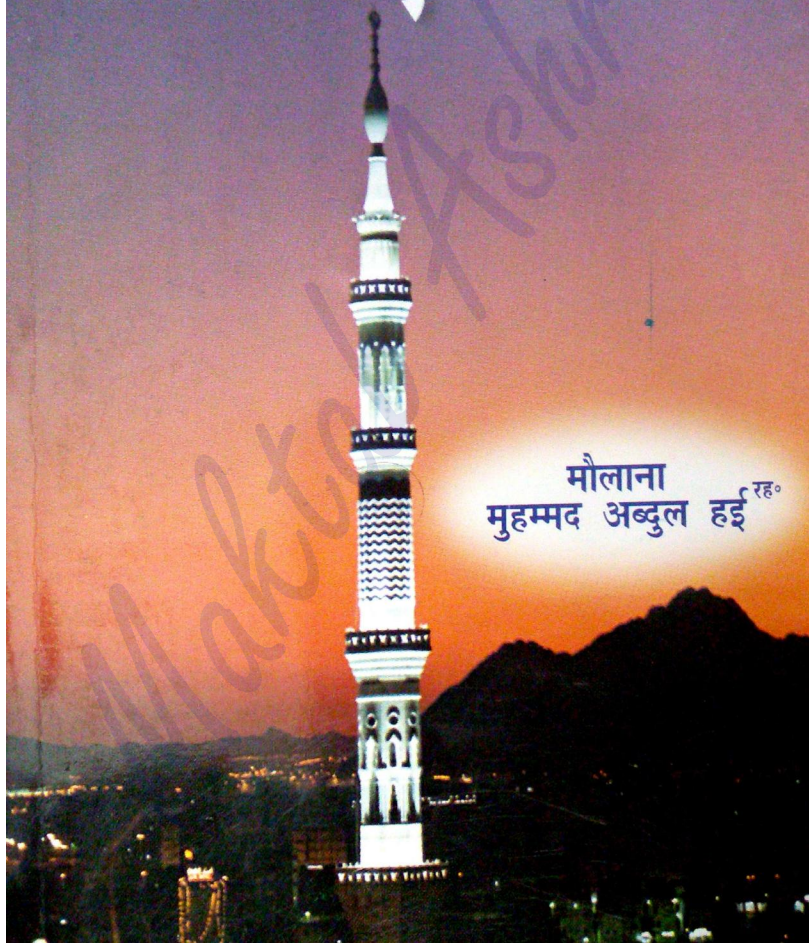
दाइ-ए-इस्लाम (स०)

की

हयाते तय्यबा

लेखक

अबू सलीम मो० अब्दुल हई

मकतबा अल हसनात

ISBN 81-85729-17-4

संस्करण 2016

प्रकाशक :
ए. एम. फ़हीम

अल हसनात बुक्स (प्रा. लि.)
3004/2 सर सय्यद अहमद रोड,
दरिया गंज, नई दिल्ली 110002
Tel. : 91-11-2327 1845, Fax : 91-11-4156 3256
e-mail :- alhasanatbooks@rediffmail.com
faisalfaheem@rediffmail.com

Printed at:

H.S. OFFSET PRINTERS Delhi,

मूल्य

₹ 100/-

"बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम"

नबी-ए-अरबी हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सीरते पाक एक ऐसा मौज़ू है जिस पर बेशुमार लोगों ने लिखा है, और क़यामत तक इस सआदत का सिलसिला जारी रहेगा। यह मौज़ू ही कुछ ऐसा है कि चाहे इस पर जितने लोग लिखें और जितना कुछ लिखें कभी मज़मून की ख़ुश्की और अदमे दिलचस्पी की शिकायत पैदा न हो सकेगी। नबी-ए-पाक की हयाते तय्यबा के इतने गोशे हैं और हर गोशे के इतने तक़ाज़े कि कभी कोई यह दावा नहीं कर सकता कि उस ने इस मौज़ू का हक़ अदा कर दिया। यहाँ तो वही हाल है कि

करिशमा दामने दिल मी कुशद कि जा ईंजास्त

उर्दू ज़ुबान में इस मौज़ू पर बहुत सी किताबें मौजूद हैं। आसान भी मुश्किल भी, मुख़्तसर भी और तवील भी। लेकिन एक अरसे से दिल में ख़लिश थी कि कोई किताब इस ज़ुबान में ऐसी भी होती जिस में दाइ-ए-इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की हयाते तय्यबा की तफ़सील कुछ इस अंदाज़ से सामने आती कि पढ़ने वाले के सामने उस कारे अज़ीम (बड़ा काम) और उस तहरीक का भी एक नक़शा आता चला जाता जिस के पूरा करने पर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मामूर थे। ज़ाहिर है कि यह काम कोई आसान काम नहीं इस के लिये वसीअ इल्म, उमदा तसनीफ़ी (लिखना) सलाहियत, ज़रूरी किताबों का अपनी चाहत के मुताबिक़ मौजूद होना और काफ़ी फ़ुरसत की ज़रूरत है। अल्लाह ही बेहतर जानता है कि वह इस ख़िदमत की सआदत अपने किस बन्दे को अता फ़रमाये।

इत्तिफ़ाक़, कि 12 अगस्त 54 ई० से 11 अगस्त 55 ई० तक डिस्ट्रिक्ट जेल रायबरैली में, और असबाब तो नहीं अलबत्ता फ़ुरसत काफ़ी मयस्सर आई उस वक़्त यह ख़ायाल सामने आया कि इस नज़रबन्दी की मुद्दत को कैसे ज़्यादा से ज़्यादा मुफ़ीद बनाया जाये। चुनाचे अल्लाह के फ़ज़्ल व करम ने रहनुमाई की और तबीयत इस राह

पर यकसू हो गई कि इस फुरसत को उस ख़्वाहिश की तकमील का ज़रिया बनाया जाये जिस का ज़िक्र ऊपर किया जा चुका है।

जेल में किताबों की एक महदूद तादाद ही मुहय्या हो सकती थी। चुनाचे सीरतुन्नबी, तफ़हीमु-ल-कुरआन और चन्द दूसरी छोटी छोटी किताबों के अलावा वहाँ और कुछ फ़राहम न हो सका और अल्लाह का नाम ले कर उन्हीं किताबों की बुनियाद पर आसान ज़ुबान में अपनी इसतेदाद (ताक़त) की हद तक इस ख़्वाहिश की तकमील कर ली जो अरसे से दिल में उभरा करती थी।

मौज़ू का हक़ कहाँ तक अदा हो सका। इस का अंदाज़ा मुताला करने वालों को तो किताब के मुताला से ही हो जाएगा। अलबत्ता लिखने वाले को पूरा-पूरा एहसास है कि इस मौज़ू का हक़ अदा करने की न उस में अहलियत थी और न इस के लिये असबाब ही फ़राहम थे, इस के बावजूद जो कुछ उम्मीदें थीं जिन की बुनियाद पर इस काम के करने की हिम्मत हुई और उसे कर लिया गया।

(1) हो सकता है कि यह अदना कोशिश दूसरे बासलाहियत लोगों के लिये एक मुहरिक बन जाये और वह इस काम को कमाहक़्क़हू कर दें।

(2) आसान उर्दू और हिन्दी में सीरते पाक पर एक नये अंदाज़ से लिखी हुई एक किताब का इज़ाफ़ा हो जाए।

(3) यह उम्मीद कि अल्लाह तआला इस कोशिश को कुबूल फ़रमा ले और इस के ज़रिए से कुछ लोगों की तहरीके इस्लामी के मिज़ाज और उस के तरीक़-ए-कार की तरफ़ रहनुमाई हो जाए और इस तरह कुछ नई रूहों में इस्लामी नसबु-ल-ऐन की तरफ़ बढ़ने का वलवला उभर आये।

रब्बना तक़ब्बल मिन्ना इन्नका अन्तस्समीउल-अलीम

मुहम्मद अब्दुल हई

डिस्ट्रिक्ट जेल रायबरैली
दोशंबा 20 ज़ीक़ादा 1374 हिजरी
1 जूलाई 1955 ई०

सूची

पहला बाब

दूसरा बाब

तीसरा बाब

छठा बाब

सातवाँ बाब

आठवाँ बाब

नवाँ बाब

पहला बाब

इस्लामी तहरीक और उस से पहले

इस्लाम या मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का पैग़ाम दुनिया की एक अज़ीमुश्शान इस्लाही तहरीक है। वही तहरीक जिसे हर ज़माने और हर मुल्क में अल्लाह के भेजे हुये नबी लाते रहे हैं। इस तहरीक ने ना सिर्फ़ रूहानी बल्कि इंसानी ज़िन्दगी के हर हिस्से की ऐसी इस्लाह की है जिस की मिसाल नहीं मिल सकती। यह एक ऐसी हमागीर तहरीक है जो एक ही वक़्त में रूहानी, अख़लाक़ी, मुआशरती और सियासी सब कुछ है। और जिस के दाएरे से इंसानी ज़िन्दगी का कोई गोशा बाहर नहीं।

तहरीके इस्लामी की अहमियतः– दुनिया में इस्लाही और इंक़लाबी तहरीकें बहुत सी उठती रही हैं लेकिन इस्लामी तहरीक अपनी बड़ाई और कुछ दूसरी ख़ुसूसियात के एतबार से उन सब से मुमताज़ है। इस तहरीक का उठान किस तरह हुआ? इस को पेश करने वाले ने किस तरह पेश किया और इस का क्या रद्देअमल हुआ। यह सवालात हर उस ज़हन में पैदा होते हैं जिस को शुरू से इस तहरीक का कुछ न कुछ तआरूफ़ होता है। लेकिन इन सवालात के जवाबात मालूम कर लेना सिर्फ़ तारीख़ जानने के शौक़ को ही पूरा नहीं करती है। बल्कि उन

जवाबात की असल अहमियत यह है कि उन को मालूम करने के नतीजे में एक ऐसी मुकम्मल इस्लाही तहरीक हमारे सामने आती है जो आज भी उन तमाम मसाइल को हल करने के लिये ज़रूरी और काफ़ी है जिन में इंसान उलझा हुआ है। यह तहरीक एक तरफ़ तो इंसान को उस के नफ़ा और नुक़सान का सही मतलब बताती है, उस के सामने उस अबदी (हमेशा रहने वाली) ज़िन्दगी की हक़ीक़तें ज़ाहिर करती है जो हर इंसान की आख़िरी मंज़िल है। और फिर दुनिया की ज़िन्दगी के लिये एक ऐसा लायह-ए-अमल (प्रोग्राम) तजवीज़ करती है जो उस अबदी ज़िन्दगी को कामियाब बनाने के साथ-साथ इस ज़िन्दगी को भी इस तरह संवार देती है कि फिर इंसान को उन तमाम उलझनों से निजात मिल जाती है जिन के हल करने में वह हमेशा परेशान रहा है और आज भी है।

इस्लामी तहरीक की यही एक खुसूसियत है जो हर तालिब इल्म को मुतवज्जह करती है कि वह उसे क़रीब से देखे और यह समझने की कोशिश करे कि इस तहरीक के बारे में जो यह इतना बड़ा दावा किया जाता है वह कहाँ तक ठीक है।

इस्लामी तहरीक को समझने के लिये यूँ तो बहुत सी किताबें लिखी जा चुकी हैं और लिखी जाती रहेंगी और उन की मदद से इस्लामी तहरीक का निहायत वाज़ेह (साफ़) तआरूफ़ भी हो जाता है। लेकिन जिस तरह रोशनी के तसव्वुर को चिराग़ से और ख़ुशबू के एहसास को फूल से जुदा नहीं किया जा सकता। इसी तरह किसी ऐसी अज़ीमुश्शान तहरीक को भी उस के मुहरिक (उभारने वाला) के तसव्वुर से अलग नहीं किया जा सकता। इसी लिये जब लोगों के सामने इस्लामी तहरीक का

ज़िक्र आता है तो वह साथ ही तहरीक के दाई (दावत देने वाला) हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़िन्दगी के हालात और तहरीक के असल माख़ज़ यानी कुरआन पाक की तशरीह और तफ़सीर का मुतालबा करते हैं और यह मुतालबा बिल्कुल फ़ितरी (कुदर्ती) है।

तहरीके इस्लामी का एक इम्तियाज़:- सब जानते हैं कि इंसानियत का सब से पहला फ़र्ज़ और उस की सब से बहतरीन ख़िदमत यही है कि लोगों का अख़लाक़ी सुधार किया जाये। उन की बुराईयों को दूर किया जाए। और उन के सामने ज़िन्दगी का एक ऐसा मुकम्मल नक़शा पेश किया जाए जिस पर चल कर इंसान ठीक तरह से कामियाब हो सके। इस मक़सद के लिये बहुत से लोगों ने अपने अपने तरीक़ों पर काम किये हैं लेकिन इस किस्म के इस्लाही काम करने वालों ने इंसानी इस्लाह के कुछ हिस्सों को अपने लिये ख़ास कर लिया और फिर उन्हीं हिस्सों में जो कुछ कर सकते थे वह किया। किसी ने अख़लाक़ और रूहानियत को अपना मरकज़ बनाया, किसी ने तहज़ीब व तमद्दुन के संवारने की कोशिश की, किसी ने हुकूमत और सियासत को अपना मैदान बनाया लेकिन ऐसे इस्लाह करने वाले जिन्हों ने इंसान की पूरी ज़िन्दगी को संवारने का फ़ैसला किया, हज़रात अंबिया-ए-किराम अलैहिमुस्सलाम ही हैं।

इस दुनिया के पैदा करने वाले का इंसानियत पर सब से बड़ा एहसान यह है कि अंबिया-ए-किराम अलैहिमुस्सलाम में जो नबी सब से आख़िर में तशरीफ़ लाये उन की दावत और उन की ज़िन्दगी के हालात आज तक इस तरह महफ़ूज़ हैं कि उस की कोई दूसरी मिसाल इंसानी तारीख़ में नहीं मिलती। हज़रत

मुहम्मद स० की ज़िन्दगी के हालात इस तरह लिखे हुये हैं कि एक तरफ़ तो सेहत का ऐसा इन्तिज़ाम हुआ जो आज तक किसी तारीख़ी रिकार्ड को मिल ही न सका और दूसरी तरफ़ बड़ाई और तफ़सील का यह हाल कि आप की बातें, काम, ज़िन्दगी गुज़ारने का ढंग, शक्ल व सूरत, उठना बैठना, बोल चाल, रहन सहन, मुआमलात हद यह कि खाने पीने, सोने जागने और हंसने बोलने तक की एक एक अदा महफ़ूज़ रह गई, गर्ज़ यह कि आज जो तफ़सीलात हम अपने ज़माने से चन्द सौ बरस पहले गुज़रे हुये बड़े लोगों के बारे में नहीं जानते वह तक़रीबन डेढ़ हज़ार साल गुज़रने के बाद भी हज़रत मुहम्मद स० के बारे में जान सकते हैं।

हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़िन्दगी के हालात का मुताला करने से पहले एक और ख़ुसूसियत पर नज़र रखना चाहिये हर काम की अहमियत का अंदाज़ा उन हालात से होता है जिन में वह काम अंजाम दिया गया हो साज़गार और सही हालात में जो तहरीकें देखते देखते कहीं से कहीं पहुंच जाती हैं वही नासाज़गार हालात में बिल्कुल मुरझा कर रह जाती हैं। आम तौर पर तहरीकों का हाल यह है कि पहले लोगों में इस की कुबूलियत के लिये मवाद पकता रहता है और फिर जब अचानक किसी तरफ़ से कोई तहरीक उठ खड़ी होती है तो लोगों की हमदर्दियाँ उस के साथ हो जाती हैं और तहरीक चल निकलती है, मिसाल के तौर पर किसी वतन की आज़ादी की तहरीक को ले लीजिये लोग आम तौर पर किसी बैरूनी हुकमराँ की ताक़त के ज़ुल्म और ज़्यादतियों से परेशान होते हैं और दिलों में उस के ख़िलाफ़ एक जज़्बा पैदा होता रहता है फिर

जब कोई हिम्मत वाला शख़्स उठ कर वतन की आज़ादी का नारा बुलंद कर देता है तो चाहे ख़तरों और नुक़सानात के अंदेशों की वजह से थोड़े ही लोग उस का साथ दें लेकिन ज़्यादा तर लोगों की दिली हमदर्दियाँ उसी के साथ होती हैं यही हाल मआशी तहरीकों का है लोग अपनी मजबूरियों और मआशी लूट खसोट करने वालों की ज़्यादतियों की वजह से ख़ुद आजिज़ हो जाते हैं और ऐसे मौक़े पर अगर कोई तहरीक मआशी इस्लाह व इंक़िलाब की उठती है तो फिर यह सब लोग उसी तरफ़ मुतवज्जह हो जाते हैं। लेकिन ज़रा सोचिये एक ऐसी तहरीक का जो बिल्कुल मुख़ालिफ़ हालात में उठे जैसे किसी आज़ाद मुल्क में कोई शख़्स यह नारा बुलंद करे कि मुल्क को फ़लाँ ताक़त की गुलामी इख़्तियार कर लेनी चाहिये जब कि मुल्क के सारे ही लोग आज़ादी को अज़ीज़ रखते हों तो सोचिये उन परेशानियों व मुश्किलात का जो ऐसे हालात में ऐसी बात पेश करने वाले को पेश आ सकते हैं।

इस्लामी तहरीक के दाई (दावत देने वाला) हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की अहमियत और आप के काम की वाक़ई अज़मत का कोई तसव्वुर नहीं हो सकता जब तक आप के सामने यह बात न हो कि आप ने जो कुछ पेश किया वह कैसे मुख़ालिफ़ हालात में पेश किया इस लिये आप की ज़िन्दगी के वाक़िआत का मुतालआ करने से पहले यह भी देख लीजिये कि जब इस्लाम के दाई स० ने इस्लाम पेश किया उस वक़्त अरब के मुल्क और सारी दुनिया के हालात क्या थे?

इस्लाम की दावत के वक़्त दुनिया के हालातः– इस्लाम ने जो कुछ पेश किया उस की उसल बुनियाद तौहीद है लेकिन

यही वह रोशनी है जिस से उस वक़्त न सिर्फ़ अरब बल्कि पूरी दुनिया महरूम थी। तौहीद के सही तसव्वुर से इंसानी ज़ह्न ख़ाली थे यह सही है कि आँहज़रत स° से पहले सही इस्लाम के दाई (दावत देने वाला) बेशुमार आ चुके थे और ज़मीन का हर आबाद इलाक़ा तौहीदे ख़ालिस के पयाम से सरफ़राज़ हो चुका था। लेकिन इंसानियत की बदनसीबी कि उस ने उस सबक़ को भुला दिया था और अपनी ख़्वाहिशात के मुताबिक़ चाँद, सूरज, सितारों, जिनों, फ़रिश्तों, देवी देवताओं, पहाड़ों, दरियाओं, जानवरों, इंसानों और न जाने किन किन को उलूहियत (खुदाई) में शरीक कर लिया था और अब इंसान एक की बन्दगी में सुकून पाने के बजाये बेशुमार मअबूदों के चक्कर में फँसा हुआ था।

उस वक़्त सियासी एतबार से दो अह्म ताक़तें मौजूद थीं फ़ारस और रूम, फ़ारस का मज़हब मजूसियत (आग की पूजा करना) था जो ईराक़ से लेकर हिन्दुस्तान की सरहदों तक फैला हुआ था। रूम का मज़हब ईसाइयत था जो यूरोप ऐशिया और अफ़रीक़ा को घेरे हुये था। लेकिन उन के अलावा मज़हबी एतबार से यहूदी और हिन्दू भी अह्मियत रखते थे। और उन में से हर एक को अपनी अपनी जगह सदाक़त का दावा था।

ईरान में सितारों की पूजा आम थी। इस के अलावा बादशाह और अमीर लोग भी दरजा बदरजा प्रजा के खुदा और देवता थे जिन को सजदे किये जाते थे। उन की खुदाई के गीत गाये जाते थे। ग़र्ज़ यह कि पूरा मुल्क तौहीद के तसव्वुर से ख़ाली था।

रूम की हुकूमतः— यूनान के ज़वाल के बाद रूम की हुकूमत

दुनिया की सब से बड़ी हुकूमत समझी जाती थी लेकिन छटी सदी ईसवी के ख़ात्मे पर यही हुकूमत अपनी पस्ती के आख़िरी नुक़्ता तक पहुंच चुकी थी। हुकूमत की बदनज़मी, दुश्मन का ख़ौफ़, मुल्क के अन्दर बदअमनी, अख़्लाक़ की इन्तिहाई गिरावट, ऐश परस्ती की इन्तिहा, ग़र्ज़ यह की कोई बुराई ऐसी न थी जो उन में पैदा न हो गई हो। मज़हबी एतबार से कुछ लोग तो सितारों और देवताओं के बुतों की पूजा में मसरूफ़ थे लेकिन जिन लोगों नें ईसाई मज़हब कुबूल भी कर लिया था वह भी तौहीद के तसव्वुर से ख़ाली हो गये थे। वह बाप, बेटा, रूहुलकुद्स (पाक रूह) और मरयम की ख़ुदाई के मानने वाले थे। सैकड़ों मज़हबी फ़िरक़े बन गये थे और यह सब आपस में लड़ते रहते थे। क़ब्र परस्ती आम थी। पदरियों को सजदे किये जाते थे, पोपो ने और उन के बाद दर्जा बदर्जा मज़हबी अफ़सरान ने अपनी अपनी जगह शहंशाहाना बल्कि ख़ुदाई के इख़्तियारात अपने हाथ में ले रखे थे। हलाल व हराम के इख़्तियारात उन को हासिल थे और उन का क़ौल ख़ुदा का क़ौल समझा जाता था। दीनदारी का ऊँचा तसव्वुर रुहबानियत और दुनिया को छोड़ देना था। हर क़िस्म के आराम व आसाइश से जिस्म को महरूम रखना सब से बड़ी इबादत समझा जाता था।

हिन्दुस्तानः- हिन्दुस्तान में उस वक़्त वह दौर था जिस को मज़हबी अदवार में पूरान्क दौर कहा जाता है यह दौर हिन्दुस्तान की मज़हबी तारीख़ में सब से ज़्यादा तारीक दौर माना जाता है उस वक़्त बरहमनियत फिर से ग़ालिब आ रही थी और बुधों का तक़रीबन क़लअक़मअ (तोड़ फोड़) हो चुका था। उस दौर की ख़ुसूसियात यह हैं कि शिर्क हद से ज़्यादा बढ़ चुका था।

देवताओं की तादाद बढ़ते बढ़ते 33 करोड़ तक पहुंच चुकी थी। कहा जाता है कि वेदों के ज़माने में बुत परस्ती का रिवाज न था लेकिन उस वक़्त मन्दिरों में बुतों की पूजा आम थी। मन्दिरों के पुजारी बदअख़लाक़ी का नमूना थे और कम समझ अवाम को लूटना उन का काम था। उसी ज़माने में ज़ात पात की तफ़रीक़ भी इन्तिहा पर थी। हालाँकि इब्तिदाई ज़माने में उस क़िस्म की तफ़रीक़ मौजूद न थी उस तफ़रीक़ ने समाज के सारे निज़ाम को बरबाद कर दिया था ऐसे क़वानीन बना लिये गये थे जिन में इंसाफ़ का ख़ून होता था। और नस्ल व ख़ानदान के एतबार से लोगों को ग़लत रियायतें दी जाती थीं। शराब पीने का आम रिवाज था। खुदा की तलाश में जंगलों और पहाड़ों में उम्रें गुज़ारना ज़रूरी समझा जाता था। औहाम (वहम) और फ़ासिद (गंदे) ख़यालात अपनी इन्तिहा पर थे। भूत परेत और सैकड़ों क़िस्म के शुगूनों ने इंसानी ज़िन्दगी को जकड़ रखा था। हर अजीब चीज़ खुदा थी। हर एक के सामने सिर झुका देना ही गोया मज़हब बन गया था। देवी, देवताओं और बुतों की गिन्ती अन्दाज़ा और क़यास से बाहर थी। पुजारी औरतों और देवदासियों की अख़लाक़ी हैसियत इन्तिहाई शर्मनाक हो चुकी थी और सितम यह था कि यह सब कुछ मज़हब के नाम पर किया जाता था। औरतें जुवे में हारी जाती थीं एक औरत के कई कई शौहर होते थे, बेवा औरत उम्र भर के लिये क़ानूनी तौर पर हर लज़्ज़त से महरूम कर दी जाती थी, समाज के ऐसे ही शर्मनाक बरताव की वजह से एक औरत शौहर के बाद ज़िन्दा जल जाना गवारा कर लेती थी। लड़ाई में हार जाने के डर से औरतों को खुद उन के बाप भाई और शौहर अपने हाथों से क़त्ल कर देते

थे और इस पर फ़ख़्र करते थे। नंगे मर्दों और औरतों की पूजा होती थी मज़हबी तेहवारों में शराब पी पी कर मस्त हो जाते थे और यह सब धंदे नेकी का काम समझे जाते थे। ग़र्ज़ यह कि अख़लाक़ मज़हब और मुआशेरत के एतबार से अल्लाह की यह ज़मीन बुरी तरह शैतान के जाल में जकड़ी हुई थी।

यहूदः- ख़ुदा के दीन के हामिल होने के एतबार से इस्लाह की कोई उम्मीद अगर की जा सकती थी तो वह यहूद से की जा सकती थी लेकिन उन की हालत भी इन्तिहाई गिर चुकी थी। उन्हों न अपनी लम्बी तारीख़ में ऐसे ऐसे जराइम किये थे जिन की वजह से अब उन का यह मक़ाम भी न रह गया था कि वह कोई इस्लाही काम कर सकें। इन्तिहा यह कि जब कभी उन के अन्दर अल्लाह का कोई नबी आता तो वह उस की बातों को बरदाश्त तक न कर सकते थे और न जाने उन्हों ने कितने नबियों को क़त्ल किया। यह इस गुमान में मुबतला हो गये थे कि उन का ख़ुदा से कोई ख़ास तअल्लुक़ है और इस की बिना पर वह उन्हें अज़ाब ही न देगा। उन का ख़याल था कि जन्नत की नेमतें असल में उन के लिये ही बनाई गई हैं नुबूव्वत और रिसालत को वह अपनी क़ौमी मीरास कहते थे। उन के आलिम इन्तिहाई दुनियादार और ज़माना साज़ थे वह दौलतमंदों और हाकिमों की ख़ुशनूदी के लिये आये दिन मज़हबी अहकाम में काट छाँट करते रहते थे अल्लाह के अहकाम में जो हुक्म आसान और अपनी ख़्वाहिश के मुताबिक़ होता उस पर अमल कर लेते और जो अहकाम सख़्त और नापसन्द होते उन को छोड़ देते आपस में लड़ना मरना उन का आम काम हो गया था। माल व दौलत की ख़्वाहिश इतनी बढ़ गई थी कि उस की

वजह से वह कोई ऐसा काम करने का इरादा तक न कर सकते थे जिन मे जान व माल का कोई अंदेशा हो। इसी वजह से उन की अख़लाक़ी हालत इन्तिहाई कमज़ोर हो गई थी। उन में मुश्रिकाना बुतपरस्ती के असरात भी पैदा हो गये थे टोने टोटके, तावीज़ गंडे, जादू, अमलियात, वग़ैरा वग़ैरा क़िस्म की सैकड़ों चीज़ों ने उन के अन्दर घुस कर तौहीद के असल तसव्वुर को बिल्कुल बरबाद कर दिया था यहाँ तक कि जब अल्लाह के आख़िरी नबी मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने तौहीद का साफ़ तसव्वुर पेश किया तो इन्हीं यहूदियों ने यहाँ तक कह दिया कि इन मुसलमानों से तो अरब के मुश्रिक बेहतर हैं।

अरब की हालतः- दुनिया के मज़हबी और सियासी हालात पर नज़र डालने के बाद आइये ख़ुद अरब की हालत पर भी एक नज़र डाल ली जाये क्यों कि यही वह मक़ाम है जहाँ अल्लाह के नबी ने अपनी तहरीक का आग़ाज़ किया और जहाँ के हालात से उन्हें सब से पहले दोचार होना पड़ा।

अरब के एक बड़े हिस्से यानी वादि-ए-कुरा और ख़ैबर व फ़िदक में ज़्यादा तर यहूदी आबाद थे ख़ुद मदीने में भी यहूदियों की हुकूमत थी बाक़ी मुल्क में मुश्रिकाना रूसूम जारी थीं लोग बुतों, पत्थरों, पेड़ों, सितारों, फ़रिश्तों और जिनों की पूजा करते थे अलबत्ता एक अल्लाह का तसव्वुर ज़रूर मौजूद था उसे यह लोग ख़ुदाओं का ख़ुदा या सब से बड़ा ख़ुदा मानते थे लेकिन यह एतक़ाद इतना कमज़ोर पड़ गया था कि वह अपने इन्हीं छोटे छोटे ख़ुदाओं और मअबूदों में उलझे रहते थे जिन को उन्हों ने अल्लाह के अलावा अपना ख़ुदा बना लिया था। उन का ख़याल था कि रोज़ाना की ज़िन्दगी में असल काम तो इन छोटे

ख़ुदाओं से पड़ता है लिहाज़ा यह इन्हीं की इबादत करते थे इन्हीं के नामों पर नज़्रें और कुर्बानियाँ करते थे और इन से ही अपनी मुरादें माँगते थे। अल्लाह के बारे में उन का यह एतक़ाद था कि छोटे ख़ुदाओं को ख़ुश कर लेने से अल्लाह भी ख़ुश हो जाता है।

यह लोग फ़रिश्तों कों ख़ुदा की बेटियाँ कहते थे, जिनों को ख़ुदा का अज़ीज़, क़रीब और ख़ुदाई में शरीक समझते थे और इसी निस्बत से उन की पूजा करते थे और उन से मदद माँगते थे जिन हस्तियों को यह ख़ुदाई में शरीक मानते थे उन के बुत बना कर उन की पूजा करते थे बुतपरस्ती का शौक़ इतना आम हो गया था कि जहाँ कोई खुबसूरत सा पत्थर पड़ा मिल गया उसी को पूजने लगे और कुछ न मिला तो मिट्टी का एक गोंदा बनाया, उस पर बकरी का दूध छिड़का और उसी का तवाफ़ करना शुरू कर दिया। ग़र्ज़ यह कि अरबों के बेशुमार बुत थे। इन बुतों के अलावा अरब सितारों को भी पूजते थे मुख़तलिफ़ क़बीले मुख़तलिफ़ सितारों को पूजते थे उन में सूरज और चाँद को ज़्यादा अहमियत थी जिनों और भूत प्रेत की भी पूजा होती थी उन के बारे में उन में अजीब-अजीब बातें मशहूर थीं। इस के अलावा इस क़िस्म के वहम जो मुश्रिकाना क़ौमों में आम होते हैं वह भी सब उन में पाये जाते थे।

इस मज़हबी बिगाड़ के साथ-साथ आपस की लड़ाई उन के यहाँ आम बात थी। मामूली-मामूली बातों पर जंग ठन जाती और फिर उस का सिल्सिला पुश्तों तक चलता रहता। जुवा खेलना और शराब पीना इतना आम था कि शायद ही कोई क़ौम इस मामले में उन का मुक़ाबिला कर सकती। शराब की

तारीफ़ और उस के तअल्लुक़ से होने वाली बदकारियों के ज़िक्र से उन की शायरी भरी पड़ी थी। इस के अलावा सूदख़ोरी, लूट मार, चोरी, बेरहमी, कुश्त व ख़ून, ज़िना और दूसरे गंदे कामों ने उन को गोया इंसानी शक्ल में दरिन्दा बना दिया था वह अपनी लड़कियों को ज़िन्दा दफ़न कर दिया करते थे। बेशर्मी और बेहयाई का यह आलम था कि मर्द और औरतें नंगे हो कर ख़ान-ए-काबा का तवाफ़ करते थे और उसे एक मज़हबी काम समझते थे। ग़र्ज़ यह कि मज़हब, अख़लाक़, मुआशरत और सियासत हर एतबार से अरब इन्तिहाई पस्ती में गिर चुके थे।

तहरीके इस्लामी के लिये अरब की खुसूसियातः- ना सिर्फ़ अरब बल्कि सारी दुनिया जिस अंधेरे में भटक रही थी उस के लिये एक ऐसी सुब्ह की ज़रूरत थी जो सारे अंधेरों को दूर कर दे और अल्लाह के भटके हुये बन्दों को अल्लाह की राह दिखा दे और इस सुब्ह के निकालने के लिये अल्लाह तआला नें सारी दुनिया में अरब के मुल्क को ही क्यों पसन्द फ़रमाया इस बारे में भी चन्द बातें ग़ौर करने के क़ाबिल हैं।

हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को अल्लाह तआला ने सारी दुनिया के लिये हिदायत और रहनुमाई का आख़िरी पैग़ाम दे कर भेजने के लिये चुना था और आप की दावत को सारी दुनिया में फैलना था ज़ाहिर है कि किसी एक आदमी की ज़िन्दगी इस अज़ीम काम के लिये काफ़ी नहीं हो सकती थी। इस के लिये ज़रूरी था कि अल्लाह के नबी अपनी मौजूदगी में इस्लाह करने वालों का एक ऐसा गिरोह तयार कर जाएँ जो आप के बाद भी आप के काम को जारी रखे। इस अहम काम के लिये जिस क़िस्म की खुसूसियात की ज़रूरत थी

वहं अरब के बाशिन्दों में ज़्यादा ऊँचे पैमाने पर और उमूमियत के साथ पाई जाती थीं। इस के अलावा अरब के मुल्क का जुग़राफ़ियाई मक़ाम भी कुछ ऐसा है कि वह आबाद दुनिया के तक़रीबन मरकज़ में वाक़े है और इस तरह इस पयाम को चारों तरफ़ फैलाने में बहुत कुछ आसानियाँ थीं।

इस के अलावा अरबी जुबान की वुस्अत और ख़ुसूसियात ऐसी हैं कि जिन मज़मून को पेश करना था उस को जिस क़द्र आसानी के साथ अरबी जुबान में अदा किया जा सकता था दुनिया की दूसरी जुबानों के दामन इस के लिये बहुत तंग थे।

अरबों की बड़ी ख़ुसूसियत यह थी कि वह महकूम नहीं थे गुलामी की वजह से ज़ेहनों में जो पस्ती आ जाती है। और आला इंसानी सिफ़ात में जो गिरावट पैदा हो जाती है उस से यह लोग महफ़ूज़ थे। उन के चारों तरफ़ ईरान और रूम की बड़ी बड़ी हुकूमतें थीं। लेकिन उन में से कोई अरबों को अपना गुलाम न बना सकी थीं। वह हद से ज़्यादा बहादुर और निडर थे। ख़तरों को कभी ध्यान में न लाते थे, लड़ाई को खेल समझते थे, पुरजोश थे इरादों के पुख़्ता थे दिल के साफ़ थे जो बात दिल में होती वही जुबान पर होती छल कपट और लाग लगाव की बीमारियाँ जो आम तौर पर गुलाम और बुज़दिल क़ौमों में पैदा हो जाती हैं उन से वह पाक थे, आम समझ और अक्ल के एतबार से ऊँचा दरजा रखते थे। ज़हनी तौर पर बुलंद थे, बारीक बातों को समझने की सलाहियत रखते थे, हाफ़िज़ा बहुत तेज़ था। इतना तेज़ कि इस बारे में यह लोग दुनिया में अपनी हमअसर क़ौमों में यकता थे, फ़य्याज़ थे, ग़ैरतमंद और ख़ुद्दार थे, ज़लील होना बरदाश्त न कर सकते थे,

रेगिस्तान की सख़्त ज़िन्दगी के बाइस अमली क़िस्म के लोग थे किसी बात को कुबूल कर लेने के बाद उन के लिये यह बहुत दुश्वार था कि वह बैठे बैठे उस की दाद दिया करें बल्कि इस के बरख़िलाफ़ वह इस बात को लेकर उठ खड़े होते थे और देखते-देखते अपनी पूरी ज़िन्दगी को अपने पसंदीदा काम में लगा देते थे।

अरबों की इस्लाह में मुश्किलातः- एक तरफ़ तो अरब की सरज़मीन अरब की ज़ुबान और अरब के लोगों की यह ख़ुसूसियात थीं जिन की बुनियाद पर अल्लाह तआला ने अपने आख़िरी पयाम को उस मुल्क और उन लोगों पर भेजना तैय फ़रमाया लेकिन दूसरी तरफ़ वह मुश्किलात भी कुछ कम न थीं जो इस क़ौम की इस्लाह के लिये हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को बरदाश्त करना पड़ीं। शुरू ही में लिखा जा चुका है कि हर काम की अज़्मत को जाँचने के लिये यह देखना ज़रूरी है कि वह किन हालात में किया गया। चुनाचे इस्लामी तहरीक जिस ज़माने में उठी और कामियाब हुई उस एतबार से वह दुनिया की तारीख़ का एक अज़ीम कारनामा है और इस एतबार से आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जिस क़ौम को दुनिया की इमामत के लिये तयार किया और इस सिलसिले में आने वाली मुश्किलात को जिस तरह सर किया वह भी एक करिश्मे से कम नहीं।

जब तक अरब क़ौम की यह ख़ुसूसियात सामने न हों कोई शख़्स इस अज़ीम इस्लाही काम का अन्दाज़ा नहीं कर सकता जो अल्लाह के आख़िरी नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हाथों अंजाम पाया। उस क़ौम की इस्लाह में चन्द दर चन्द

मुश्किलात हायल थीं। उन में से बड़ी-बड़ी और क़ाबिले ज़िक्र यह हैं।

अरब क़ौम बिल्कुल अनपढ़ थी। ख़ुदा की ज़ात व सिफ़ात का सही तसव्वुर रिसालत की नौइयत और अहमियत वही का मफ़हूम, अल्लाह की किताब का फ़हम, आख़िरत का तसव्वुर, इबादत का सही मतलब ग़र्ज़ यह कि उन में से कोई चीज़ ऐसी न थी जिस से वह पहले से वाक़िफ़ हों फिर यह लोग अपने बाप दादा के रस्म व रिवाज के ऐसे अंधे मानने वाले थे कि उन से इंच भर हटना उन को सख़्त नागवार था जबकि इस्लाम जो कुछ पेश करता था वह उन के उस आबाई मज़हब के बिल्कुल ख़िलाफ़ था। शिर्क से पैदा होने वाली तमाम ज़ेहनी बीमारियाँ उन में मौजूद थीं। तोहम परस्ती ने उन की अक़्ल को बेकार कर दिया था। आपस की लड़ाइयाँ गोया की क़ौमी ख़ुसूसियत बन गई थीं और उन की वजह से उन के लिये किसी मसअले पर संजीदगी से सोचना आसान न था। वह जो कुछ सोचते लड़ाई और ख़ानाजंगी के अंदाज़ पर सोचते थे। आम तौर पर लूट मार कमाई का ज़रिया था। इसी तरह अंदाज़ा किया जा सकता है कि जब आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम उन को इस्लाम की दावत देते थे तो उन के सामने एक ऐसी बात आती थी जिस को उस से पहले न उन्हों ने सुना था और न समझा था और जो बाप दादा के चलन और उन ख़यालात के बिल्कुल ख़िलाफ़ थी जिन को वह अभी तक सीने से लगाये हुये थे। उस दावत का मुतालबा था कि लड़ाईयाँ बन्द करो, अमन के साथ रहने का फ़ैसला करो, लूट मार करना ग़लत है। फ़ासिद ख़यालात, बुरी आदतें और सब से ज्यादा यह कि हराम कमाई

का ज़रिया फ़ौरन छोड़ दो। ज़ाहिर है कि एक ऐसी पुकार पर साथ देने के लिये उन लोगों को तयार करना इन्तिहाई मुश्किल काम था।

ग़र्ज़ यह कि पूरी दुनिया के हालात, अरब के हालात और जिस क़ौम से वास्ता था उस की आदात व खुसूसियात कोई चीज़ भी ऐसी नज़र नहीं आती जो बज़ाहिर उस दावत के लिये साज़गार कही जा सकती हो लेकिन जब नताइज सामने आते हैं तो मालूम होता है कि

वह बिजली का कड़का था या सौते हादी
अरब की ज़मीं जिस ने सारी हिला दी
नई एक लगन दिल में सब के लगा दी
एक आवाज़ में सोती बस्ती जगा दी
पड़ा हर तरफ़ गुल यह पैग़ामे हक़ से
कि गूँज उट्ठे दश्त-ओ-जबल नामे हक़ से

और यही वह करिश्मा है जिस के सामने आते ही हर इंसान का दिल चाहता है कि वह उस ज़ाते गिरामी के बारे में तफ़सील से जाने और आप की पेश की हुई दावत को क़रीब से समझे। आइन्दा अबवाब में यही चीज़ आप के सामने आयेगी।

दूसरा बाब

पैदाइश और बचपन

ख़ानदानः- हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के वालिद बुज़ुर्गवार का नाम अब्दुल्लाह था जो अब्दुल मुत्तलिब के बेटे थे, आप का सिलसिल-ए-नसब तक़रीबन साठ पुश्तों के वास्ते से हज़रत इस्माईल बिन हज़रत इब्राहीम अलैहिमुस्सलाम से जा कर मिल जाता है। आप के ख़ानदान का नाम कुरैश था जो अरब के तमाम ख़ानदानों में कितनी ही पुश्तों से मुअज़्ज़ज़ और मुमताज़ माना जाता था। अरबों की तारीख़ में इस ख़ानदान के कितने ही लोग बहुत ही इज़्ज़त वाले और बड़े माने गये हैं जैसे नज़्र, फ़ह्र, कुसैय बिन किलाब। कुसैय (एक क़बीले का नाम) अपने ज़माने में हरमे काबा के मुतवल्ली बनाये गये और इस तरह उन की अज़मत और भी बढ़ गई। कुसैय ने बहुत बड़े-बड़े काम किये। जैसे हाजियों को पानी पिलाने और उन की मेज़बानी का इन्तिज़ाम वग़ैरा। यह काम उन के बाद उन के ख़ानदान वाले करते रहे। इन ख़िदमती कामों के करने और हरमे काबा के मुतवल्ली होने की वजह से कुरैश को तमाम अरब में बड़ी इज़्ज़त और अहमियत हासिल हो गई थी आम तौर पर अरब में लूट मार का रिवाज था और रास्ते महफ़ूज़ न थे लेकिन हरमे काबा से निस्बत और हाजियों की ख़िदमत की

बिना पर कुरैश के क़ाफ़िलों को कोई नहीं लूटता था। और वह अमन के साथ अपना माले तिजारत एक जगह से दूसरी जगह ले जाते थे।

अब्दुल मुत्तलिब के दस या बारह बेटे थे। लेकिन कुफ़्र या इस्लाम की ख़ुसूसियत की वजह से उन में से पाँच बहुत मश्हूर हैं। एक जनाब अब्दुल्लाह जो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के वालिद बुजुर्गवार थे। दूसरे अबूतालिब, जो अगरचे इस्लाम नहीं लाये लेकिन उन्हों ने एक अरसा तक आप की सरपरस्ती की। तीसरे हज़रत हमज़ा और चौथे हज़रत अब्बास रज़िअल्लाहु अन्हुमा। आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के यह दोनों चचा मुशर्रफ़ ब इस्लाम हुये और इस्लामी तारीख़ में बड़ा ऊँचा मक़ाम हासिल किया। और पाँचवें अबूलहब। अबूलहब की शख़्सियत तारीख़े इस्लाम में इस्लाम दुश्मनी के लिये बहुत नुमायाँ है।

अब्दुल्लाह की शादी क़बीला ज़ुहरा में वहब बिन अब्दे मनाफ़ की लड़की से हुई जिन का नाम आमिना था। कुरैश के ख़ानदान में आप बड़ी मुमताज़ बीबी थीं। शादी के वक़्त अब्दुल्लाह की उम्र तक़रीबन 17 साल थी। शादी के बाद ख़ानदानी दस्तूर के मुताबिक़ आप तीन दिन तक अपनी सुसराल में रहे। उस के बाद तिजारत के सिलसिले में शाम चले गये। वापसी पर मदीना में बीमार हो गये और यहीं इंतिक़ाल फ़रमा गये। उस वक़्त हज़रत आमिना हमल से थीं।

पैदाइशः– 9 रबीउल-अव्वल दोशंबा का दिन मुताबिक़ 20 अप्रेल 571 ई० की वह मुबारक सुब्ह थी। जब रहमते इलाही के फ़ैसले के मुताबिक़ इस बासआदत हस्ती की पैदाइश हुई जिस

के वुजूद से सारे आलम की अंधियारियों को दूर होना था और इंसानियत को वह नूरे हिदायत मिलना था जो क़यामत तक इस ज़मीन पर बसने वाले सारे इंसानों के हक़ में मालिके कायनात की सब से बड़ी नेमत है। वालिद का तो इंतिक़ाल ही हो चुका था। दादा अब्दुल मुत्तलिब ने आप का नाम मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) रखा।

परवरिश और बचपनः– सब से पहले आप की वालिदा माजिदा हज़रत आमिना ने दूध पिलाया, उस के बाद अबू लहब की लौंडी सौबिया ने भी दूध पिलाया। इस ज़ामने में यह रिवाज था कि शहर के बड़े लोग अपने बच्चों को दूध पिलवाने और पलने बढ़ने के लिये दीहात और क़स्बात में भेज देते थे। ताकि वहाँ की खुली हवा में रह कर उन की सेहत अच्छी हो जाये। और वह बहुत फ़सीह अरबी ज़ुबान भी सीख जाएँ। अरब में शहरों की बनिस्बत दीहात और क़स्बात की ज़ुबान बहुत ज़्यादा फ़सीह और अच्छी मानी जाती थी। इस दस्तूर के मुताबिक़ दीहात की औरतें शहर में आया करती थीं और बच्चों को परवरिश के लिये अपने साथ ले जाती थीं चुनाचे आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की पैदाइश के कुछ रोज़ बाद ही क़बील-ए-हवाज़िन की कुछ औरतें बच्चों की तलाश में मक्के आईं। उन में हलीमा सअदिया भी थीं। यही वह खुशनसीब ख़ातून हैं जिन को जब कोई दूसरा बच्चा न मिला तो उन्हों ने मजबूरन आमिना के यतीम बच्चे को ही ले लेना मंज़ूर कर लिया।

दो साल के बाद हलीमा सअदिया आप को वापस लाईं लेकिन उस ज़माने में मक्के में कोई बीमारी फैली हुई थी चुनाचे

आप की वालिदा ने आप को फिर दीहात भेज दिया जहाँ आप तक़रीबन छः साल की उम्र तक रहे।

जब आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की उम्र छः साल की हुई तो आप की वालिदा आप को ले कर मदीना गईं। ग़ालिबन आप अपने शौहर की क़ब्र की ज़ियारत के लिये गई हों या वहाँ कोई रिश्तेदारी का तअल्लुक़ ऐसा हो जिस की वजह से आप ने यह सफ़र इख़्तियार फ़रमाया हो आप ने वहाँ तक़रीबन एक महीने तक क़याम किया। वापसी में एक मक़ाम "अबवा" पर आप का इंतिक़ाल हो गया और यहीं आप को दफ़न किया गया।

वालिदा के इंतिक़ाल के बाद आप की परवरिश और सारी देख भाल अब्दुल मुत्तलिब के ज़िम्मे आ गई। यह आप को हमेशा अपने साथ रखते थे। जब आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की उम्र आठ साल की हुई तो दादा अब्दुल मुत्तलिब ने भी इंतिक़ाल फ़रमाया। मरते वक़्त उन्हों ने आप की परवरिश की ज़िम्मेदारी अपने लड़के अबूतालिब के सुपुर्द की जिन्हों ने इस फ़र्ज़ को इंतिहाई ख़ूबी के साथ अंजाम दिया।

अबू तालिब और आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के वालिद अब्दुल्लाह एक ही माँ से थे इस एतबार से भी अबूतालिब को आप से इंतिहाई मुहब्बत थी। वह आप के मुक़ाबिले में अपने बच्चों की भी परवाह नहीं करते थे सोते तो आप को साथ ले कर सोते, बाहर जाते तो साथ ले जाते।

आप की उम्र दस बारह साल की होगी उस वक़्त आप ने अपने हम उम्रों के साथ बकरियाँ भी चराईं। अरब में यह काम बुरा नहीं समझा जाता था। अच्छे अच्छे शरीफ़ घरानों के बच्चे

बकरियाँ चराया करते थे।

अबूतालिब तिजारत करते थे। कुरैश के दस्तूर के मुताबिक़ साल में एक बार शाम जाया करते थे। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की उम्र कोई बारह साल होगी कि अबूतालिब ने शाम के सफ़र का इरादा किया। अगरचे सफ़र की तकालीफ़ के ख़याल से वह आप को साथ नहीं ले जाना चाहते थे। मगर उन्हें आप से इतनी मुहब्बत थी कि जब सफ़र पर जाते वक़्त आप उन से लिपट गये और साथ चलने पर इसरार किया तो वह आप की दिलशकनी को बरदाश्त न कर सके और साथ ले लिया।

तीसरा बाब

नुबुव्वत से पहले

फ़िजार की लड़ाईः– इस्लाम से पहले अरबों में लड़ाईयों का एक न ख़त्म होने वाला सिलसिला जारी था। उन ही लड़ाईयों में से एक निहायत ख़तरनाक और मशहूर लड़ाई फ़िजार की लड़ाई है। यह लड़ाई कुरैश और क़ैस के क़बीलों के दर्मियान हुई चूँकि कुरैश इस लड़ाई में बरसरे हक़ थे इस लिये आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने भी कुरैश की तरफ़ से इस लड़ाई में शिरकत की लेकिन आप ने किसी पर हाथ नहीं उठाया। इस लड़ाई में पहले कैस फिर कुरैश ग़ालिब आये और आख़िरकार सुलह पर लड़ाई का ख़ात्मा हो गया।

हिल्फुल–फुज़ूलः– आये दिन की लड़ाइयों से सैकड़ों घराने बरबाद हो गये लोगों के लिये न दिन को चैन था न रात को आराम फ़िजार की लड़ाई के बाद इस सूरते हाल से तंग आ कर कुछ ख़ैर पसंदों नें इस्लाह की एक तह्रीक शुरू की आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के एक चचा ज़ुबैर इब्ने अब्दुल मुत्तलिब ने यह तजवीज़ पेश की कि अब हालात को सुधारने के लिये कुछ करना चाहिये। चुनाचे कुरैश के ख़ानदान के बड़े–बड़े लोग जमा हुये और यह मुआहिदा हुआ कि हमः

1. मुल्क से बदअम्नी दूर करेंगे।

2. मुसाफ़िरों की हिफ़ाज़त किया करेंगे।

3. ग़रीबों की मदद करते रहेंगे।

4. मज़लूम की हिमायत करेंगे।

5. किसी ज़ालिम को मक्के में न रहने देंगे।

आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम भी इस मुआहिदे में शरीक थे और आप को यह शिरकत बड़ी अज़ीज़ थी। चुनाचे ज़मान-ए-नुबुव्वत में आप ने फ़रमाया "इस मुआहिदे के बदले में अगर मुझे सुर्ख़ ऊँट भी दिये जाते तो मैं न लेता। और आज भी ऐसे मुआहिदे के लिये कोई मुझे बुलाये तो मैं हाज़िर हूँ"।

काबे की तामीरः– काबे की इमारत सिर्फ़ चारदीवारी थी ऊपर छत न थी दीवारें भी बस इतनी ऊँची थीं जितना आदमी का क़द। फिर इमारत नशेब (नीचे) में भी थी बारिश के ज़माने में शहर का पानी बह बह कर उधर आता था जिसे रोकने के लिये बन्द बना दिया गया था। लेकिन वह टूट टूट जाता और उस जगह पानी भर जाता था इस तरह इमारत को नुक़सान पहुँचता था। चुनाचे यह तय किया गया कि इमारत को ढा कर फिर से एक मज़बूत इमारत बनाई जाये तमाम क़ुरैश ने मिल कर तामीर का काम शुरू कर दिया। मुख़तलिफ़ क़बीलों ने इमारत के मुख़तलिफ़ हिस्से आपस में बाँट लिये ताकि कोई इस शर्फ़ से महरूम न रह जाये लेकिन जब हिज्रेअसवद[1] के नसब (लगाना) करने का मौक़ा आया तो बड़ा झगड़ा उठ खड़ा हुआ। हर क़बीले वाले चाहते थे कि यह ख़िदमत हम ही अंजाम दें, नौबत यहाँ तक पहुँची कि तलवारें निकल आईं। चार दिन तक

---

1. एक सियाह पाक पत्थर जो काबे की दीवार में लगा हुआ है।

यह झगड़ा होता रहा। पाँचवें दिन कुरैश के एक बड़े बूढ़े ने यह राय दी कि अच्छा कल सवेरे जो शख़्स सब से पहले आये उसी को पंच मुक़र्रर कर लिया जाये और वह जिस तरह कहे उसी तरह किया जाये। सब ने यह बात मान ली दूसरे दिन अल्लाह की कुदरत कि सब से पहले जिस शख़्स पर लोगों की नज़र पड़ी वह रहमते आलम हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ही थे। चुनाचे आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने यह फ़ैसला फ़रमाया कि जिस जिस ख़ानदान के लोग हिज्रेअसवद को उस के मक़ाम पर नसब करने के मुद्दई (दावा करने वाला) हैं उन का एक एक सरदार चुन लिया जाये फिर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक चादर बिछा कर पत्थर को उस पर रखा और सरदारों से कहा कि चादर के कोने थाम लें और पत्थर को उठाएँ। जब चादर मौक़ा के बराबर आ गई तो आप ने हिज्रेअसवद को उस के मक़ाम पर रख दिया। इस तरह एक ऐसी लड़ाई टल गई जिस के नतीजे में मालूम नहीं कितना ख़ून ख़राबा होता।

अब जो काबे की इमारत बनाई गई उस पर छत भी डाली गई लेकिन चूँकि तामीर का सामान काफ़ी न था इस लिये एक तरफ़ ज़मीन का कुछ हिस्सा बाहर छोड़ कर नई बुनियादें क़ायम की गईं। यही हिस्सा है जिस को आज "हतीम" कहते हैं।

तिजारतः– अरबों का और ख़ुसूसन कुरैश का पुराना मशग़ला तिजारत था आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के चचा अबूतालिब भी ताजिर थे इसी लिये जब आप जवान हुये तो आप ने तिजारत ही को बतौरे रोज़ी का ज़रिया इख़्तियार फ़रमाया। अपने चचा के साथ बचपन में जो सफ़रे तिजारत

आप ने फ़रमाया था उस से काफ़ी तजरबा हासिल हुआ था। फिर जब आप ने कारोबार में हाथ डाला तो आप के अच्छे मुआमलात की शोहरत चारों तरफ़ फैलने लगी। लोगों ने आप को मुआमले का खरा और इन्तिहाई दियानतदार पाया और इस लिये लोग अपना सरमाया (रूपया) आप को शिरकत की ग़र्ज़ से देने लगे। वादे का पास, मुआमले की सफ़ाई, इन्तिहाई रास्तबाज़ी और दियानत इन तमाम चीज़ों ने मिल कर आप को लोगों की नज़रों में इन्तिहाई मुअज़्ज़ज़ बना दिया। और आम तौर पर आप को लोग सादिक़ (सच्चा) और अमीन (अमानतदार) के लक़ब से याद करने लगे। तिजारत की ग़र्ज़ से आप ने शाम, बसरा, और यमन के कई सफ़र किये।

निकाहः– हज़रत ख़दीजा एक मुअज़्ज़ज़ और मालदार ख़ातून थीं यह आप के दूर के रिश्ते की चचेरी बहन भी होती थीं। पहली शादी के बाद यह बेवा हो गईं तो दूसरा निकाह किया लेकिन कुछ अरसे के बाद दूसरे शौहर का भी इंतिक़ाल हो गया और अब फिर यह बेवा थीं यह निहायत शरीफ़ और पाकीज़ा अख़लाक़ की बीबी थीं। लोग उन की शराफ़त की वजह से उन को ताहिरा (पाक) के नाम से पुकारते थे। यह निहायत दौलतमंद भी थीं। यह अपना सामाने तिजारत लोगों को दे कर तिजारत का कारोबार कराया करती थीं।

उस वक़्त आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की उम्र 25 साल की हो चुकी थी। आप कितने ही तिजारती सफ़र कर चुके थे और उन में आप की सच्चाई अमानत और पाकीज़ा अख़लाक़ लोगों के सामने आ चुके थे। चुनाचे आप की शोहरत सुन कर हज़रत ख़दीजा ने यह पैग़ाम भेजा कि आप मेरा

सामाने तिजारत ले कर शाम जाएँ, मैं जो मुआवज़ा दूसरों को देती हूँ वह आप को दूँगी। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कुबूल फ़रमा लिया। और माल ले कर बसरा तशरीफ़ ले गये वापस आने के तक़रीबन तीन महीने बाद हज़रत ख़दीजा ने आप से शादी का पैग़ाम भेजा, आप ने मंज़ूर कर लिया और तारीख़ मुक़र्रर हो गई। तारीख़े मुक़र्ररा पर अबूतालिब, हज़रत हमज़ा और ख़ानदान के दूसरे बुजुर्गों के साथ आप हज़रत ख़दीजा के मकान पर तशरीफ़ ले गये। अबूतालिब ने निकाह का खुतबा पढ़ा और पाँच सौ तलाई दिरहम पर निकाह हो गया।

शादी के वक़्त हज़रत ख़दीजा की उम्र चालीस साल थी और पहले दो शौहरों से दो लड़के और एक लड़की मौजूद थीं।

ग़ैर मामूली वाक़िआतः— दुनिया में जितने मुमताज़ लोग हुये हैं उन की ज़िन्दगी में शुरू से ही ऐसे आसार पाये जाते हैं जिन को देख कर उन के रोशन मुस्तक़बिल के बारे में अंदाज़ा होने लगता है यह तो उन लोगों का हाल है जो आगे चल कर किसी ख़ानदान, क़ौम या मुल्क की ज़िन्दगी के किसी गोशे में कोई इस्लाही काम करते हैं। लेकिन जो मुक़द्दस (पाक) हस्ती क़यामत तक सारे आलम की रहनुमाई के लिये पैदा की गई हो और जिस के दम से इंसानी ज़िन्दगी के हर हर गोशे की इस्लाह होने वाली हो उस की इब्तिदाई ज़िन्दगी में तो ऐसे आसार जो अपनी नौइयत के लिहाज़ से ग़ैर मामूली हों बकसरत मिलना चाहिएँ। यूँ तो इस क़िस्म के आसार के तज़करे सीरत की किताबों में बहुत ज़्यादा मिलते हैं लेकिन जो वाक़िआत तहक़ीक़ (असलियत) की रोशनी में सही रिवायतों में ज़िक्र हुये हैं उन में से कुछ यह हैं।

आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि "जब

मैं अपनी माँ के पेट में था तो उन्हों ने एक ख़्वाब देखा कि उन के बदन से एक नूर निकला जिस से शाम के महल रोशन हो गये"। बहुत सी रिवायतों से पता चलता है कि उस ज़माने में यहूद व नसारा ख़ास तौर से एक आने वाले नबी के मुंतज़िर थे और इस बारे में मुख़तलिफ़ पेशीनगोइयाँ किया करते थे।

आप के बचपन का क़िस्सा है कि ख़ान-ए-काबा में कुछ तामीर हो रही थी और बड़ों के साथ बच्चे भी ईंटें उठा उठा कर लाने में शरीक थे उन बच्चों में आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और आप के चचा हज़रत अब्बास रज़ि० भी थे। हज़रत अब्बास ने कहा कि अपना तहबन्द खोल कर कंधे पर रख लो तो ईंटों की रगड़ से तकलीफ़ न होगी। अरब के माहौल में यह बात कुछ अजीब नहीं थी बच्चे तो क्या वहाँ बड़े भी नंगे होने में शर्म महसूस नहीं करते थे लेकिन जब आप ने ऐसा किया तो बरहंगी (नंगापन) के एहसास से आप फ़ौरन बेहोश हो कर गिर पड़े और आँखें फट कर आसमान को लग गईं जब होश आया तो आप कह रहे थे "मेरा तहबन्द" "मेरा तहबन्द" लोगों ने जल्दी से तहबन्द कमर से बाँध दिया अबूतालिब ने उस के बाद जब आप से कैफ़ियत दरयाफ़्त की तो आप ने फ़रमाया कि मुझे सफ़ेद कपड़े पहने हुये एक मर्द नज़र आया जिस ने मुझ से कहा कि "सतरपोशी कर" ग़ालिबन यह ग़ैब की पहली आवाज़ थी जो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने सुनी।

अरब में दास्तानगोई का आम रिवाज था। लोग रातों को किसी जगह जमा होते और कोई दास्तानगो रात-रात भर दास्तान सुनाता रहता। बचपन में एक बार आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने भी इस जलसे में शरीक होने का इरादा

किया लेकिन इत्तेफ़ाक़ से रास्ते में शादी का कोई जलसा था आप उसे देखने के लिये ठहरे, वहीं नींद आ गई, आँख खुली तो सवेरा हो चुका था। ऐसा ही क़िस्सा एक बार और भी पेश आया और उस बार भी आप इत्तेफ़ाक़ी तौर पर सो गये इस तरह अल्लाह तआला ने आप को इस सोहबत से बचा लिया।

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जिस ज़माने में पैदा हुये, मक्का बुत परस्ती का सब से बड़ा अड्डा बना हुआ था। खुद ख़ान-ए-काबा में 360 बुतों की पूजा होती थी और आप के ख़ानदान वाले यानी कुरैश उस वक़्त ख़ान-ए-काबा के मुतवल्ली या पुजारी थे। लेकिन इस के बावजूद आप ने कभी बुतों के आगे सिर नहीं झुकाया और न वहाँ की मुश्रिकाना रस्मों में कभी कोई हिस्सा लिया। इस के अलावा भी कुरैश जिन ग़लत रस्मों के आदी थे आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कभी उन रस्मों के बारे में अपने ख़ानदान का साथ नहीं दिया।

चौथा बाब

नुबुव्वत की शुरूआत

आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़िन्दगी में अब एक और इंक़िलाब ज़ाहिर होने लगा। आप की तवज्जोह तनहाई में बैठ कर अल्लाह की इबादत करने और अपने माहौल की अख़्लाक़ी और दीनी पस्ती पर ग़ौर करने की तरफ़ बढ़ने लगी। आप बराबर सोचा करते थे कि मेरी क़ौम के लोगों ने किस तरह बुतों को अपना माबूद बना लिया है। वह अख़्लाक़ी एतबार से किस क़द्र गिर चुके हैं। उन की यह बुराइयाँ कैसे दूर हों? उन्हें कैसे बताया जाये कि सच्ची खुदापरस्ती की राह क्या है? इस दुनिया के वाक़ई ख़ालिक़ और मालिक की इबादत किस तरह होनी चाहिये। इसी तरह के सैकड़ों ख़्यालात और सवालात थे जो बराबर आप के ज़हन में घूमा करते थे। और आप उन पर घंटों सोचा करते थे।

ग़ारे हिराः– मक्का मुअज़्ज़मा से तीन मील के फ़ासले पर एक ग़ार था जिसे हिरा कहते हैं। आप अक्सर वहाँ जा कर क़याम फ़रमाते और ग़ौर व फ़िक्र और इबादते इलाही में मसरूफ़ रहते। खाने पीने का सामान साथ ले जाते जब ख़त्म हो जाता तो फिर आ कर ले जाते। या हज़रत ख़दीजा पहुँचा देतीं।

पहली वह्ीः– एक दिन आप ग़ारे हिरा में हस्बे मामूल इबादत

में मसरूफ़ थे। रमज़ान का महीना था कि आप के सामने अल्लाह का भेजा हुआ फ़रिश्ता ज़ाहिर हुआ। यह हज़रत जिबरील अलैहिस्सलाम थे जो फ़रिश्तों में सब से ज़्यादा बुलंद मरतबा हैं और जो हमेशा से ख़ुदा का पयाम उस के रसूलों तक पहुँचाते रहे हैं हज़रत जिबरील अलैहिस्सलाम ने नुमूदार हो कर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से कहा "पढ़" आप ने फ़रमाया "मैं पढ़ा हुआ नहीं हूँ" यह सुन कर हज़रत जिबरील अलैहिस्सलाम ने आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को पकड़ कर इतनी ज़ोर से दबाया कि आप थक गये फिर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को छोड़ दिया और कहा कि "पढ़" आप ने फिर वही जवाब दिया और उन्हों ने फिर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को पकड़ कर दबाया और छोड़ कर कहा "पढ़" आप ने फिर फ़रमाया "मैं पढ़ा हुआ नहीं हूँ" अब हज़रत जिबरील ने तीसरी बार वही किया और छोड़ कर कहा:-

اِقْرَاْء بِاسْمِ رَبِّكَ الَّذِىْ خَلَقَ. خَلَقَ الْاِنْسَانَ مِنْ عَلَقٍ. اِقْرَاْء وَ رَبُّكَ الْاَكْرَمُ الَّذِىْ عَلَّمَ بِالْقَلَمِ عَلَّمَ الْاِنْسَانَ مَالَمْ يَعْلَمْ.

इक़रा बिस्मे रब्बिकल-लज़ी ख़ालक़। ख़ालक़ल-इंसाना मिन अलक़। इक़रा व रब्बुकल-अकरमु-ल-लज़ी अल्लमा बिल-क़लम अल्लमल-इंसाना मालम यअलम।

अपने रब के नाम से पढ़ जिस ने इंसान को जमे हुये ख़ून से पैदा किया। पढ़ और तेरा रब बड़ा बुज़ुर्ग है जिस ने क़लम के ज़रिए सिखाया और इंसान को वह सब कुछ सिखाया जो वह नहीं जानता था।

यही सब से पहली वह्री थी। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम इस वाक़िया के बाद घर तशरीफ़ लाये उस वक़्त आप

के क़ल्बे मुबारक (मुबारक दिल) पर एक तरह का लरज़ा[1] तारी था आप ने हज़रत ख़दीजा से फ़रमाया "मुझे कम्बल उढ़ाओ, मुझे कम्बल उढ़ाओ" आप को कम्बल उढ़ा दिया गया। जब आप को कुछ सुकून हुआ तो आप ने हज़रत ख़ादीजा से सारा वाक़िया बयान किया और फ़रमाया "मुझे अपनी जान का ख़तरा है"। हज़रत ख़दीजा ने कहा "नहीं हरगिज़ नहीं। आप की जान को ख़ातरा नहीं। ख़ुदा आप को रूसवा न करेगा। आप क़राबतदारों का हक़ अदा करते हैं। लोगों के बोझ को आप ख़ुद उठाते हैं, फ़क़ीरों और मिस्कीनों की मदद करते हैं, मुसाफ़िरों की मेहमाननवाज़ी करते हैं, इंसाफ़ की ख़ातिर आप लोगों की मुसीबतों में काम आते हैं" इस के बाद हज़रत ख़दीजा रज़ि॰ आप को ले कर वरक़ा बिन नौफ़ल के पास गईं। यह एक बूढ़े दीनदार ईसाई थे। तौरेत पढ़ते थे। हज़रत ख़दीजा ने सारा वाक़िया उन्हें जा कर सुनाया वरक़ा सुन कर बोले "यह वही नामूस (छुपे भेदों का जानने वाला फ़रिश्ता) है ज़ो मूसा पर उतारा गया। ऐ काश मैं उस वक़्त ज़िन्दा होता जब तुम्हारी क़ौम तुम्हें निकाल देगी" आप ने पूछा क्या मेरी क़ौम मुझे निकाल देगी। उन्हों ने कहा हाँ और यह भी कहा कि तुम जो कुछ भी ले कर आये हो उस को लेकर जो कोई भी आया उस से उस के लोगों ने दुश्मनी ही की। अगर मैं उस वक़्त तक ज़िन्दा रहा तो तुम्हारी मदद करूँगा। इस के थोड़े ही दिनों बाद वरक़ा का

---

1. यह लरज़ा उस ज़िम्मेदारी के एहसास की वजह से था जो अचानक आप पर डाल दी गई थी और आप ने जो कुछ फ़रमाया और हज़रत ख़ादीजा रज़ि॰ ने जिस तरह तसल्ली दी वह एक ख़ालिस फ़ितरी कैफ़ियत के सिवा और कुछ नहीं है।

इंतिक़ाल हो गया।

इस के बाद हज़रत जिबरील अलैहिस्सलाम की आमद रुकी रही और आप बराबर ग़ारे हिरा में जाते रहे यह अरसा कम से कम छः महीने का रहा। इस बीच वक़्फ़ा से यह फ़ायदा हुआ कि आप के क़ल्ब पर जो फ़ौरी असरात बतक़ाज़ा-ए बशरियत (इंसान होने की वजह से) पैदा हुये थे वह दूर हो गये। और आप का क़ल्बे मुबारक अब फिर नुज़ुले वह्यी का मुश्ताक़ हो गया। यहाँ तक कि जब यह अरसा कुछ लम्बा हुआ तो आप के सुकून और इतमीनान के लिये कभी-कभी हज़रत जिबरील अलैहिस्सलाम लशरीफ़ लाते रहे और आप को इतमीनान दिलाते रहे कि यक़ीनन आप का इंतिख़ाब रसूल की हैसियत से हो चुका है, आप इन्तिज़ार और इतमीनान फ़रमाएँ फिर कुछ दिनों बाद हज़रत जिबरील अलैहिस्सलाम लगातार आने लगे।

पाँचवाँ बाब

दावत की इब्तिदा

ग़ारे हिरा में पहली वह्यी के नाज़िल होने के बाद कुछ दिनों तक कोई वह्यी नहीं आई। उस के बाद सूरह मुद्दस्सिर की इब्तिदाई आयात नाज़िल हुईः-

يَاأَيُّهَا الْمُدَّثِّرُ۔ قُمْ فَأَنْذِرْ۔ وَرَبَّكَ فَكَبِّرْ۔ وَثِيَابَكَ فَطَهِّرْ۔ وَالرُّجْزَ فَاهْجُرْ۔ وَلَا تَمْنُنْ تَسْتَكْثِرُ۔ وَلِرَبِّكَ فَاصْبِرْ۔ (مُدَّثِّرْ)

या अय्युहल-मुद्दस्सिर। कुम फ़-अंज़िर। व रब्बका फ़-कब्बिर। व-सियाबका फ़तहि्हर। वर्रुज्ज़ा फ़-हजुर। वला तमनुन तस्तकसिर। वले-रब्बिका फ़-स्बिर।

ऐ कमली ओढ़ने वाले! उठ, (और लोगों को गुमराही के अंजाम से) डरा और अपने रब की बुज़ुर्गी और बड़ाई बयान कर और लिबास को पाक कर और बुतों से अलग रह और ज़्यादा हासिल करने की निय्यत से किसी के साथ एहसान मत कर और अपने रब के मुआमले में (अज़िय्यत और मुसीबत पर) सब्र इख़्तियार कर।

नुबुव्वत के काम पर मामूर होने की यह इब्तिदा थी अब बाज़ाबता (बाक़ायदा) हुक्म मिल गया कि उठो और भटकी हुई इंसानियत को उस की फ़लाह और कामरानी का रास्ता दिखाओ और लोगों को ख़बरदार कर दो कि कामियाबी की राह सिर्फ़

एक ही है यानी ख़ुदा-ए-वाहिद की बन्दगी। जो कोई इस राह को इख़्तियार करेगा वही कामियाब होगा। और जो कोई इस के अलावा कोई और राह इख़्तियार करे उसे आख़िरत के बुरे अंजाम से डराओ। इंसानी ज़िन्दगी की बुनियाद सिर्फ़ एक ख़ुदा की बन्दगी और उस की अज़्मत व किब्रियाई (बड़ाई) के एतराफ़ पर होना चाहिये। इसी सूरत में वह हर क़िस्म की ज़ाहिरी नापाकियों और अंदरूनी गंदगियों से पाक रह सकती है। ख़ुदा के अलावा दूसरों की बन्दगी, यही वह बिस की गाँठ है जो इंसान की तबाही का सबब बनती है। इंसानों को आपस में हुस्ने सुलूक का बरताव करना चाहिये। ऐसा हुस्ने सुलूक जिस की बुनियाद किसी ग़र्ज़ और लालच पर न हो।

दावत के दो दौरः- यहाँ से अब आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़िन्दगी का दावती दौर शुरू होता है। इस दौर को हम दो बड़े-बड़े हिस्सों में तक़सीम कर सकते हैं एक वह हिस्सा जो हिजरत से पहले मक्के में बसर हुआ जिसे मक्की दौर कहते हैं। और दूसरा वह हिस्सा जो हिजरत के बाद मदीने में गुज़रा और जिसे मदनी दौर कहते हैं। पहला दौर 13 साल और दूसरा दस साल के क़रीब रहा।

मक्की ज़िन्दगीः- आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की दावत का वह दौर जो मक्के में गुज़रा, अपने नताइज के एतबार से निहायत दरजा अहम है। दरअसल यही वह दौर है जिस में इस्लाम की खेती की तुख़्मरेज़ी (बीज बोना) हुई। यही वह दौर है जिस में इंसानियत के ऐसे ऐसे आला नमूने तयार हुये जिन्हों ने इस्लामी तहरीक को सारे आलम में रोशनास (वाक़िफ़) कराया।

तारीख़ और सियर की जो किताबें इस वक़्त मौजूद हैं उन में मक्की दौर की तफ़सीलात बहुत ही कम मिलती हैं। इस दौर की अहमियत और उस के सबक़आमोज़ हालात को जानने के लिये क़ुरआन पाक के उस हिस्से का बग़ौर मुताला ज़रूरी है जो मक्के में नाज़िल हुआ। दरअसल मक्की दौर की सही अहमियत का अंदाज़ा उसी वक़्त हो सकता है जब मक्की सूरतों के अंदाज़े दावत, उस वक़्त के हालात और वाक़िआत की तफ़सील, तौहीद व आख़िरत के दलाइल, किरदार और सीरत की तामीर के लिये हिदायात और हक़ व बातिल की इन्तिहाई सब्र आज़मा कशमकश के दौरान तहरीक को आगे बढ़ाने और तहरीक के अलमबरदारों को उन के मक़ाम पर क़ायम रखने की जद्दोजहद की तफ़सीलात सामने आईं। इन तफ़सीलात का इल्म क़ुरआन पाक के बराहे रास्त और बग़ौर मुताला के बग़ैर मुम्किन नहीं। अलबत्ता यहाँ हम कुछ मुख़्तसर तौर पर उस दौर की तफ़सीलात बयान करेंगे।

मक्की ज़िन्दगी के चार दौर:- आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की हयाते तय्यबा का वह हिस्सा जो हिजरत से पहले मक्के में बसर हुआ और जिस में इस्लामी तहरीक, दावत के मुख़्तलिफ़ मरहलों और कशमकशों से हो कर गुज़री, अपनी बाज़ ख़ुसूसियात के एतबार से चार मुख़्तलिफ़ दौरों में तक़सीम किया जा सकता है।

पहला दौर! नुबुव्वत के बाद से ले कर तक़रीबन तीन साल तक जिस में आप दावत व तबलीग़ का फ़र्ज़ पोशीदा(छुप कर) तौर पर अंजाम देते रहे।

दूसारा दौर! नुबुव्वत के एलान से ले कर तक़रीबन दो

साल तक जिस में पहले तो कुछ मुख़ालिफ़त हुई, फिर हंसी उड़ाई गई, मुख़्तलिफ़ इल्ज़ामात तराशे गये, बुरा भला कहा गया और झूटे प्रोपैगंडों और मुख़ालिफ़ाना बात चीत से दावते इस्लामी को दबाने की कोशिश की गई।

तीसरा दौर! जब इस पर भी तहरीके इस्लामी बराबर बढ़ती गई तो फिर ज़ुलम व सितम का दौर शुरू हुआ और मुसलमानों पर ज़्यादतियाँ होने लगीं। यह दौर तक़रीबन पाँच-छः साल तक रहा और उस में मुसलमानों को तरह तरह की तकलीफ़ों से दोचार होना पड़ा।

चौथा दौर! अबूतालिब और हज़रत ख़दीजा की वफ़ात के बाद से ले कर हिजरत तक तक़रीबन तीन साल यह दौर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और आप के साथियों के लिये इन्तिहाई सख़्ती और मुसीबत का ज़माना था।

पहला दौर

ख़ामोश दावत

कारे नुबुव्वत पर मामूर किये जाने के बाद सब से पहला मरहला यह था कि सिर्फ़ एक ख़ुदा की बन्दगी इख़्तियार करने और बाक़ी सैकड़ों ख़ुदाओं का इंकार कर देने की दावत सब से पहले किसे दी जाये। क़ौम और मुल्क के लोगों की जो हालत थी उस का एक हल्का सा नक़्शा हम इस से पहले पेश कर चुके हैं। ऐसे लोगों के सामने वह बात पेश करना जो उन के मिज़ाज, पसन्द और आदतों के बिल्कुल ख़िलाफ़ हो वाक़ई बड़ा सख़्त मरहला था। चुनाचे आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम

ने सब से पहले उन लोगों को मुनतख़ब फ़रमाया जिन से अब तक बहुत करीबी तअल्लुकात रहे थे और जो आप की आदात और अख़लाक़ का बराहे रास्त तजरबा रखते थे। आप की सच्चाई और दियानत के बारे में क़तई फ़ैसला कर चुके थे। और उन के लिये यह आसानी से मुम्किन न था, कि वह आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की फ़रमाई हुई किसी बात का इन्कार कर सकें। उन लोगों मे सब से ज़्यादा राज़दार हज़रत ख़दीजा थीं फिर उस के बाद हज़रत अली, हज़रत ज़ैद और हज़रत अबूबक्र रज़िअल्लाहु अनहुम थे। हज़रत अली आप के चचाज़ाद भाई हज़रत ज़ैद गुलाम और हज़रत अबूबक्र दोस्त थे। यह लोग बरसों से आप की सोहबत से फ़ायदा उठा रहे थे। चुनाचे सब से पहले आप ने हज़रत ख़दीजा रज़ि० को यह पैग़ाम सुनाया। और उस के बाद दूसरे लोगों तक बात पहुंचाई, यह सब के सब गोया कि पहले से मोमिन थे। सुना और तसदीक़ की। यही लोग सब से पहले साहिबे ईमान (ईमान लाने वाले) थे। फिर इस के बाद हज़रत अबूबक्र की तरग़ीब और हिदायत से हज़रत उसमान रज़ि०, हज़रत ज़ुबैर रज़ि०, हज़रत अब्दुर्रहमान रज़ि० बिन औफ़, हज़रत सअद बिन अबी वक़्क़ास रज़ि० और हज़रत तलहा ईमान लाये। इस तरह इस्लाम की दावत चुपके चुपके फैलती रही और मुसलमानों की तादाद में इज़ाफ़ा होता रहा।

कुरआन की तासीरः– इस दौर में जो कुरआन नाज़िल हो रहा था वह दावत के इब्तिदाई मरहले की मुनासिबत से छोटे छोटे बोलों पर मुशतमिल होता था। जिन की ज़ुबान निहायत ही उम्दा, शीरीं और इन्तिहाई पुरअसर थी। फिर उन में ऐसा

अदबी रंग था कि सुनने वाले पर फ़ौरन ही असर पड़ता था और यह बोल दिलों में तीर व नशतर की तरह उतर जाते थे। जो सुनता था वह असर कुबूल करता था और उस का जी चाहता था कि वह इन बोलों को बार बार दुहराए।

एतक़ादात की इसलाहः– कुरआन पाक की इन सूरतों में तौहीद और आख़िरत की हकीक़तें बयान की जाती थीं। और उन के बारे में ऐसे सुबूत पेश किये जाते थे जो दिलों में उतर जाएँ। इस के लिये सुनने वालों के क़रीबी माहौल से ही दलाइल और शवाहिद पेश किये जाते थे। और यह बातें ऐसे अंदाज़ में पेश की जाती थीं जिन से मुख़ातब (बात करने वाला) अच्छी तरह मानूस थे। उन ही की तारीख़ के वाक़िआत और उन्हीं की रिवायात की बुनियादों पर असल बात को समझाने की कोशिश की जाती थी। एतक़ादात की उन गुमराहियों का ज़िक्र किया जाता था जिन में यह लोग उस वक़्त फंसे हुये थे। और उन अख़लाक़ी और इजतमाई ख़राबियों का तज़करा होता था जिन से वह लोग खुद वाकिफ़ थे। यही वजह थी कि जो कोई इस कलाम को सुनता, मुतअस्सिर हुये बग़ैर न रहता था। अल्लाह के नबी स० ने तनेतनहा इस दावत को शुरू किया। लेकिन यही कुरआन पाक की इब्तिदाई आयात का नुज़ूल था जो इस मैदान में सब से ज़्यादा कारगर हथियार का काम दे रहा था और दावत आहिस्ता-आहिस्ता ख़ामोशी से फैल रही थी।

इस दौर में दावत व तबलीग़ के लिये तौहीद व आख़िरत के दलाइल के साथ साथ आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को बराबर इस काम की तालीम भी दी जा रही थी कि वह खुद अपने आप को इस अज़ीमु-श्शान काम के लिये किस तरह

तयार करें। और इस अहम काम को अंजाम देने के लिये क्या क्या सूरतें इख़्तियार करें।

छुप कर नमाज़ें:- अभी जो कुछ हो रहा था पोशीदा तौर पर हो रहा था। निहायत एहतियात की जाती थी कि भरोसे के क़ाबिल लोगों के अलावा बात कहीं बाहर न जाये जब नमाज़ का वक़्त आता तो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम किसी पहाड़ की घाटी में चले जाते और वहाँ नमाज़ अदा करते। एक बार आप हज़रत अली रज़ि० के साथ किसी दर्रे (घाटी) में नमाज़ पढ़ रहे थे। इत्तेफ़ाक़ से आप के चचा अबूतालिब आ निकले और इबादत के इस नये तरीक़े को देर तक तअज्जुब के साथ देखते रहे। नमाज़ के बाद पूछा "यह कौन सा दीन है"? आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया "हमारे दादा इब्राहीम (अलै०) का दीन है"। अबूतालिब बोले ख़ैर मैं तो इसे इख़्तियार नहीं कर सकता। लेकिन तुम को इजाज़त है। कोई शख़्स तुम्हारी मुज़ाहमत (रोक) न कर सकेगा।

इस दौर के मोमिनीन की खुसूसियात:- इस इब्तिदाई दौर की खुसूसियत यह है कि उस वक़्त इस्लाम कुबूल करना और फिर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का साथ देना गोया जान पर खेल जाना था। इस दौर में जिन लोगों ने आगे बढ़ कर इस दावत को कुबूल कर लिया इन में यक़ीनन कुछ ऐसी खुसूसियात थीं जिन की बुनियाद पर वह इस मैदान में आगे बढ़ सके। उन की चन्द मुशतरक (शरीक) खुसूसियात यह हैं कि यह लोग पहले से मुश्रिकाना रुसूम व इबादात से बेज़ार थे और हक़ की तलाश में थे। तबीयत के एतबार से यह लोग नेक और पाकीज़ा अख़लाक़ वाले थे।

तक़रीबन तीन साल तक दावत व तबलीग़ का काम पोशीदा तौर पर होता रहा। लेकिन आख़िर कब तक? जिस आफ़ताब को अपने नूर से सारे आलम को रोशन करना था उसे तो बहरहाल सामने आ कर निगाहों को ख़ीरा (चकाचोंध) करना ही था। चुनाचे अब दावत अपने दूसरे मरहले में दाख़िल हुई।

दूसरा दौर

एलाने दावत

अब साफ़ हुक्म मिल गया की दावत ज़ाहिरी तौर पर दी जाये। चुनाचे एक दिन आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम कोहे सफ़ा पर तशरीफ़ ले गये और वहाँ खड़े हो कर पुकारा "या सबाहा!" अरब मे दसतूर था कि अगर कोई ख़तरा पेश आता तो कोई शख़्स किसी ऊँची जगह चढ़ कर यह अलफ़ाज़ पुकारता था। और लोग यह पुकार सुन कर जमा हो जाते थे। चुनाचे जब कोहे सफ़ा से आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने यह निदा (आवाज़) बुलंद फ़रमाई और कुरैश वालों को पुकारा तो बहुत से लोग जमा हो गये उन लोगों में आप का चचा अबू लहब भी था।

जब लोग जमा हो गये तो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इरशाद फ़रमाया "लोगो! अगर मैं तुम से यह कहूँ कि इस पहाड़ के पीछे एक बड़ा लशकर जमा है और तुम पर हमला करने के लिये तयार है तो क्या तुम मेरी बात को सच मानोंगे"? लोगों ने कहा "बेशक सच मानेंगे तुम ने अब तक

कोई बात झूट नहीं कही है और हम तुम्हें सादिक़ और अमीन जानते हैं" तब आप ने फ़रमाया "लोगो! मैं तुम्हें एक ख़ुदा की बन्दगी की तरफ़ बुलाता हूँ। और बुतों की पूजा से बचाना चाहता हूँ लेकिन अगर तुम मेरी बात नहीं मानोंगे तो मैं तुम्हें एक बहुत सख़्त और दर्दनाक अज़ाब से डराता हूँ।

जब कुरैश ने यह बात सुनी तो सख़्त नाराज़ हुये और अबूलहब ने निहायत ग़ज़बनाक हो कर कहा "क्या बस तूने इसी लिये हमें पुकारा था"?

इस्लामी दावत की यह आम पुकार थी। अब ख़ुदा के रसूल ने साफ़-साफ़ खुल कर एलान कर दिया कि उसे क्या कहने पर मामूर (मुक़र्रर) किया गया है और वह कौन सी शाहराह (बड़ा रास्ता) है जिस की तरफ़ वह हर एक को बुला रहा है। ज़ुबाने नुबुव्वत से अब इस बात का एलान हो गया कि दरअसल इस बेपायाँ ममूलुकत (हुकूमत) का ख़ालिक़ और मालिक सिर्फ़ अल्लाह है। इंसान को भी उसी ने पैदा किया है और वही उस का मालिक भी है। इंसान का मक़ाम इस के सिवा और कुछ नहीं कि वह अल्लाह का बन्दा और ग़ुलाम है उसी की ताबेदारी और फ़रमाबरदारी करना उस का फ़र्ज़ है। उस को छोड़ कर दूसरों के आगे सिर झुकाना या उस के साथ दूसरों को शरीक ठहराना इंसान के इस मंसब (दर्जा) के ख़िलाफ़ है जो उस को उस के मालिक की तरफ़ से अता हुआ है हक़ीक़त में सिर्फ़ एक अल्लाह ही इंसान का और तमाम जहान का ख़ालिक़, मअबूद और हाकिम है। उस की सलतनत में इंसान न ख़ुदमुख़्तार है और न किसी दूसरे का बन्दा। इंसान के लिये अल्लाह के सिवा कोई दूसरा इताअत, बन्दगी और

परस्तिश (इबादत) का मुसतहिक़ नहीं। दुनिया की यह ज़िन्दगी जिस में अल्लाह तआला ने इंसान को कुछ इख़्तियारात दे कर भेजा है। दरअसल उस के लिये एक इम्तिहान की मुद्दत है जिस के बाद उसे ज़रूर अल्लाह के पास जाना होगा और वह इंसान के तमाम कामों की जाँच कर के फ़ैसला करेगा कि इंसानों में से कौन इस इम्तिहान में कामियाब रहा और कौन नाकाम।

यह एलान कोई मामूली एलान न था इस ने कुरैश और दूसरे लोगों में एक आग लगा दी और चारों तरफ़ इस दावत के बारे में चेमीगोइयाँ होने लगीं। चन्द रोज़ के बाद आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हज़रत अली से फ़रमाया कि दावत का सामान करो। इस दावत में तमाम ख़ानदाने अब्दुल मुत्तलिब को बुलाया गया। इस में हमज़ा, अबूतालिब, अब्बास सब शरीक थे। खाने के बाद आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने खड़े हो कर फ़रमाया "मैं वह चीज़ ले कर आया हूँ जो दीन और दुनिया दोनों के लिये काफ़ी है इस बारेगिराँ (बोझ) को उठाने में कौन मेरा साथ देगा"? यह बड़ा सख़्त मरहला था इस बारेगिराँ के उठाने में साथ देने का मतलब यह था कि न सिर्फ़ ख़ानदान, क़बीले और शहर के लोगों की बल्कि सारे अरब की मुख़ालिफ़त का मुक़ाबिला करने के लिये आदमी तयार हो जाये और सिर्फ़ इस लिये तयार हो जाये कि इस के बदले में आख़िरत की ज़िन्दगी कामियाब होगी। और बन्दा अपने मालिक के सामने सुरख़ुरूई हासिल करेगा। इस के सिवा कोई दूसरा फ़ायदा दूर दूर तक नज़र न आता था। चुनाचे सारी मजलिस पर सन्नाटा छा गया। उठे तो कमसिन हज़रत अली रज़ि० उठे। और फ़रमाया "अगरचे मेरी आँखें आई हुई हैं (इस वक़्त आप

की आँखें दुख रही थीं) गो मेरी टाँगें पतली हैं और मैं सब से कम उम्र भी हूँ। फिर भी मैं आप का साथ दूँगा"। कुरैश के लिये यह मंज़र भी अजीब था कि एक 13 साल का नई उम्र का बिला कुछ सोचे समझे कितना बड़ा फ़ैसला कर रहा है।

दावत की मुख़ालिफ़तः- उस वक़्त तक इस्लामी जमाअत में 40 से कुछ ज़्यादा आदमी दाख़िल हो चुके थे। अब एक दिन आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हरमे काबा में जा कर तौहीद का एलान फ़रमाया। मुश्रिकीन के नज़दीक यह हरमे काबा की सब से बड़ी तौहीन थी। इस एलान के करते ही एक हंगामा उठ खड़ा हुआ। हर तरफ़ से लोग आप पर टूट पड़े। हज़रत हारिस बिन अबी हाला आप की मदद के लिये दौड़े। लेकिन उन पर चारों तरफ़ से इतनी तलवारें पड़ीं कि वह शहीद हो गये। इस्लाम की राह में यह पहली शहादत थी। अल्लाह के फ़ज़्ल से आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम महफ़ूज़ रहे और किसी न किसी तरह हंगामा ख़त्म हो गया।

मुख़ालिफ़त के असबाबः- इस्लामी दावत का यह एलान सब से ज़्यादा कुरैश के लिये परेशानी का सबब था और वही इस दावत के सब से सख़्त मुख़ालिफ़ भी थे। उस वक़्त मक्के की जो इज़्ज़त थी वह काबा की वजह से थी। कुरैश का ख़ानदान काबा का मुजाविर (पड़ोसी) और मुतवल्ली (इन्तिज़ाम करने वाला) था। और इस तरह गोया कुरैश की एक क़िस्म की मज़हबी हुकूमत तक़रीबन सारे अरब पर क़ायम थी। मज़हब के मुआमले में लोग उन की तरफ़ देखते थे। और अकसर उन की रहनुमाई पर भरोसा करते थे। इस्लामी दावत की सब से पहली और सब से सख़्त चोट उसी मज़हब पर पड़ती थी जिस की

नुमाइंदगी कुरैश कर रहे थे। और ज़ाहिर है कि बाप दादा के मज़हब के साथ जाहिल कौमों को जैसी कुछ अंधी अक़ीदत होती है, इस के मुक़ाबिले में वह किसी मुनासिब बात को सुनने के लिये तयार ही नहीं होते यही वजह है कि लोग इस नई दावत को सुन कर आग बगूला हो जाते थे। फिर कुरैश के बड़े लोगों को यह भी साफ़ नज़र आ रहा था कि इस दावत के फूलने फलने का मतलब इस के सिवा कुछ नहीं है कि उन का सारा इक़्तिदार (हुकूमत) मिट्टी में मिल जायेगा। और उन्हें जो मज़हबी क़यादत का मक़ाम हासिल है वह आप से आप ख़त्म हो जायेगा। इस लिहाज़ से जो शख़्स जितनी बड़ी गद्दी का मालिक था, उतना ही ज़्यादा वह इस्लामी तहरीक की मुख़ालिफ़त में सरगर्म था। फिर कुरैश में बहुत सी बदअख़लाक़ियाँ फैली हुई थीं। बड़े-बड़े लोग उन बुराइयों में मुबतला थे। और बावजूद इस सब के उन का मज़हबी मक़ाम उन को लोगों की नज़रों में गिरने नहीं देता था क्यों कि उन के तक़द्दुस (पाकी) और मक़ाम की वजह से लोग उन की कमज़ोरियों पर नज़र ही नहीं डालते थे।

आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम एक तरफ़ तो बुतपरस्ती की बुराइयाँ बयान फ़रमाते थे। और उस के मुक़ाबिले में ख़ालिस तौहीद की दावत देते थे। आख़िरत की जवाबदही का एहसास और ख़ुदा के हुज़ूर हाज़िर होने का ख़ौफ़ दिलाते थे। दूसरी तरफ़ वह इंसानी बुनियादी अख़लाक़ियात की एक एक कमज़ोरी को खुल कर बयान फ़रमाते थे। उन के अंजाम से डराते थे। और उन सब से बचने की हिदायत करते थे। इस क़िस्म की बातें इन "बड़े" लोगों को सख़्त परेशानी में मुबतला कर देती थीं, क्यों कि बहरहाल वह बातें ऐसी तो थीं नहीं,

जिन्हें वह सही कह सकते लेकिन चूँकि खुद उन के दामन इन बुराईयों से पाक नहीं थे। और न वह उन बुराईयों को छोड़ने की हिम्मत अपने अन्दर पाते थे। इस लिये जब अवाम के सामने यह बातें आतीं तो उन्हें महसूस होता कि अवाम की नज़रों में उन का मक़ाम गिर रहा है। और अगर सामने नहीं तो पीछे ज़रूर उन के बारे में नुकताचीनियाँ हो रही हैं। यह बात उन की झुनझुलाहट को बढ़ाने के लिये बहुत काफ़ी थी। कुरआन मजीद में बराबर ऐसे बदकारों और बदअख़्लाक़ों के लिये आयतें नाज़िल हो रही थीं और उन के इन करतूतों के लिये सख़्त से सख़्त अज़ाब की धम्कियाँ दी जा रही थीं। इन आयतों में अगरचे बात बिल्कुल आम अंदाज़ में कही जा रही थी लेकिन जब यह आयतें लोगों में फैलतीं तो हर शख़्स महसूस कर लेता कि पानी कहाँ मर रहा है।

तहरीके इस्लामी की मुख़ालिफ़त और दुश्मनी के लिये यह तमाम असबाब इतने काफ़ी थे कि हो सकता था कि यह अहमियत वाले लोग इस्लामी जमाअत के थोड़े से लोगों के ख़िलाफ़ तलवार ले कर उठ खड़े होते और इस "ख़तरे" का यकबारगी (एक दम) सद्दे बाब (इलाज) कर देते। लेकिन मशिय्यते इलाही में तो यह फ़ैसला हो चुका था कि इन्हीं मुट्ठी भर इंसानों के हाथों सारे आलम को अल्लाह की वह रहमत पहुंचना है जो रहती दुनिया तक इंसानियत की निजात का वाहिद (अकेला) ज़रिया है। इस लिये उस वक़्त कुछ ऐसे असबाब भी फ़राहम हो गये थे जिन की वजह से कुरैश यह अक़दाम नहीं कर सकते थे।

मुख़ालिफ़ों की मजबूरियाँ:– क़रीब ही ज़माने में कुरैश

ख़ानाजंगियों के वजह से तबाह हो चुके थे जंगे फुज्जार के बाद लड़ाई से इतने आजिज़ आ गये थे कि लड़ाई के नाम से डरते थे। फिर यह थोड़े से मुसलमान जो मुख़तलिफ़ क़बीलों से छट कर इस्लामी जमाअत में शामिल हो गये थे उन के क़त्ल का मतलब यह था कि अरब के मुख़तलिफ़ क़बीलों से जंग छिड़ जाये क्यों कि उस वक़्त किसी एक शख़्स का क़त्ल दरअसल उस क़बीले के ख़िलाफ़ एलान-ए-जंग था जिस से उस शख़्स का तअल्लुक़ होता। इस तरह अंदेशा था कि कहीं सारा मक्का लड़ाई का मैदान न बन जाये। चुनाचे इस मरहला में तहरीक को दबाने के लिये कुछ दूसरी तदबीरें इख़्तियार की गईं।

दावत और दाई (दावत देने वाला) की हंसी उड़ाई गई, ग़लत इलज़ामात लगाये गये, रास्ते गली में गालियों और फबतियों से तवाज़ुअ (ख़ातिर) की गई। नये नये अंदाज़ से ग़लत और झूटी बातें मंसूब कर के प्रोपैगंडा किया गया, मजनून और पागल का ख़िताब दिया गया, शायर और जादूगर कह कर मशहूर किया गया, लोगों को रोका गया कि कोई आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की बात न सुनने पाये।

हालात का मुक़ाबिलाः– इस दौर में कुरआन की जो सूरतें नाज़िल हुईं उन में उन हालात का मुक़ाबिला करने के लिये बराबर हिदायात दी जा रही थीं और मुख़ालिफ़ीन के एतराज़ात के माकूल (सही) और मुनासिब जवाबात भी दिये जा रहे थे मिसाल के तौर पर सूरह अल-क़लम में आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तसकीने दिल (दिल की तसल्ली) के लिये फ़रमाया गया। आप पर तो अल्लाह का बड़ा करम है, आप मजनून नहीं, आप पर तो उस की बेइन्तिहा इनायात हैं। जल्द

ही मालूम हो जायेगा कि किस की अक़्ल ठिकाने नहीं है आप के रब को ख़ूब मालूम है कि कौन सीधे रास्ते पर है और कौन भटका हुआ है। आप अपना काम किये जाइये, जो लोग इस दावत को झुटला रह हैं उन का कहा हरगिज़ न मानिये वह तो यह चाहते हैं कि अगर आप अपनी तहरीक और दावत के काम को ज़रा ढीला कर दें तो वह भी ढीले पड़ जाएँ। लेकिन आप का यह काम नहीं कि आप उन लोगों की ख़्वाहिशात की पैरवी (मानना) करें जो कुछ आप पेश कर रहे हैं उस को न मानने वालों का मुआमला आप मेरे ऊपर छोड़ दें उन्हें जल्द ही मालूम हो जायेगा कि उन्हें जो ढील दी जा रही है उस का क्या मतलब है। आप उन से कह दीजिये कि क्या मैं तुम से कुछ तलब करता हूँ या अपने फ़ायदे के लिये तुम से कुछ चाहता हूँ या मेरी बात के ख़िलाफ़ तुम्हारे पास कोई माक़ूल सुबूत है। ज़ाहिर है ऐसी कोई बात नहीं है लिहाज़ा आप निहायत मुसतक़िल मिज़ाजी के साथ अपने काम पर जमे रहिये। आप और आप के साथी इन हालात का मुक़ाबिला निहायत सब्र के साथ करते रहें। हालात अपने वक़्त पर बदल जाएँगे।

यह तक़रीर एक नमूना है। इस क़िस्म की तक़ारीर बराबर नाज़िल होती रहीं साफ़-साफ़ बता दिया गया कि दाइ-ए-हक़ न मजनून है, न काहिन है, न शायर है और न जादूगर। काहिनों, शायरों और जादूगरों की ख़ुसूसियात सामने रखो और देखो की दाइ-ए-हक़ में उन में से कौन सी बात पाई जाती है। वह कलाम जो वह पेश कर रहा है वह अख़लाक़ जिस का मुज़ाहिरा उस के हर काम से हो रहा है और वह ज़िन्दगी जो वह तुम्हारे दर्मियान बसर कर रहा है भला उन बातों को शायरों काहिनों

और जादूगरों की बातों से क्या निस्बत।

दावत की तरफ़ लोगों की तवज्जोहः- मक्का वालों ने इस क़िस्म की ग़लत बातों को मशहूर कर के लोगों को रोकने की जिनी कोशिश की उतना ही लोगों में यह चाहत बढ़ी की आख़िर देखें तो यह साहब क्या कहते हैं? चुनाचे जो लोग अरब के दूसरे इलाक़ों से मक्के में हज के मौक़ा पर या दूसरे औक़ात में आते रहते थे उन में से कितने ही छुप छुप कर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हो जाया करते थे यहाँ आ कर जब आप के अख़लाक़े करीमाना (बड़ाई) को देखते और आयाते इलाही को सुनते तो दिल की दुनिया ही बदल जाती। और अब वह अपने अपने इलाक़ों में जा कर इस्लाम की दावत फैलाने लगते।

जब यह चर्चा दूसरे शहरों में फैला तो दूर दराज़ इलाक़ों से लोग सिर्फ़ आप के बारे में हाल पूछने के लिये आने लगे इस क़िस्म के वाक़िआत में हज़रत अबूज़र रज़ि० का क़िस्सा एक अच्छी मिसाल है। ग़िफ़ार का क़बीला उस रास्ते पर आबाद था जिस से हो कर कुरैश शाम के मुल्क को तिजारत के लिये जाया करते थे जब वहाँ यह बात पहुँची तो हज़रत अबूज़र रज़ि° के दिल में भी मुलाक़ात का शौक़ पैदा हुआ उन्हों ने पहले अपने भाई अनीस को मक्के भेजा कि जाओ देखो यह शख़्स जो नुबुव्वत का दावा करता है उस की तालीम क्या है? अनीस मक्के में आये और हुज़ूर के बारे में हाल पूछ कर के जब वापस हुये तो अपने भाई से जा कर बयान किया कि वह शख़्स निहायत ही आला अख़लाक़ का इंसान है। अच्छे अख़लाक़ की तालीम देता है और एक ख़ुदा की बन्दगी की तरफ़ लोगों को

बुलाता है वह जो कलाम पेश करता है वह शायरी से अलग है"।

हज़रत अबूज़र रज़ि० को इस मुख़तसर बात से तसकीन न हुई, खुद सफ़र के लिये तयार हो गये। मक्के में पहुंचे तो डर की वजह से किसी से आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का नाम तक न पूछ सके हरम में हज़रत अली रज़ि० से मुलाक़ात हो गई। तीन दिन उन के यहाँ मेहमान रहे जब कहीं यह हिम्मत हुई कि अपने सफ़र की ग़र्ज़ उन से बयान करें। चुनाचे हज़रत अली रज़ि° आप की ख़िदमत बाबरकत में ले गये यहाँ हाज़िर होने के बाद हज़रत अबूज़र रज़ि० ने इस्लाम कुबूल कर लिया। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने आप को हिदायत की कि अब अपने क़बीले में वापस जाओ लेकिन तौहीदे ख़ालिस का जो ताज़ा-ताज़ा असर दिल पर हुआ था उस ने सारी मसलेहतों और ख़ौफ़ों को दिल से दूर कर दिया था। वहाँ से आते ही हरम में आ कर पुकाराः-

اَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَ اَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا رَّسُوْلُ اللّٰهِ

अशहदु-अल्लाइलाहा इल्लल्लाहु व-अशहदु-अन्ना मुहम्मदर्रसूलुल्लाहि।

यह सुनना था कि लोग चारों तरफ़ से दौड़ पड़े और मारना शुरू कर दिया वह तो ख़ैर हो गई कि ऐन वक़्त पर हज़रत अब्बास आ गये और उन्हों ने मारने वालों से कहा कि यह ग़िफ़ार के क़बीले के आदमी हैं और तुम्हारा तिजारती क़ाफ़ला उन के क़बीले के पास से हो कर गुज़रता है अगर इन्हों ने तुम्हारा रास्ता बन्द कर दिया तो क्या करोगे? यह सुन कर लोगों ने आप को छोड़ दिया।

हज़रत अबूज़र रज़ि० जब अपने क़बीले में पहुँचे और जा

कर इस्लाम की दावत दी तो तक़रीबन आधा क़बीला उसी वक़्त मुसलमान हो गया। ग़िफ़ार के क़रीब ही असलम का क़बीला आबाद था उन के असर से उन्हों ने भी इस्लाम की दावत क़ुबूल कर ली, गर्ज़ यह कि इस्लाम की दावत इसी तरह फैलनी शुरू हो गई। यह बात मुख़ालिफ़ीन के लिये सख़्त अज़िय्यत और तकलीफ़ का सबब बनती रही चुनाचे अब उन में से कुछ लोग मजबूर हो कर अबूतालिब के पास शिकायत ले कर गये। उस वफ़्द में कुरैश के सारे सरदार शामिल थे। उन्हों ने अबूतालिब से कहा कि तुम्हारा भतीजा हमारे माबूदों की तौहीन करता है हमारे बाप दादा को गुमराह बताता है और हम सब को ग़लतकार और अहमक़ कहता है लिहाज़ा या तो तुम बीच से हट जाओ तो फिर हम मुआमला को आख़िरी बार चुका डालें या फिर तुम उसे समझाओ। जब अबूतालिब ने अंदाज़ा किया कि अब बात बहुत सख़्त हो गई है और मैं अकेला कब तक सारे कुरैश का मुक़ाबिला करूँगा तो आँहज़रत से बोले "प्यारे भतीजे! मेरे ऊपर इतना बोझ न डाल कि मैं उठा न सकूँ"। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जब देखा कि अबूतालिब के क़दम भी डगमगाये जा रहे हैं तो निहायत इतमीनान के साथ फ़रमाया "खुदा की क़सम अगर यह लोग मेरे एक हाथ में सूरज और दूसरे हाथ में चाँद ला कर रख दें तब भी मैं अपने फ़र्ज़ से बाज़ न आऊँगा। खुदा या तो इस काम को पूरा करेगा या मैं खुद इस काम पर निसार (कुर्बान) हो जाऊँगा"। आप के इस पुख़्ता इरादे और बाहिम्मत फ़ैसले को सुन कर अबूतालिब की भी हिम्मत बंधी और उन्हों ने कहा कि "जा, कोई तेरा बाल बेका भी नहीं कर सकता।

मुख़ालिफ़ो की पेशकशः– कुरैश जब इस तरफ़ से भी मायूस हो गये तो आख़िरी चार-ए-कार के तौर पर तैय किया कि अगर सख़्ती से नहीं तो नर्मी से ही इस नई तहरीक का ख़त्मा कर दिया जाये चुनाचे उतबा बिन रबीआ को आप की ख़िदमत में भेजा उस ने आ कर कहाः-

"मुहम्मद! आख़िर बताओ, तुम क्या चाहते हो? क्या मक्के की हुकूमत चाहते हो? किसी बड़े घराने में शादी की ख़्वाहिश है? या दौलत के ढेर मतलूब हैं? हम यह सब कुछ मुहय्या कर सकते हैं तुम इस के लिये क्यों यह सब कुछ करते हो हम इस पर राज़ी हैं कि कुल मक्का तुम्हारे ज़ेरे फ़रमान हो जाये या और जो कुछ चाहो वह कर दिया जाये लेकिन तुम अपनी इस दावत से बाज़ आ जाओ"।

मुख़ालिफ़ीन बेचारे इतना ही सोच सकते थे उन के ज़हनों में यह बात आती ही न थी कि कोई तहरीक चलाई जाये या कोई दावत बुलंद की जाये और उस के पीछे कोई छुपी हुई माद्दी ग़र्ज़ न हो। उन के ज़हन यह सोच ही नहीं सकते थे कि कोई काम सिर्फ़ ख़ुदा की ख़ुशनूदी और महज़ उस की अताअत के लिये भी किया जा सकता है। वह तो यही जानते थे कि जान और माल की बाज़ी हुकूमत और दौलत ही के लिये लगाई जाती है उन्हें क्या मालूम था कि आख़िरत की हमेशा रहने वाली ज़िन्दगी की कामियाबी के लिये भी लोग यह सौदा कर लिया करते हैं। चुनाचे उतबा को पूरा यक़ीन था कि उस की दरख़्वास्त ज़रूर मंज़ूर हो जायेगी। लेकिन आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उस के जवाब में कुरआन पाक की चन्द आयात तिलावत फ़रमाईं जिन में तौहीद की दावत और अपनी

रिसालत की वज़ाहत की गई थी।

उतबा यह सुन कर वापस हो गया और इतना असर ले गया कि जब उस ने कुरैश के सरदारों के सामने अपनी रिपोर्ट पेश की तो कहा कि "मुहम्मद जो कलाम पेश करते हैं वह शायरी तो नहीं है कुछ और चीज़ है। मेरी राय है कि तुम उन को उन के हाल पर छोड़ दो अगर वह कामियाब हो गये तो सारे अरब पर ग़ालिब आ जाएँगे और इस में तुम्हारी भी इज़्ज़त है और नहीं तो अरब ख़ुद उन्हें फ़ना कर देगा" लेकिन कुरैश ने यह राय मंज़ूर नहीं की।

अब एक ही चार-ए-कार बाक़ी रह गया था जो हर बातिल इस मरहले में हक़ के ख़िलाफ़ इख़्तियार करता है यानी पूरे तशद्दुद और ज़ोर के साथ हक़ की आवाज़ को दबाने की कोशिश। चुनाचे अब कुरैश ने यही फ़ैसला किया कि मुसलमानों पर इतनी सख़्तियाँ की जायें कि वह तंग आ कर अपना फ़ैसला बदलने पर मजबूर हो जाएँ जिसे जहाँ मौक़ा मिले मुसलमानों को सताये और अज़िय्यत दे।

तीसरा दौर

इब्तिला[1] व आज़माइश

अब तक दावते इस्लामी का जो काम हुआ था उस का रद्दे अमल तीन सूरतों में ज़ाहिर हुआ था।

1. कुछ नेक और भले लोगों ने इस दावत को कुबूल कर लिया और वह एक गिरोह बन कर तहरीक को आगे बढ़ाने के

---

1. इम्तिहान

लिये हर क़ीमत पर आमादा हो गये।

2. बहुत से लोग अपनी नादानी, ख़ुदग़र्ज़ी या अपने बाप दादा के दीन की अंधी अक़ीदत की वजह से इस तहरीक की मुख़ालिफ़त पर आमादा हो गये।

3. मक्के और कुरैश की हुदूद से निकल कर यह नई दावत निस्बतन ज़्यादा बड़े हल्क़े तक पहुँचने लगी।

और अब यहाँ से इस नई तहरीक और पुरानी जाहिलियत में एक सख़्त कशमकश शुरू हुई, जो लोग अपने पुराने दीन से चिमटे रहना चाहते थे उन्हों ने पूरी कुव्वत से तहरीके इस्लामी को मिटा डालने पर कमर बाँध ली और इस्लाम कुबूल करने वालों पर इन्तिहाई वहशियाना ज़ुल्म व सितम ढाये और उन को हर तरह से आजिज़ कर देने पर तुल गये चुनाचे यही वह दौर है जिस में कुरैश के मज़ालिम के इन्तिहाई इबरतनाक वाक़िआत हमारे सामने आते हैं।

अरब जैसे गर्म मुल्क की तेज़ धूप में दूपहर के वक़्त जलती हुई रेत पर मुसलमानों को लिटाना, उन के सीनों पर भारी भारी पत्थर रख कर दबाना, लोहे को गर्म कर के दाग़ देना और पानी में डुबकियाँ देना, इन्तिहाई बेदर्दी से मारना पीटना, ग़र्ज़ यह कि यह और इसी क़िस्म के मज़ालिम थे जो मुसलमानों पर तोड़े जाने लगे अगरचे इस दौर में आम मुसलमानों के लिये ज़िन्दगी दूभर कर दी गई थी लेकिन तारीख़ में जिन मज़लूमों की दास्तानों के कुछ हिस्से नक़ल हुये हैं उन में से बतौरे नमूना चन्द यह है।

हज़रत ख़ब्बाब (रज़िअल्लाहु अन्हु) आप उम्मे अनमार के गुलाम थे। अभी छः-सात आदमी ही इस्लाम लाये थे कि आप

भी इस्लाम से मुशर्रफ़ हुये (इस्लाम लाये) और उसी "जुर्म" में कुरैश के मज़ालिम का निशाना बने, कुरैश ने एक दिन ज़मीन पर कोयले जला कर उन्हें उन पर चित लिटाया और ऊपर से एक शख़्स ने सीने पर पाँव रख कर दबाया कि करवट लेने न पाएँ यहाँ तक कि कोयले पीठ के नीचे ही ठंडे हो गये मुद्दतों के बाद हज़रत ख़ब्बाब ने एक बार अपनी जली हुई पीठ पर सफ़ेद बर्स के से दाग़ दिखाये थे।

हज़रत बिलाल (रज़िअल्लाहु अन्हु) आप उमय्या बिन ख़ल्फ़ के ग़ुलाम थे ठीक दूपहर के वक़्त उमय्या उन को जलती हुई रेत के ऊपर लिटाता और भारी पत्थर सीने पर रख देता और कहता कि इस्लाम से इंकार कर, नहीं तो यूँ ही घुट घुट कर मर जाएगा। लेकिन उस वक़्त भी इन्तिहाई कर्ब (दर्द) की हालत मे आप की जुबान से "अहद अहद" ही निकलता और उन का आक़ा उन के गले में रस्सी बाँध कर लड़कों के हवाले कर देता और वह उन को शहर के एक हिस्से से दूसरे हिस्से तक घसीटते फिरते।

हज़रत अम्मार (रज़िअल्लाहु अन्हु) यमन के रहने वाले थे, यह उन चन्द बाहिम्मत लोगों में से हैं जो बिल्कुल इब्तिदा में मुसलमान हुये थे। यह जब इस्लाम लाये तो कुरैश उन को जलती हुई ज़मीन पर लिटा कर इतना मारते कि यह बेहोश हो जाते।

हज़रत लबनिया (रज़िअल्लाहु अनहा) यह एक कनीज़ थीं। हज़रत उमर अपने मुसलमान होने से पहले उन को इतना मारते इतना मारते कि खुद थक कर बैठ जाते लेकिन यह अल्लाह की बन्दी यही कहतीं कि अगर तुम इस्लाम नहीं लाओगे तो खुदा

तुम से इस का बदला लेगा।

हज़रत ज़ुबैरा (रज़िअल्लाहु अनहा) यह भी हज़रत उमर के घराने की कनीज़ थीं एक बार अबूजहल ने उन को इतना मारा कि उन की आँखें जाती रहीं।

ग़र्ज़ यह कि मर्दों और औरतों में बहुत से ऐसे लाचार और मजबूर मुसलमान थे जो तरह तरह से सताये जा रहे थे लेकिन यह तमाम मज़ालिम किसी एक मुसलमान को भी इस्लाम छोड़ने पर आमादा न कर सके।

जब उन बेकस और बेक़सूर मुसलमानों पर मज़ालिम तोड़े जाते तो ज़रूरी तौर से लोग मुतवज्जेह होते थे और उन के दिल यह सोचने पर मजबूर हो जाते थे कि आख़िर वह कौन सा लालच है जो इन लोगों को इतनी मुसीबतों के बावजूद इस्लाम से चिमटे रहने पर आमादा किये हुये है सब जानते थे कि यह लोग अपने अख़लाक़, मुआमलात और दूसरे इंसानी रिश्तों के एतबार से बेहतरीन इंसान हैं और उन का कुसूर इस के सिवा कुछ नहीं है कि यह कहते हैं कि हम सिवाये एक अल्लाह के और किसी को अपना रब (आक़ा, मालिक और माबूद) नहीं बनाएँगे और इताअत व बन्दगी सिर्फ़ उस की करेंगे।[1] उन मज़लूम मुसलमानों की यह इस्तिक़ामत बहुत से

---

1. यूँ देखने में यह बात आज कल हमारे लिये बहुत मामूली बात हो गई है और हमें तअज्जुब होता है कि आख़िर इतनी सी बात कहने पर लोगों को क्यों इतना सताया जाता था बात यह है कि हमारे सामने न तो लफ़्ज़े रब का पूरा-पूरा मफ़हूम है और न हम इबादत की पूरी हुदूद को सामने रखते हैं लेकिन यह लोग जानते थे कि उन की ज़ुबान में रब और इबादत के अलफ़ाज़ की वुस्अतें क्या हैं? (बाक़ी अगले पेज पर)

लोगों के सामने एक बहुत बड़ा सवाल बन कर आती थी और उन के दिलो में लाज़िमन एक क़िस्म की नर्मी पैदा करती थी और वह इस नई तहरीक को क़रीब से देखने और समझने की तरफ़ मायल होते (झुकते) थे। हक़ पर रहने वालों की मज़लूमियत हमेशा की कामियाबी का ज़ीना बनी है चुनाचे अब

(बकिया पिछले पेज का) चुनाचे जब यह कहते थे कि हमारा रब अल्लाह है तो कहने वाले और सुनने वाले दोनों जानते थे कि इस का मतलब यह है कि:-

(i) अल्लाह के सिवा कोई दूसरा परवरदिगार नहीं है और जब ऐसा है तो फिर इंसान को उसी का शुक्रगुज़ार होना चाहिये उसी से दुआएँ माँगना दुरूस्त है और मुहब्बत और अक़ीदत के साथ उसी के सामने सिर झुकाना भी ठीक है उस के सिवा कोई दूसरा परस्तिश का मुसतहिक़ न है और न हो सकता है।

(ii) अल्लाह के सिवा कोई दूसरा मालिक और आक़ा नहीं है इस लिये इंसान को उसी का बन्दा और गुलाम बन कर रहना चाहिये उस के मुक़ाबिले में न तो ख़ुद अपने आप को ख़ुदमख़तार समझे और न किसी दूसरे को, इस के सिवा किसी दूसरे की गुलामी और महकूमी ठीक नहीं है।

(iii) अल्लाह के सिवा कोई दूसरा हाकिम और फ़रमारवा नहीं है इसी लिये इताअत और फ़रमाबरदारी सिर्फ़ उसी की दुरूस्त है। इंसान न तो खुद अपना हाकिम बने और न ख़ुदा के सिवा किसी दूसरे की हुकमरानी को तसलीम करे। यही वह एलान था जिस से एक तरफ़ तो उन तमाम मअबूदों की ख़ुदाई ख़त्म होती थी जिन की इबादत बाप दादा से होती चली आ रही थी। और दूसरी तरफ़ हर क़िस्म की सरदारी और हुकूमत के ख़िलाफ़ यह खुला हुआ एलाने बग़ावत था। इसी मज़हबी पेशवा और क़बाइल के सरदार इस एलान को बरदाशत करने के लिये किसी तरह तयार न थे।

भी एक तरफ़ तो मज़ालिम तोड़े जा रहे थे लेकिन दूसरी तरफ़ इस्लामी तहरीक बराबर फैलती जा रही थी। मक्के में कोई ख़ानदान और कोई घर ऐसा नहीं रहा जिस के किसी न किसी शख़्स ने इस्लाम न कुबूल कर लिया हो और यही वजह थी कि इस्लाम के मुख़ालिफ़ और भी ज़्यादा झुनझुलाहट और गुस्से का शिकार हो गये थे। वह देखते थे कि उन के अपने भाई, भतीजे, बहनें, बेटियाँ दावते इस्लाम को कुबूल करते जा रहे हैं और सिर्फ़ इस्लाम की ख़ातिर सब कुछ छोड़ छाड़ कर उल्टा उन से कट जाने के लिये तयार हैं उन लोगों के लिये यह चोट सख़्त नाक़ाबिले बरदाश्त थी फिर लुत्फ़ यह कि जो लोग इस नई तहरीक में शामिल हो रहे थे वह ऐसे लोग थे जो अपनी सोसाइटी में बेहतरीन लोग समझे जाते थे। उन की सूझ बूझ, अख़लाक़ और आम इंसानी ख़ूबियाँ सब लोगों पर ज़ाहिर थीं जब इस क़िस्म के लोग इस्लाम कुबूल कर के अपने सारे मफ़ादात (ग़र्ज़) पर पानी फेरने के लिये आमाद हो जाते थे तो बहरहाल हर शख़्स सोचने पर मजबूर हो जाता था कि आख़िर इस तहरीक और इस के दाई में वह कौन सी कशिश है जो लोगों को इस दरजा जाँनिसारी पर तयार कर देती है फिर लोग यह भी देखते थे कि इस्लाम के दायरे में आ जाने के बाद यह लोग और भी ज़्यादा रास्तबाज़, सच्चे, बाअख़लाक़, मुआमले के अच्छे और पाकीज़ा इंसान बन जाते हैं। यह सब बातें ऐसी थीं जो हर देखने वाले को मजबूर करती थीं कि वह चाहे दावते इस्लामी को कुबूल करे या न करे लेकिन अपने दिल में इस दावत की बरतरी महसूस किये बग़ैर नहीं रह सकता था।

हबशा को हिजरत 5 नबवी:– अब आँहज़रत सल्लल्लाहु

अलैहि वसल्लम की नुबुव्वत को तक़रीबन 5 साल हो चुके थे जब आप ने यह अंदाज़ा फ़रमा लिया कि अभी कुरैश के मज़ालिम के ख़त्म होने की कोई सूरत नहीं है और बहुत से मुसलमान ऐसे हैं जो किसी भी सख़्ती के मुक़ाबिले में इस्लाम से मुँह तो न मोड़ेंगे लेकिन बहरहाल मुसीबतें उन की कुव्वते बरदाश्त से बाहर होती जा रही हैं और उन के लिये इस्लाम के फ़राइज़ का बजा लाना तक नामुम्किन होता जा रहा है, तो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने यह फ़ैसला फ़रमाया कि कुछ मुसलमान हबशा को हिजरत कर जाएँ हबशा अफ़रीक़ा के मशरिक़ साहिल पर एक मुल्क था जहाँ का बादशाह एक नेक दिल और इंसाफ़ पसंद ईसाई था। इस हिजरत से जहाँ एक ग़र्ज़ यह थी कि कुछ मुसलमान कुरैश के जोर व ज़ुल्म से कम से कम उस वक़्त तक निजात पा जाएँ जब तक हालात कुछ दुरूस्त न हो जाएँ। वहीं एक बड़ा फ़ायदा यह भी था कि उन जाँनिसारों के ज़रिया इस्लाम की दावत को कुछ दूर दराज़ इलाक़ों तक पहुँचने का मौक़ा मिला।

चुनाचे पहली बार ग्यारह मर्द और चार औरतें इस हिजरत के लिये तयार हो गये उन लोगों ने 5 नबवी रजब के महीने में सफ़र किया। अल्लाह का करना कि जब यह लोग बनदरगाह पर आये तो दो तिजारती जहाज़ वापसी के लिये तयार थे जो उन लोगों को बहुत ही सस्ते किराया पर ले गये। कुरैश को जब यह ख़बर हुई तो उन्हों ने उन लोगों का पीछा किया लेकिन अल्लाह के फ़ज़्ल से उन का जहाज़ रवाना हो चुका था।

हबशा में यह मुसलमान अमन व अमान से रहने लगे लेकिन जब यह ख़बरें कुरैश को पहुँचीं तो वह बड़े ताव में आये

और आख़िरकार यह तैय किया कि कुछ लोग हबशा के बादशाह (अरब लोग उसे नज्जाशी कहते थे) के पास जा कर कहें कि यह लोग हमारे मुजरिम हैं आप इन्हें अपने मुल्क से निकाल दीजिये ताकि हम इन्हें अपने साथ ले जायें। अब्दुल्लाह बिन रबीआ और अमर बिन अल-आस इस काम के लिये चुने गये और निहायत शान के साथ यह लोग जा कर हबश रवाना हुये पहले यह लोग जाकर हबश के पादरियों से मिले और उन से कहा कि इन लोगों ने एक नया मज़हब निकाला है और जब हम ने इन्हें निकाल दिया तो यह भाग कर आप के मुल्क में आ गये हैं हम चाहते हैं कि आप के बादशाह के सामने हम यह दरख़्वास्त पेश करें कि यह हमारे मुजरिम हैं जो भाग कर चले आये हैं। इन्हें हमें वापस कर दिया जाये लिहाज़ा आप लोग भी दरबार में हमारी सिफ़ारिश करें।

मुसलमान नज्जाशी के दरबार में:- जब मक्के वालों की दरख़्वास्त नज्जाशी के सामने पेश हुई तो उस ने मुसलमानों को बुला भेजा और पूछा कि "यह तुम ने कौन सा नया मज़हब ईजाद किया है?" मुसलमानों ने अपनी तरफ़ से बात चीत करने के लिये हज़रत जअफ़र बिन अबी तालिब (हज़रत अली के भाई) को मुक़र्रर किया आप ने दरबार में उस मौक़ा पर जो तक़रीर फ़रमाई वह तारीख़ की किताबों में महफ़ूज़ है उस का ख़ुलासा यह है:-

"ऐ बादशाह! हम एक ज़माने से जिहालत और ग़ुमराही के अंधेरों में भटक रहे थे एक ख़ुदा को भूल कर सैकड़ों बुतों की पूजा करते थे, मुरदार खाते थे, ज़िना, लूट मार, चोरी और एक दूसरे पर ज़ुल्म करना हमारा रात दिन का काम था, हमारा हर

ताक़तवर अपने से कमज़ोर को खा जाने पर फ़ख़्र करता था ग़र्ज़ की हमारी ज़िन्दगी दरिन्दों और जानवरों से भी बदतर थी अल्लाह की रहमत देखिये कि उस ने हमारे हाल पर रह्म फ़रमाया हम में से एक शख़्स ऐसा पैदा हुआ जिसे अल्लाह ने अपना रसूल बनाया, हम उस के नसब (ख़ानदान) से वाक़िफ़ हैं, वह निहायत शरीफ़ है, हम उस के हालात से वाक़िफ़ है वह इन्तिहाई सच्चा, अमानतदार और पाकदामन है, दोस्त और दुश्मन सभी उस की नेकी और शराफ़त के क़ायल हैं। उस ने हम को इस्लाम की दावत दी और यह सिखाया कि हम पत्थरों को पूजना छोड़ दें सिर्फ़ एक अल्लाह को अपना आक़ा व मालिक तसलीम करें और उसी की बन्दगी इख़्तियार करें, सच बोलें, क़त्ल व ग़ारत से बाज़ आएँ, यतीमों का माल न खाएँ, पड़ोसियों की मदद करें, ज़िनाकारी और दूसरी गंदी बातों से बचें, नमाज़ पढ़ें और रोज़े रखें, अल्लाह की राह में अपना माल ख़र्च करें, नादारों और ग़रीबों की मदद करें, हम उस पर ईमान लाये, शिर्क और बुतपरस्ती को छोड़ दिया और तमाम बुरे कामों से तौबा की इस पर हमारी क़ौम हमारी दुश्मन हो गई, और हमें मजबूर करती रही कि हम फिर पलट कर उन्हीं के दीन पर आ जायें और इसी ग़र्ज़ के लिये अब यह लोग आप से हमारी वापसी के लिये ज़िद कर रहे हैं"।

नज्जाशी ने कहा "अच्छा तुम्हारे नबी पर अल्लाह का जो कलाम उतरा है उस का कुछ हिस्सा पढ़ कर सुनाओ" हज़रत जअफ़र रज़ि० ने सूरह मरयम की चन्द आयात पढ़ कर सुनाईं। नज्जाशी पर बड़ा असर हुआ और उस की आँखों से आँसू जारी हो गये। बोला "ख़ुदा की क़सम यह कलाम और इंजील

दोनों एक ही चराग़ के परतौ (अक्स) हैं"। यह कह कर उस ने कुरैश के लोगों से साफ़ कह दिया कि यह मुसलमान आप के हवाले नहीं किये जाएँगे।

नज्जाशी का इस्लामः- दूसरे दिन कुरैश ने एक और चाल चली। दरबार में जा कर कहा कि ज़रा उन मुसलमानों से यह तो पूछिये कि यह हज़रत ईसा के बारे में क्या अक़ीदा रखते हैं। यह लोग जानते थे कि मुसलमान तो ईसाइयों के अक़ीदे के ख़िलाफ़ हज़रत ईसा को अल्लाह का बेटा कहने के बदले मरयम का बेटा कहते हैं और जब यह बात नज्जाशी के सामने आएगी तो वह ज़रूर मुसलमानों से नाराज़ हो जाएगा। नज्जाशी ने फिर मुसलमानों को दरबार में बुलाया। जब यह सूरतेहाल सामने पेश आई तो पहले तो मुसलमानों को भी कुछ तरद्दुद (अन्देशा) हुआ लेकिन हज़रत जअफ़र ने कहा "जो कुछ भी हो हमें बात सच्ची ही कहनी चाहिये"।

चुनाचे हज़रत जअफ़र ने भरे दरबार में एलान फ़रमाया कि "हमारे पैग़मबर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हमें बताया है कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम ख़ुदा के बन्दे और उस के पैग़म्बर थे" यह सुन कर नज्जाशी ने ज़मीन से एक तिनका उठा लिया और कहाः- "ख़ुदा की क़सम जो तुम ने कहा ईसा इस तिनके के बराबर भी इस से ज़्यादा नहीं थे"। इस तरह कुरैश की यह चाल भी नाकाम हो गई। नज्जाशी ने हज़रत जअफ़र और आप के साथियों को इज़्ज़त के साथ अपने मुल्क में रहने की इजाज़त दे दी और उस ने आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नुबुव्वत की तसदीक़ कर के इस्लाम कुबूल कर लिया उस नज्जाशी का नाम असहमा था। जब उस का

इन्तिक़ाल हुआ तो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ग़ाइबाना तौर पर उस की नमाज़े जनाज़ा पढ़ी।

धीरे-धीरे तक़रीबन 83 मुसलमान हबशा को हिजरत कर गये।

हज़रत हमज़ा का ईमानः- मक्के में एक तरफ़ कुरैश के मज़ालिम थे दूसरी तरफ़ आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और आप के साथियों के सब्र व इस्तेक़ामत का मुज़ाहिरा था और इस कशमकश के दौरान मक्के के बेहतरीन इंसान "खिंच खिंच" कर इस्लाम के दायरे मे शामिल हो रहे थे हज़रत हमज़ा रज़ि० आप के चचा थे लेकिन अभी मुसलमान नहीं हये थे। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के मुख़ालिफ़ीन जिस बेरह्मी के साथ आँहज़रत स० से पेश आते थे उसे अपने तो क्या बेगाने भी नहीं देख सकते थे एक दिन अबूजह्ल आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथ इन्तिहाई गुसताख़ी से पेश आया। हज़रत हमज़ा शिकार को गये थे जब वापस हुये तो एक कनीज़ ने सारा क़िस्सा सुनाया हज़रत हमज़ा गुस्से से बेताब हो गये। तीर व कमान हाथ में लिये हुये हरम में आये और गुस्से की हालत में हबू जह्ल को बुरा भला कहा। और कहा "मैं मुसलमान हो गया हूँ"।

हिमायत के जोश में कहने को कह दिया लेकिन अभी दिल बाप दादा के दीन को छोड़ने के लिये तयार न था तमाम दिन सोचते रहे। आख़िरकार हक़ की पुकार ग़ालिब आई और आप ने इस्लाम कुबूल कर लिया। यह वाक़िआ 6 नबवी का है। उस के चन्द दिन बाद ही हज़रत उमर रज़ि० ने इस्लाम कुबूल कर लिया दावते इस्लाम की तारीख़ में यह क़िस्सा भी बहुत ही

अहम है।

हज़रत उमर का इस्लाम 6 नबवी:- इस्लाम कुबूल करने से पहले हज़रत उमर का शुमार (गिनती) उन लोगों में था जो इस्लाम के पक्के मुख़ालिफ़ थे। एक तरफ़ तो कुरैश के बड़े बड़े लोग दाइ-ए-इस्लाम (इस्लाम की तरफ़ बुलाने वाला) और दावत-ए-इस्लाम की मुख़ालिफ़त में इन्तिहाई शिद्दत इख़्तियार करते जाते थे। दूसरी तरफ़ आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की कैफ़ियत यह थी कि उन की रहनुमाई और हिदायत के लिये आप के दिल में इन्तिहाई मुहब्बत के जज़्बात उभरते थे अबू जहल और उमर दोनों आप की दुश्मनी में बहुत सख़्त थे लेकिन जब दावत व तबलीग़ की सारी कोशिशें उन पर कारगर न हुईं तो उस रहमते आलम ने एक बार बारी तआला से दुआ फ़रमाई कि "ख़ुदावंदा! अबू जहल और उमर में जो तेरे नज़दीक ज़्यादा महबूब हो उस से इस्लाम को मुअज़्ज़ज़ (इज़्ज़तदार) फ़रमा" इस दुआ के चन्द दिन बाद ही हज़रत उमर को इस्लाम कुबूल करने की तौफ़ीक़ हुई इस वाक़िआ की तफ़सील इस तरह है:-

ख़ुद हज़रत उमर रज़ि० ने फ़रमाया कि एक रात में आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को परेशान करने के ख़याल से घर से निकला। आप मस्जिदे हराम को जा रहे थे आप बढ़ कर मस्जिद में दाख़िल हो गये और नमाज़ शुरू कर दी। मैं सुनने खड़ा हो गया। आप ने सूरह अल-हाक़्क़ा की क़िरत फ़रमाई मैं उस कलाम को सुन कर हैरत में था। कलाम का नज़्म और अंदाज़ निहायत दिलकश (दिल को खींचने वाला) मालूम होता था। मेरे दिल में ख़याल आया कि ख़ुदा की क़सम

यह शायर है अभी यह ख़याल आया ही था कि आप ने यह आयत पढ़ीः-

اِنَّهٗ لَقَوْلُ رَسُوْلٍ كَرِيْمٍ وَّمَا هُوَ بِقَوْلِ شَاعِرٍ قَلِيْلًا مَّا تُؤْمِنُوْنَ۔

इन्नहू ल-कौलो रसूलिन करीमिव्वमा हुआ बेकौ़ले शाइरिन कलीलम्मा-तूमिनून।

यह एक बुजुर्ग क़ासिद (दूत) का कलाम है और यह किसी शायर का कलाम नहीं (लेकिन) तुम ईमान नहीं लाते।

मैं ने जो यह सुना तो फ़ौरन दिल में ख़याल आया कि यह तो मेरे दिल की बात जान गया यह काहिन है उसी के बाद ही आप ने यह आयत पढ़ीः-

وَلَا بِقَوْلِ كَاهِنٍ قَلِيْلًا مَّا تَذَكَّرُوْنَ۔ تَنْزِيْلٌ مِّنْ رَّبِّ الْعَالَمِيْنَ۔

वला बेक़ोले काहिनिन क़लीलम-मा-तज़क्करून। तंज़ीलुम-मि- र्रब्बिल-आलमीन।

यह काहिन का कलाम भी नहीं है। तुम नसीहत नहीं हासिल करते। यह तो जहानों के रब की तरफ़ से उतरा है।

आप स० ने यह सूरह आख़िर तक पढ़ी। और मैं ने महसूस किया कि इस्लाम मेरे दिल में घर कर रहा है"। लेकिन ऐसा मालूम होता है कि चूँकि हज़रत उमर एक मुसतक़िल मिज़ाज और पुख़्ताकार (होशियार) आदमी थे इस लिये इस मौक़ा पर उन में तग़य्युर (बदलाव) पूरा नहीं हुआ। और वह अपनी रविश (रास्ता) पर चलते रहे। यहाँ तक कि एक दिन दुश्मनी के जोश में तलवार ले कर इस इरादे से घर से निकले कि आज (नऊज़बिल्लाह) आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का काम ही तमाम कर दें रास्ते में इत्तेफ़ाक़ से नईम बिन

अब्दुल्लाह से मुलाक़ात हुई उन्हों ने पूछा "क्यों किधर जा रहे हो?" बोले "आज मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फ़ैसला करने जाता हूँ" उन्हों ने कहा "पहले अपने घर की तो ख़बर लो। खुद तुम्हारे बहन और बहनोई इस्लाम ला चुके हैं"। यह सुन कर फ़ौरन पलटे और सीधे बहन के घर आये वह कुरआन पढ़ रही थीं। उन को आता देख कर ख़ामोश हो गईं और कुरआन के अज्ज़ा छुपा लिये लेकिन हज़रत उमर सुन चुके थे कि यह कुछ पढ़ रही थीं पूछा कि क्या पढ़ रही थीं? और यह कह कर कि तुम दोनों बाप दादा के दीन से ख़ारिज (निकल) हो गये हो। अपने बहनोई को मारने लगे और जब बहन आड़े आईं तो उन की भी ख़बर ली यहाँ तक कि दोनों लहूलहान हो गये। लेकिन जब उन दोनों ने साफ़-साफ़ कहा कि हम इस्लाम कुबूल कर चुके हैं और अब तुम्हारी कोई सख़्ती हमें इस रास्ते से हटा नहीं सकती तो उन के इस पुख़्ता (पक्के) इरादे को देख कर हज़रत उमर पर कुछ असर हुआ। और बोले "अच्छा लाओ मुझे भी सुनाओ तुम क्या पढ़ रही थीं"। आप की बहन फ़ातमा ने कुरआन के अज्ज़ा ला कर सामने रख दिये वह सूरह "ताहा" थी। आप ने पढ़ना शुरू किया और जब इस आयत पर पहुँचे:-

اِنَّنِیْٓ اَنَا اللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّآ اَنَا فَاعْبُدْنِیْ وَ اَقِمِ الصَّلٰوةَ لِذِكْرِیْ۔

इन्ननी अनल्लाहु ला-इलाहा इल्ला अना फ़अबुदनी व अक़िमिस्सलाता लिज़िकरी।

मैं हूँ ख़ुदा, मेरे सिवा कोई ख़ुदा नहीं तो बन्दगी मेरी करो और मेरी याद के लिये नमाज़ क़ायम करो।

तो यह असर हुआ कि फ़ौरन पुकार उठे "ला इलाहा

इल्लल्लाहु" और सीधे आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत में रवाना हो गये यह वह ज़माना था कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम हज़रत अरक़म के मकान में ठहरे हुये थे दरवाज़े पर पहुँचे तो चूँकि तलवार हाथ में थी सहाबा को तरद्दुद (शक) हुआ, लेकिन हज़रत हमज़ा रज़ि॰ ने फ़रमाया कि "आने दो अगर अच्छी नियत से आया है तो बेहतर है वरना उसी की तलवार से उस की गर्दन उड़ा दूँगा"। हज़रत उमर ने अन्दर क़दम रखा तो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने बढ़ कर उन का दामन पकड़ा और फ़रमाया "क्यों उमर किस इरादे से आये हो? यह सुनते ही हज़रत उमर पर एक रोब सा तारी हो गया और निहायत आजिज़ी से बोले "ईमान लाने के लिये" आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने बेसाख़ता पुकारा "अल्लाहु अकबर" और साथ ही तमाम सहाबा ने नार-ए-तकबीर बुलंद किया।

हज़रत उमर के इस्लाम लाने के बाद इस्लामी जमाअत की कुव्वत में इज़ाफ़ा हो गया। यहाँ तक कि मुसलमान अभी तक अपने मज़हबी फ़राइज़ एलानिया (खुले तौर पर) अदा नहीं कर सकते थे और काबे में जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ना तो मुम्किन ही न था। हज़रत उमर के इस्लाम लाने के बाद हालत बदल गई। उन्हों ने एलानिया अपने इस्लाम का इज़हार किया। अगरचे उस पर बड़ा हंगामा हुआ। लेकिन आख़िरकार मुसलमानों नें हरमे काबा में जमाअत के साथ नमाज़ अदा करना शुरू कर दी और अब उन की जमाअत ज़्यादा क़वी जमाअत हो गई और फिर दुनिया ने देख लिया कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की दुआ की कुबूलियत इस दरजा

ज़ाहिर हुई कि आज चौदह सौ बरस गुज़रने के बाद भी तारीख़ इस बात पर गवाह है कि हज़रत उमर के हाथों अल्लाह तआला ने इस्लाम को जो इ़ज़्ज़त व सरबुलंदी अता फ़रमाई उस की कोई दूसरी मिसाल नहीं है।

शेअबे अबी तालिब में कै़द 7 नबवीः- इस्लामी दावत की बढ़ती हुई रफ़तार को देख कर कुरैश के सरदारों की परेशानियाँ दिन बदिन बढ़ती जा रही थीं । और आये दिन इस तहरीक को दबाने के लिये नित नई तदबीरें सोचा करते थे चुनाचे अब उन्हों ने एक चाल यह चली कि तमाम क़बीलों नें मिल कर यह मुआहिदा किया कि कोई शख़्स आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पूरे ख़ानदान बनी हाशिम से न क़राबत (दिश्तेदारी) करेगा, न उन के साथ ख़रीद व फ़रोख़्त करेगा, और न उन को खाने पीने का कोई सामान देगा जब तक कि वह ख़ुद मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को क़त्ल के लिये हमारे हवाले न कर दें। यह मुआहिदा लिख कर काबे के दरवाज़े पर लटका दिया गया।

अब बनी हाशिम के लिये दो ही रास्ते थे या तो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को कुफ़्फ़ार के हवाले कर दें या फिर उस मआशी (रोज़ी) और मुअशरती बाईकाट की वजह से जो मुसीबतें आएँ उनहें झेलने के लिये तयार हो जाएँ चुनाचे अबूतालिब मजबूर हो कर तमाम ख़ानदाने बनी हाशिम के साथ पहाड़ के एक दर्रह (दो पहाड़ी के बीच का रास्ता) में रहने लगे जो ख़ानदानी तौर पर बनी हाशिम की जागीर थी। उस दर्रे में उन लोगों को आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथ 3 साल तक बड़ी सख़्त ज़िन्दगी बसर करनी पड़ी। यहाँ यह लोग

कभी-कभी पेड़ों के पत्ते खा-खा कर वक़्त गुज़ारते थे। इन्तिहा यह कि लोग भूक की शिद्दत से सूखा हुआ चमड़ा तक उबाल कर खा गये। बच्चे जब भूक से बिलकते थे तो कुरैश के सख़्त दिल ज़ालिम सुन-सुन कर खुश होते थे। किसी-किसी रहमदिल को तरस आ जाता तो छुपा कर कुछ खाने को भेज देता।

जब लगातार तीन साल तक बनी हाशिम ने इस्तिक़ामत का सुबूत दिया तो फिर आख़िर ज़ालिमों के दिल में ही अल्लाह तआला ने रहम पैदा फरमाया। और खुद उन्हीं की तरफ़ से मुआहिदे के तोड़ने की तहरीक शुरू हुई और एक के बाद एक लोगों के दिल नर्म होते गये। अबू जहल और उस के ख़याल के कुछ लोग तो अड़े रहे लेकिन आख़िरकार उन लोगों की ज़्यादा न चल सकी और तक़रीबन 10 नबवी में यह लोग दर्रे से निकाल लिये गए।

दावत की रफ़्तारः- जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है कि मक्की दौर की जद्दोजहद की तफ़सीलात तारीख़ और सियर (सीरत) की किताबों में बहुत ही कम मिलती हैं। चुनाचे इस मआशी और मुआशरती बाईकाट की दर्मियानी मुद्दत में दावत व तहरीक का काम किस तरह होता रहा और उस के क्या असरात मुरत्तब हुये इस बारे में भी कुछ तफ़सीलात नहीं मिलतीं। अलबत्ता कुरआन का नुज़ूल (अतरना) बराबर होता रहा और उस दौर में जो सूरतें नाज़िल हुईं उन के मज़ामीन और हिदायात व तालीमात को सामने रखते हुये यह अंदाज़ा हो सकता है कि तहरीक को उस ज़माने में किन किन हालात से दोचार होना पड़ा होगा।

इस लम्बी और शदीद कशमकश के दौरान अल्लाह तआला

ने जो ख़ुतबे नाज़िल किये वह इन्तिहाई पुरजोश और पुरअसर हैं। उन में ईमान वालों को उन के फ़राइज़ बताये गये और उन पर अमल करते रहने की हिदायत की गई उन के शख़्सी किरदार को ऊँचे से ऊँचे मेयार पर ले जाने की सूरतें बताई गईं। तक़्वा की मश्क़ करने और इस सिफ़त को ज़्यादा से ज़्यादा बढ़ाने पर इन्तिहाई ज़ोर दिया गया। अख़्लाक़ की बुलंदी और आदात की इसलाह के लिये हिदायत दी गई। जमाअती शुऊर बेदार किया गया और इजतिमाई अख़्लाक़ की तरबियत दी गई। दीने हक़ की तबलीग़ के तरीक़े बताये गये। सख़्त और नागवार हालात में सब्र पर क़ायम रहने की बार बार ताकीद की गई कामियाबी के वादे और जन्नत की ख़ुशख़बरियाँ दे कर उन की हिम्मत बंधाई गई। दीन की कठिन राह में साबित क़दम रहने और हिम्मत के साथ अल्लाह की राह में मुसलसल जद्दोजह्द करने पर उभारा गया। और उन के अन्दर जाँनिसारी और कुर्बानी का ऐसा जोश पैदा हो गया कि वह हर मुसीबत को झेल लेने और हर सख़्ती को बरदाश्त कर लेने के क़ाबिल हो गये।

दूसरी तरफ़ मुख़ालिफ़ीन और अल्लाह के दीन से मुँह मोड़ने वालों को उन के बुरे अंजाम से बराबर डराया जा रहा था। उन्हें उन क़ौमों के इबरतनाक (ख़ौफ़ दिलाने वाला) वाक़िआत सुनाये जा रहे थे जिन्हों ने उस से पहले ग़फ़लत और इंकार की रविश इख़्तियार की और नतीजे में हलाक हुये, यह तमाम वाक़िआत वही थे जिन से अरब वाले ख़ुद वाक़िफ़ थे। उन को उन तबाहशुदा बस्तियों के खंडरों की तरफ़ तवज्जोह दिलाई गई जिन पर से हो कर वह रात दिन गुज़रा करते थे।

फिर उन के सामने तौहीद और आख़िरत की दलीलें उन खुली खुली निशानियों से दी गईं जो वह रात दिन ज़मीन और आसमान में अपनी आँखों से देखते थे। शिर्क की बुराईयाँ ज़ाहिर की गईं। खुदा के मुक़ाबिले में बग़ावत की राह इख़्तियार करने के नताइज से बाख़बर किया गया। आख़िरत का इंकार कर देने से ज़िन्दगी में जो बिगाड़ पैदा होता है उस को खोल खोल कर समझाया गया। बाप दादा की अंधी तक़लीद से इंसानियत को जो नुक़सान पहुँचता है उस की निशानदही की गई और यह सब बातें ऐसी दलीलों के साथ बयान की गईं जिन पर ग़ौर करने से बात दिल में उतर जाए।

मुख़ालिफ़ीन और मुनकिरीन (इनकार करने वाले) जो एतराज़ात करते थे उन के माकूल (ठीक) जवाब दिये गये वह जो शुबहात (शक) पेश करते थे उन को दूर किया गया ग़र्ज़ कि उन तमाम उलझनों को साफ़ किया गया जिन में वह खुद गिरिफ़्तार थे या दूसरों को उलझाया करते थे। लेकिन उस पूरी मुद्दत में मुख़ालिफ़त और दुश्मनी बराबर बढ़ती ही गई।

चौथा दौर

मज़ालिम और मसाइब[1] की इन्तिहा

जब आप शेअबे अबी तालिब से बाहर आये और कुरैश के मज़ालिम से चन्द दिन के लिये कुछ राहत मिली तो उस के थोड़े ही दिन बाद अबू तालिब का इन्तिक़ाल हो गया और कुछ ही दिन बाद हज़रत ख़दीजा रज़ि० ने भी रेहलत (इन्तिक़ाल)

1. मुसीबतें

फ़रमाई। उस साल को आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ग़म का साल फ़रमाया करते थे। उन दोनों हस्तियों के इन्तिक़ाल के बाद क़ुरैश की मुख़ालिफ़त और तकलीफ़ देने में और भी शिद्दत हो गई और यही वह ज़माना है जो तहरीके इस्लामी के लिये सब से ज़्यादा सख़्त ज़माना था अब क़ुरैश ने मुसलमानों और ख़ुद आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को इन्तिहाई बेरहमी और बेबाकी से सताना शुरू कर दिया।

मक्के से बाहर तबलीग़:– मक्के वालों में से जो बेहतरीन आदमी थे वह तक़रीबन सब छट छट कर इस्लामी जमाअत में आ चुके थे। चुनाचे अब दाइ–ए–इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मक्के से बाहर जा कर अल्लाह का पैग़ाम पहुँचाने का फ़ैसला फ़रमाया। उसी प्रोगाम के तहत आप ताइफ़ भी तशरीफ़ ले गये । ताइफ़ में बड़े–बड़े अमीर और बाअसर लोग रहते थे। आप इस्लाम की दावत ले कर उन लोगों के पास भी तशरीफ़ ले गये। लेकिन जैसा कि दौलत और इक़तिदार (ताक़त) अकसर क़ुबूले हक़ की राह में रुकावट ही रहा है, यहाँ भी यही मआमला पेश आया एक सरदार ने कहा "क्या ख़ुदा को तेरे सिवा कोई मिला ही नहीं जो उसे अपना रसूल बनाता" दूसरे साहब बोले "मैं तो तुझ से बात नहीं कर सकता अगर तू सच्चा है तो तुझ से बात करना ख़िलाफ़े अदब है और अगर झूटा है (नऊज़ुबिल्लाह) तो मुँह लगाने के क़ाबिल नहीं" ग़र्ज़ उन बड़ों ने बात यूँही फबतियों में उड़ा दी और इतना ही नहीं बल्कि शहर के गुन्डों और बदमाशों को उभार दिया जिन्हों ने सरे बाज़ार रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का मज़ाक उड़ाया और पत्थर मारे उस मौक़े पर आप इतने ज़ख़्मी हो गये कि जिस्मे

मुबारक से जो ख़ून बहा तो जूतों में भर गया, मगर ज़ालिम बराबर पत्थर मारते और गालियाँ देते रहे। यहाँ तक कि आप ने एक बाग़ में जा कर पनाह ली।

किसी मुख़ालिफ़ शहर में इस तरह तनहा जा कर तबलीग़ का फ़र्ज़ अदा करना और जान जोखम में डाल कर अल्लाह के बन्दों तक अल्लाह का पैग़ाम पहुँचाना किस दरजा हिम्मत और जुरअत का काम है इस का अंदाज़ा लगाना कुछ मुश्किल नहीं यह अल्लाह तआला पर कामिल ईमान और उस पर इन्तिहाई तवक्कुल की एक बुलंद तरीन मिसाल है और बाद के आने वालों के लिये एक क़ाबिले तक़लीद नमूना।

आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का दसतूर था कि हज के ज़माने में जब तमाम मुल्क से मुख़तलिफ़ क़बाइल मक्के में आते तो आप एक-एक क़बीले के पास जाते और इस्लाम की दावत देते थे। इसी तरह अरब में जिन मक़ामात पर मेले लगते थे आप वहाँ भी तशरीफ़ ले जाते थे और इन की भीड़ से फ़ायदा उठा कर लोगों के सामने इस्लाम की दावत पेश फ़रमाते थे ऐसे मौक़ों पर अकसर क़ुरैश के सरदार (ख़ुसूसन अबूलहब) भी साथ हो लेते और जिस भीड़ में आप तक़रीर फ़रमाते, वह लोगों से कहते "देखो इस की बात न सुनना, यह दीन से फिर गया है और झूट कहता है" आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ऐसे मौक़ों पर क़ुरआन पाक के कुछ हिस्से सुनाते जो अपने असर के लिहाज़ से तीरबहदफ़ (तुरन्त असर करने वाला) साबित होते। उन को सुन कर अकसर लोगों के दिलों में इस्लाम घर कर लेता। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के यह तबलीग़ी दौरे अपने नताइज और असर के लिहाज़ से इन्तिहाई

कामियाब रहे और अब इस्लाम की दावत अरब में अजनबी नहीं रह गई बल्कि दूर दूर दावत का तआरूफ़ (परिचय) हो गया। जो लोग फ़ैसला कर के इस्लामी तहरीक के साथी बन गये थे उन्हों ने अपने अपने इलाक़ों में तबलीग़ व दावत का काम शुरू कर दिया था।

लैलतुल-जिन्नः- अल्लाह तआला की बेशुमार मख़लूक़ात में से जिन्न भी एक मख़लूक़ है जिन्न भी इंसानों की तरह इरादा और इख़्तियार के मालिक हैं और इसी बुनियाद पर वह भी ख़ुदा की भेजी हुई हिदायत के मुकल्लफ़ (पाबन्द) हैं। तौहीद, रिसालत और आख़िरत पर ईमान लाना और अल्लाह तआला के अहकाम की पैरवी (फ़रमाबरदारी) करना, उन के लिये भी ज़रूरी है इसी बुनियाद पर उन में भी अच्छे और बुरे लोग होते हैं।

जिन्नों के वुजूद के बारे में पुराने ज़माने से लोगों में क़िस्म क़िस्म के ख़यालात मौजूद रहे हैं, अरब में भी जिन्नात का बड़ा चर्चा था, उन की पूजा होती थी, उन से मदद माँगी जाती थी आमिल लोग उन से दोस्ती का दावा करते थे और क़िस्म क़िस्म के अफ़साने उन के बारे में मशहूर थे। ग़र्ज़ यह कि जिस तरह और हज़ारों देवियाँ और देवता ख़ुदाई में शरीक माने जाते थे इसी तरह जिन्नात को भी ख़ुदाई में शरीक माना जाता था इस्लाम ने इन तमाम अक़ाइद की इसलाह की, उस ने बताया कि जिन्न अल्लाह की एक मख़लूक़ ज़रूर हैं, लेकिन उन को किसी तरह भी ख़ुदाई में कोई दख़ल नहीं, न वह अपने इख़्तियार से कोई नफ़ा पहुँचा सकते हैं और न नुक़सान, उन पर भी अल्लाह की बन्दगी फ़र्ज़ है, उन में भी ख़ुदा के फ़रमाँबरदार और नाफ़रमान होते हैं और वह भी इंसानों की

तरह अपने अच्छे और बुरे आमाल की जज़ा या सज़ा पाएँगे। खुदा की कुदरत के मुक़ाबिले में इंसान की तरह जिन्न भी मजबूर और लाचार हैं।

अल्लाह तआला का दीन जो अब अपनी आख़िरी शक्ल में हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ज़रिए दुनिया को मिल रहा था उस की पैरवी (फ़रमाबरदारी) जिस तरह इंसानों के लिये ज़रूरी थी उसी तरह जिन्नों के लिये भी ज़रूरी थी चुनाचे एक बार जब आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अपने तबलीग़ी दौरे पर अरब के एक मशहूर मेले उकाज़ तशरीफ़ ले जा रहे थे तो रास्ते में एक रात नख़ला के मक़ाम पर क़याम हुआ। सुब्ह के वक़्त आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अपने चन्द सहाबा के साथ नमाज़ में मसरूफ़ थे और कुरआन की तिलावत फ़रमा रहे थे कि इत्तेफ़ाक़ से जिन्नों की एक जमाअत उधर से गुज़री, उन्हों ने कुरआन सुना इस वाक़िया का ज़िक्र कुरआन पाक में सूरह अहक़ाफ़ में इस तरह है:-

"हम ने जब जिन्नों की एक जमाअत के रूख़ को ऐ पैग़म्बर! तेरी तरफ़ फेर दिया कि वह कुरआन सुनें। तो जब वह आये तो उन्हों ने एक दूसरे से कहा "ख़ामोश रहो" और जब कुरआन ख़त्म हो गया तो उन्हों ने जा कर अपनी क़ौम को मुतनब्बेह (ख़बरदार) किया उन्हों ने कहा "भाइयो! हम ने एक किताब को सुना जो मूसा के बाद उतारी गई है और जो किताबें इस से पहले नाज़िल हुई हैं यह उन की तसदीक़ करती है, हक़ की तरफ़ रहनुमाई करती है, और सीधी राह

दिखाती है, भाइयो! अल्लाह की तरफ़ पुकारने
वाले की बात मानों और उस पर ईमान लाओ
ताकि अल्लाह तुम्हारे गुनाह मआफ़ फ़रमाये और
तुम को दर्दनाक अज़ाब से पनाह दे"।

इस वाक़िआ का इल्म आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को वह्यी के ज़रिए हुआ और उस की तफ़सीलात सूरह जिन्न में मज़कूर (ज़िक्र की गई) हैं।

मदीने में इस्लाम 10 नबवी:– इस्लाम की आवाज़ जिस तरह दूर दूर अरब के दूसरे इलाक़ों में पहुँच रही थी। उसी तरह मदीने में भी पहुंची मदीने में बहुत पुराने ज़माने से यहूदी भी आ कर आबाद हो गये थे उन्हों ने मदीने के क़रीब अपने छोटे छोटे क़िले बना लिये थे।

औस और ख़ज़रज दो भाई थे जिन का असल वतन तो यमन था लेकिन वह किसी ज़माने में यमन से आ कर मदीने में आबाद हो गये थे। उन्हीं की नस्ल से वहाँ दो बड़े-बड़े ख़ानदान हो गये थे जो औस और ख़ज़रज कहलाते थे यही लोग आगे चल कर अंसार के लक़ब से पुकारे गये उन लोगों ने भी मदीना और उस के आस पास कसरत से छोटे छोटे क़िले बना रखे थे। यह लोग बुतपरस्त थे लेकिन यहूदियों के साथ मेल जोल की वजह से रिसालत, वह्यी, कुतुबे आसमानी और आख़िरत के अक़ीदों से वाक़िफ़ ज़रूर थे चूँकि उन के पास कोई चीज़ ऐसी थी नहीं इस लिये मज़हब के मुआमले में यह लोग यहूदियों से कुछ मरऊब (पसंदीदा) भी थे और उन की बातों को वज़न देते थे उन लोगों ने यहूदी आलिमों (विद्यावानों) से यह भी सुना था कि दुनिया में एक पैग़म्बर और आने वाले हैं जो कोई उन का

साथ देगा वही कामियाब होगा। और यह कि उस पैग़म्बर का साथ देने वाले ही सारी दुनिया पर छा जाएँगे। यही मालूमात थीं जिन की बिना पर मदीना वाले नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और आप की दावत की तरफ़ मुतवज्जेह हुये।

आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का मामूल था कि हज के ज़माने में आप क़बीलों के सरदारों के पास तशरीफ़ ले जाते और उन्हे दावते इस्लाम से रोशनास करते। 10 नबवी का ज़िक्र है कि आप ने मक़ामे उक़्बा के पास ख़ानदाने ख़ज़रज के चन्द लोगों को इस्लाम की दावत दी और कुरआन मजीद की कुछ आयतें सुनाईं। यह कलाम सुन कर उन के दिलों पर कुछ असर हुआ और वह समझ गये कि हो न हो यही वह नबी है जिस के बारे में यहूदी उलमा कहते हैं कि अल्लाह के एक और नबी तशरीफ़ लाने वाले हैं। उन लोगों ने एक दूसरे की तरफ़ देखा, और कहा "कहीं ऐसा न हो कि इस नबी पर ईमान लाने में यहूदी हम से पहले बाज़ी ले जायें" यह कह कर उन लोंगों ने इस्लाम कुबूल कर लिया, यह छः आदमी थे इसी तरह मदीना के अंसार में इस्लाम की शुरूआत हुई और वह बस्ती जो आइंदा इस्लामी तहरीक का मरकज़ बनने वाली थी उस में इस्लाम की रोशनी की शुरूआत हो गई।

मुख़ालिफ़त में शिद्दतः- हर तहरीक की बढ़ोतरी के साथ साथ मुख़ालिफ़त और कशमकश भी बढ़ती है लेकिन इस्लामी तहरीक की तौसीअ (बढ़ोतरी) अपने साथ मुख़ालिफ़त और कशमकश का जो तूफ़ान लाती है वह उस के अलमबरदारों के लिये सख़्त इम्तिहान होता है। चुनाचे एक तरफ़ तो दावते इस्लामी का तआरूफ़ (परिचय) बढ़ रहा था और दूसरी तरफ़

दाइ-ए-हक़ और उस के साथियों को सख़्त से सख़्त हालात से गुज़रना पड़ रहा था। कुरैश के सरदारों ने यह तैय कर लिया था कि वह ख़ुद आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को इतना सताएँ कि आख़िर में मजबूर हो कर वह इस्लाम की दावत से हाथ उठा लें। कुरैश के बड़े-बड़े सरदार आप के हमसाया थे और यही आप के सब से बड़े दुश्मन थे। यह लोग आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के रास्ते में काँटे बिछाते, नमाज़ पढ़ते वक़्त हंसी उड़ाते, आप सजदे में होते तो वह ओझड़ी ला कर गरदन पर डाल देते। गले में चादर लपेट कर ऐसी बेदर्दी से ख़ींचते कि गरदने मुबारक में बद्धियाँ पड़ जातीं लड़कों को पीछे लगा देते जो गालियाँ देते और तालियाँ पीटते। आप कहीं कोई वअज़ फ़रमाते तो दर्मियान में गड़बड़ करते और कहते कि यह सब झूट है ग़र्ज़ यह कि सताने और परेशान करने की जितनी मकरूह से मकरूह सूरतें मुम्किन थीं वह सब करते।

उस दौर में अल्लाह तआला अपने नबी पर जो कुछ वह्ी फ़रमा रहा था। उस में उन तमाम हालात से निमटने के लिये हिदायत का सामान मौजूद था। तहरीके इस्लामी के अलमबरदारों को बताया जा रहा था कि इस वक़्त बज़ाहिर हक़ जिस मज़लूमियत का शिकार हो रहा है उसे कोई मुसतक़िल चीज़ न समझना चाहिये। दुनिया की ज़िन्दगी में इस तरह के तमाशे होते ही आये हैं। और यूँ भी कामियाबी का असल मेयार दुनिया की ज़िन्दगी नहीं बल्कि आख़िरत की ज़िन्दगी है और यह तैय है कि आख़िरत उन्हीं लोगों के लिये बेहतर होगी जो तक़वा की ज़िन्दगी इख़्तियार करेंगे।

हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को ख़िताब कर के

कहा जाता था कि "अगरचे हम जानते हैं कि जो कुछ तुम्हारे साथ हो रहा है वह इन्तिहाई तकलीफ़ देने वाला है लेकिन दरअसल यह लोग जो हक़ को झुटला रहे हैं वह तुम्हें नहीं बल्कि हमें झुटला रहे हैं। और यह कोई नई बात नहीं। इस से पहले भी रसूलों के साथ मुआमला कुछ ऐसा ही होता आया है लेकिन उन रसूलों ने उन हालात को सब्र के साथ बरदाश्त किया और हर क़िस्म की मुसीबतों और तकलीफ़ों को झेला यहाँ तक कि उन्हें हमारी मदद पहुँच गई। तुम भी ऐसे ही हालात से गुज़र रहे हो और ऐसे हालात से गुज़रना ही पड़ेगा"। उन्हें बार-बार मुख़्तलिफ़ अंदाज़ से समझाया जा रहा था कि हक़ और बातिल की कशमकश के लिये अल्लाह तआला का एक मुक़र्रर किया हुआ क़ानून है जिस को बदल डालना किसी के बस की बात नहीं इस क़ानून की रू से यह लाज़िमी है कि हक़परस्तों को एक तवील (लम्बी) मुद्दत तक आज़माया जाये उन के सब्र, रास्तबाज़ी, ईसार, वफ़ादारी, फ़िदाकारी और ईमान की पुख़्तगी का इम्तिहान लिया जाये और यह अंदाज़ा किया जाये कि वह तवक्कुल अलल्लाह और ईमान बिल्लाह (अल्लाह पर भरोसा और अल्लाह पर ईमान) में कहाँ तक मज़बूत हैं इसी कशमकश के दौरान उन के अंदर वह सिफ़ात पैदा होती हैं जो उन्हें आगे चल कर अल्लाह के दीन का अलमबरदार बनने में मदद देती हैं। जब यह लोग इस इम्तिहान में अपने को अह्‌ल (लायक़) साबित कर देते हैं तो फिर अल्लाह की मदद ठीक अपने वक़्त पर आती है इस से पहले वह किसी के लाये नहीं आ सकती।

बैअते उक़्बा ऊला 11 नबवी:- दूसरे साल मदीने के बारह

आदमी आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुये और आप के हाथ पर बैअत की और इस बात की ख़्वाहिश की कि इस्लाम की तालीम के लिये कोई साहब उन के साथ भेज दिये जाएँ। चुनाचे हज़रत मुसअब बिन उमैर रज़ि॰ को उन के साथ मदीना भेज दिया गया। यह मदीने में एक-एक घर का दौरा करते थे, लोगों को कुरआन मजीद पढ़ कर सुनाते इस्लाम की दावत देते और इस तरह रोज़ाना एक-दो आदमी इस्लाम कुबूल कर लेते। रफ़्ता-रफ़्ता इस्लाम मदीने से बाहर भी फैलने लगा क़बील-ए-औस के सरदार हज़रत सअद बिन मआज़ ने भी हज़रत मुसअब के हाथ पर ही इस्लाम कुबूल किया। उन का इस्लाम कुबूल करना गोया क़बील-ए-औस का इस्लाम कुबूल कर लेना था।

बैअते उक़्बा सानिया 12 नबवीः- अगले साल 72 आदमी हज के ज़मानें में आये और अपने साथियों से छुप कर उक़्बा के मक़ाम (स्थान) पर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हाथ पर इस्लाम कुबूल किया और हर क़िस्म के नर्म और गर्म हालात में इस्लामी तहरीक का साथ देने का अहृद किया। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उस गिरोह में से 12 लोगों को चुन कर उन्हें नक़ीब (सरदार) मुक़र्रर किया उन में से 9 क़बील-ए- ख़ज़रज में से और तीन क़बील-ए-औस में से थे आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उन लोगों से जिन बातों का इक़रार लिया वह यह थीं:-

(1) सिवाए एक ख़ुदा के किसी दूसरे की बन्दगी नहीं करेंगे।

(2) चोरी नहीं करेंगे। (3) ज़िना नहीं करेंगे।

(4) अपनी औलाद को क़त्ल नहीं करेंगे।

(5) किसी पर झूटी तुहमत नहीं लगाएँगे।

(6) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम उन को जिस अच्छी बात का हुक्म देंगे वह उस से मुँह न मोड़ेंगे।

बैअत के बाद आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि अगर तुम इन शराइत को पूरा करोगे तो तुम्हारे लिये जन्नत की ख़ुशख़बरी है नहीं तो तुम्हारा मुआमला ख़ुदा के हाथ है चाहे तुम को मआफ़ फ़रमा दे और चाहे तो तुम्हें अज़ाब दे।

जब यह लोग बैअत कर रहे थे तो असअद बिन ज़रारह रज़ि० ने खड़े हो कर कहा "भाइयो! यह भी जानते हो कि तुम किस बात पर बैअत कर रहे हो, समझ लो, यह अरब और अजम के ख़िलाफ़ एलाने जंग है"। सब ने कहा कि हाँ हम यह सब कुछ समझ कर बैअत कर रहे हैं। अह्ले वफ़्द में से कुछ और लोगों नें भी इस क़िस्म की पुरजोश तक़रीरें कीं और उसी मौक़े पर मदीने के उन नौमुस्लिमों और आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम में यह क़ौल व क़रार हुआ कि अगर आँहज़रत किसी वक़्त मदीना तशरीफ़ ले आएँ तो मदीना के लोग हर उनवान मरते दम तक उन का साथ देंगे। उसी मौक़े पर हज़रत बरा रज़ि० ने कहा था कि "हम लोग तलवारों की गोद में पले हैं"।

छठा बाब

मोजिज़ात[1] और मेराज[2]

दीन की इस्लाह में मोजिज़ा इस बात को कहते हैं जो अल्लाह तआला किसी पैग़म्बर के दाव-ए-नुबुव्वत को साबित करने के लिये दुनिया वालों के सामने ज़ाहिर फ़रमाये। इस के लिये एक शर्त यह भी है कि वह आम आदत के ख़िलाफ़ हो। जैसे आग का काम जलाना है लेकिन वह न जलाये, समंदर बहता है लेकिन वह थम जाये दरख़्त एक जगह क़ायम रहता है लेकिन वह चलने लगे। मुर्दा जी उठे, या लकड़ी साँप बन जाये वग़ैरा वग़ैरा। चूँकि दुनिया में हर काम की असल वजह अल्लाह तआला की कुदरत और उस का इरादा है इस लिये जिस तरह कुछ काम मुक़र्ररा उसूलों के मातहत मुसलसल हुआ करते हैं इसी तरह अल्लाह तआला की कुदरत के मातहत कुछ काम उन आदी उसूलों से हट कर कुछ दूसरे ग़ैर आदी उसूलों के मातहत भी हो सकते हैं। और जब अल्लाह चाहता है हो जाया करते हैं।

अकसर अम्बिया अलैहिमुस्सलाम को उन की नुबुव्वत के सुबूत के लिये मोजिज़े अता किये गये थे। लेकिन यह मोजिज़ात काफ़िरों के लिये ईमान लाने और यक़ीन करने का सबब कम

---

1. चमत्कार 2. मुसलमानों के अक़ीदे के मुताबिक़ हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का जिस्म के साथ आसमान पर जाना।

ही हुये हैं। मोजिज़ात का ज़ुहूर एक क़िस्म की इतमामे हुज्जत (दलील) का पूरा होना होता है। इसी लिये जब लोगों ने मोजिज़े देखने के बाद भी नबी का इंकार ही किया तो उन पर अल्लाह का अज़ाब नाज़िल हुआ है और उन्हें दुनिया से मिटा दिया गया है। कुरैश के कुफ़्फ़ार भी आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से मोजिज़े तलब (माँगना) करते थे। उन की यह माँग बराबर टाली जा रही थी क्यों कि अल्लाह तआला का तरीक़ा यही रहा है कि अगर लोगों के सामने उन के तलब के जवाब में कोई वाज़ेह (साफ़) मोजिज़ा दिखा दिया जाये तो फिर उन के लिये दो ही रास्ते रह जाते हैं। ईमान या हलाकत। अल्लाह तआला की मशिय्यत (मर्ज़ी) का फ़ैसला अभी उन लोगों के हलाक करने का नहीं था। इसलिये उन का यह मुतालिबा बराबर टाला जा रहा था। लेकिन अब जबकि तक़रीबन 10-11 साल बराबर दावत देते हुये गुज़र चुके थे और क़ौम को समझाने की हद हो गई थी। तो अकसर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और दूसरे मोमिनीन के दिलों में यह ख़्वाहिश पैदा होती थी कि काश कोई निशानी अल्लाह की तरफ़ से ऐसी ज़ाहिर हो जाती जिसे देखं कर यह लोग ईमान ले आते और इस्लाम की सच्चाई के क़ायल हो जाते, लेकिन आप की इस ख़्वाहिश के जवाब में यही कहा जा रहा था कि देखो बेसबरी से काम न लो। जिस तरतीब और जिस ढंग से दावत का काम हम चलवा रहे हैं उसे इसी तरीक़े से सब्र के साथ अंजाम देते रहो। मोजिज़ों से काम लेना होता तो यह काम कभी का हो चुका होता, हम चाहते तो एक-एक काफ़िर के दिल को मोम कर देते, और उस को ज़बरदस्ती हिदायत के रास्ते पर चला देते, लेकिन यह हमारा

तरीक़ा नहीं है। इस तरह न तो इंसान के इरादे और इख़्तियार का इम्तिहान होता है और न वह फ़िक्री और अख़लाक़ी इंक़लाब आता है जिस की बुनियाद पर एक कामियाब मुआशरा बना करता है। ताहम (तो भी) अगर लोगों की बेपरवाही और उन के इंकार की वजह से तुम हालात का मुक़ाबिला सब्र के साथ नहीं कर सकते तो जो तुम्हारा बस चले वह कर लो। ज़मीन में घुस कर या आसमान पर चढ़ कर कोई मोजिज़ा ले आओ।[1]

लेकिन इस का यह मतलब नहीं है कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को मोजिज़ात अता नहीं हुये। आप का सब से बड़ा मोजिज़ा तो ख़ुद क़ुरआन मजीद है जिस के बारे में तफ़सील आइंदा सफ़हात (पन्नों) में अपने मौक़े पर आएगी। इस के अलावा मुनासिब मौक़ों पर आप स० की ज़ात से बेशुमार मोजिज़ात का ज़ुहूर हुआ है। उन में से चाँद का दो टुकड़े हो जाना (शक़्क़ुल-क़मर) और आप का आसमानों की सैर के लिये तशरीफ़ ले जाना (मेराज) बुहत अहम हैं, इन के अलावा बहुत सी पेशीनगोइयाँ, आप की दुआ से पानी का बरसना, लोगों का हिदायतयाब होना, ज़रूरत के वक़्त थोड़ी सी चीज़ का बहुत हो जाना, मरीज़ों का अच्छा हो जाना, पानी जारी हो जाना, वग़ैरा वग़ैरा बेशुमार मोजिज़ात हैं जिन का ज़ुहूर अपने अपने वक़्त पर हुआ है।

शक़्क़ुल-क़मरः– कुफ़्फ़ारे मक्का पर इतमामे हुज्जत करने के लिये आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के मोजिज़ात में से चाँद का दो टुकड़े हो जाना एक बहुत अह्म मोजिज़ा है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि० ने इस वाक़िआ की रिवायत की

1. सूरह इनआम आयत 35

है जो सही बुख़ारी और मुस्लिम वग़ैरा में मज़कूर (ज़िक्र) है। वह इस वाक़िआ के वक़्त मौजूद थे। और उन्हों ने अपनी आँखों से चाँद को दो टुकड़े होते देखा था वह फ़रमाते हैं "हम आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथ मिना में थे कि चाँद दो टुकड़े हो गया। और उस का एक टुकड़ा पहाड़ की तरफ़ चला गया। आप ने फ़रमाया "गवाह रहो"। लेकिन जैसा कि लिखा जा चुका है। यह ज़रूरी नहीं कि मोजिज़ा (चमत्कार) देखने के बाद कुफ़्फ़ार ईमान ले ही आएँ बल्कि होता यही है कि मोजिज़े वही लोग तलब करते हैं जिन के दिलों में इंकार और हटधर्मी कूट कूट कर भरी होती है। और इस तरह वह अपने इंकार के लिये हीले बहाने तलाश करते हैं जिन के दिलों में ईमान कुबूल करने की सलाहियत होती है और जो अग़राज़ और माद्दी मफ़ादात के फंदों में जकड़े हुये नहीं होते उन को तो रसूल की ज़ात और उस की तालीमात ही सब से बढ़ कर मोजिज़ा दिखाई देती हैं। और वह हक़ के कुबूल करने में हमेशा पेशक़दमी करते हैं, चुनाचे चाँद के फट जाने के बाद भी कुफ़्फ़ार ने यही कहा कि "अरे यह तो जादू है। और जादू के ज़ोर से ऐसे काम होते ही आये हैं"। इस तरह उन लोगों को हिदायत तो न हुई अलबत्ता उन के जुर्मों की फेहरिस्त में एक अहम जुर्म यह और बढ़ गया कि उन्हों ने ऐसी खुली हुई निशानी के बाद भी अल्लाह के रसूल को झूटा समझा।

मेराजः- मेराज का अर्थ ऊपर चढ़ने के हैं। चूँकि आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपने एक आसमानी सफ़र के बारे में यह लफ़्ज़ इस्तेमाल फ़रमाया है इस लिये आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के इस सफ़र को जो आप ने

आसमानों का किया मेराज कहते हैं। इस का दूसरा नाम इस्रा भी हैं। इस्रा रातों रात सफ़र करने को कहते हैं, चूँकि यह सफ़र रातों रात हुआ था इस लिये इसे इस्रा भी कहते हैं। कुरआन पाक में यही लफ़्ज़ इस्तेमाल हुआ है।

अम्बिया अलैहिमुस्सलाम को दावत व तबलीग़ और इक़ामते दीन की जो ख़िदमात अंजाम देना होती हैं उन के लिये जिस दरजा पुख़्ता ईमान और यक़ीन की ज़रूरत होती है उस के लिये यह ज़रूरी होता है कि वह जिन अनदेखी हक़ीक़तों पर ईमान लाने की दावत देते हैं उन्हें वह खुद अपनी आँखों से देख लें। क्यों कि उन्हें दुनिया के सामने पूरी कुव्वत और ज़ोर से यह बात कहना होती है, कि तुम महज़ गुमान और क़यास (ख़याल) पर एक चीज़ का इंकार कर रहे हो। हालाँकि हम आँखों देखी हक़ीक़त बयान कर रहे हैं। तुम्हारे पास गुमान है और हमारे पास इल्म, इस लिये अकसर अम्बिया अलैहिमुस्सलाम के सामने फ़रिश्ते ज़ाहिर हुये हैं। उन को आसमान और ज़मीन की हुकूमत का मुशहिदा कराया गया है। दोज़ख़ और जन्नत उन को आँखों से दिखा दी गई है। और मरने के बाद इंसान पर जो हालत गुज़रते हैं वह उन को इसी ज़िन्दगी में दिखा दिये गये हैं, मेराज या इस्रा भी इसी क़िस्म के वाक़िआत में से एक वाक़िआ है। जिस में आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को वह हक़ीक़तें दिखा दी गईं जिन पर एक मोमिन बिला देखे रसूल के फ़रमाने पर ईमान लाता है।

मेराज का वाक़िआ किस तारीख़ को पेश आया, इस बारे में तो रिवायात मुख़्तलिफ़ हैं अलबत्ता तमाम रिवायात को सामने रखने के बाद तारीख़ लिखने वालों ने जिस बात को तरजीह दी

है वह यह है कि यह वाक़िआ हिजरत से तक़रीबन साल डेढ़ साल पहले का है। इस वाक़िआ के बारे में इमाम बुख़ारी और मुस्लिम की रिवायात को सामने रखने के बाद जो मजमूई तफ़सील सामने आती है वह यह है:-

आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक सुब्ह को इरशाद फ़रमाया कि गुज़िश्ता (गुज़रा हुआ) रात मेरे रब ने मुझे बड़ी इज़्ज़त बख़्शी। मैं सो रहा था कि जिबरील अलैहिस्सलाम ने आकर मुझे जगाया। और मुझे हरमे काबा में उठा लाये यहाँ ला कर उन्हों ने मेरा सीना चाक किया और उसे ज़म ज़म के पानी से धोया (ज़मज़म काबा में एक मुतबर्रक (पाक) कुवाँ है) फिर उसे ईमान और हिकमत से भर कर बन्द कर दिया। उस के बाद उन्हों ने मेरी सवारी के लिये एक जानवर पेश किया जो ख़च्चर से कुछ छोटा और सफ़ेद रंग का था। उस का नाम बुराक़ था। यह बहुत तेज़ रफ़्तार था। मैं उस पर सवार हुआ ही था कि अचानक हम बैतुल-मुक़द्दस जा पहुंचे यहाँ बुराक़ मस्जिद के दरवाज़े पर बाँध दिया गया। और मैं मस्जिदे अक़सा में दाख़िल हुआ। दो रकअत नमाज़ पढ़ी। अब जिबरील ने मेरे सामने दो प्याले पेश किये एक शराब से और दूसरा दूध से भरा हुआ था, मैं ने दूध का प्याला क़ुबूल कर लिया, और शराब का वापस कर दिया। जिबरील ने यह देख कर कहा आप ने दूध का प्याला क़ुबूल कर के दीने फ़ितरत को इख़्तियार किया।

उस के बाद आसमान का सफ़र शुरू हुआ। जब हम पहले आसमान (आसमाने दुनिया) तक पहुँचे तो जिबरील अलैहिस्सलाम ने निगेहबान फ़रिश्ते से दरवाज़ा खोलने को कहा। उस ने पूछा तुम्हारे साथ कौन है"? जिबरील ने बताया "यह मुहम्मद हैं"

फ़रिश्ते ने पूछा क्या यह बुलाये गये हैं? जिबरील ने कहा "हाँ बुलाये गये हैं" यह सुन कर फ़रिश्ते ने दरवाज़ा खोलते हुये कहा "ऐसी हस्ती का आना मुबारक हो" जब हम अंदर दाख़िल हुये तो हज़रत आदम अलैहिस्सलाम से मुलाक़ात हुई जिबरील ने मुझ से कहा "यह आप के वालिद (नस्ले इंसानी के मूरिसे आला) आदम अलैहिस्सलाम हैं। आप इन को सलाम कीजिये। मैं ने सलाम किया। उन्हों ने सलाम का जवाब देते हुये फ़रमाया "ख़ुशआमदीद, ऐ सालेह बेटे! और ऐ सालेह नबी!" उस के बाद दूसरे आसमान तक पहुँचे और पहले आसमान की तरह जवाब व सवाल के बाद दरवाज़ा खुला और हम अंदर गये तो वहाँ यहया और ईसा (अलैहिमस्सलाम) से मुलाक़ात हुई। जिबरील नें उन से तआरूफ़ कराया और कहा "आप सलाम कीजिये" मैं ने सलाम किया। दोनों ने जवाब देते हुये फ़रमाया "ख़ुशआमदीद, ऐ सालेह भाई और ऐ सालेह नबी"। फिर तीसरे आसमान तक इसी तरह पहुँचे यहाँ हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम से मुलाक़ात हुई। और पहले की तरह सवाल व जवाब हुआ। चौथे आसमान पर हज़रत इदरीस अलैहिस्सलाम से मुलाक़ात हुई पाँचवें पर हज़रत हारून अलैहिस्सलाम और छठे पर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम मिले। सातवें आसमान पर हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम से मुलाक़ात हुई। उन्हों ने भी सलाम के जवाब में फ़रमाया "ख़ुशआमदीद, ऐ सालेह बेटे और ऐ सालेह नबी"। फिर मुझे सिदरतुल-मुन्तहा तक पहुँचाया गया। यह एक बैरी का पेड़ है इंन्तिहा पर इस पर बेशुमार मलायका जुगनू की तरह चमक रहे थे।

यहाँ आप ने बहुत सी हक़ीक़तों का मुशाहिदा किया और

अल्लाह तआला से हमकलाम भी हुये। अल्लाह तआला ने रात दिन में पचास वक़्त की नमाज़ें आप की उम्मत के लिये फ़र्ज़ कीं। जब आप इन मुशहिदात से फ़ारिग़ हो कर वापस हुये तो फिर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से मुलाक़ात हुई। अन्हों ने पूछा "कहो बारगाहे ख़ुदावंदी से क्या तोहफ़ा लाये?" फ़रमाया "दिन रात में पचास नमाज़ें"। उन्हों ने फ़रमाया "आप की उम्मत इस बार (बोझ) को न उठा सकेगी। इस लिये वापस जाइये और इन्हें कम कराइये" चुनाचे आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम वापस तशरीफ़ ले गये और कमी की दरख़्वास्त की वहाँ से एक हिस्सा कम कर दिया गया। लेकिन हज़रत मूसा ने आप को बार बार भेजा और बराबर कमी कराई। आख़िर में यह तादाद घटते घटते पाँच रह गई उस पर भी अगरचे हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम मुतमईन नहीं थे और मज़ीद कमी कराने को कहते थे लेकिन अब आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि मुझे मज़ीद कुछ कहते हुये शर्म आती है। उस पर अल्लाह तआला की तरफ़ से निदा आई कि अगरचे हम ने नमाज़ों की तादाद पचास से घटा कर पाँच कर दी है लेकिन तुम्हारी उम्मत में जो लोग पाबन्दी के साथ रोज़ाना पाँच वक़्त की नमाज़ अदा करेंगे उन्हें अज्र (इनआम) पचास नमाज़ों का ही दिया जायेगा।

नमाज़ के अलावा इस मौक़े पर बारगाहे इलाही से दो तोहफ़े और भी हासिल हुये एक तो सूरह बक़रा की आख़िरी आयतें जिन में इस्लाम के अक़ाइद और ईमान की तकमील का बयान है और यह बशारत है कि अब मुसीबतों का दौर ख़त्म होने वाला है। दूसरे यह ख़ुशख़बरी कि उम्मते मुहम्मदी स° में से जो कोई शिर्क से बचा रहेगा उस की मग़फ़िरत हो जायेगी।

इस सफ़र में आप ने जन्नत और दोज़ख़ को भी अपनी आँखों से देखा और मरने के बाद आमाल के लिहाज़ से जिस जिस क़िस्म के हालात से लोगों को गुज़रना होता है उस के भी चन्द मनाज़िर आप के सामने पेश किये गये।

आसमानों से वापस होने के बाद जब आप फिर बैतुल-मुक़द्दस तशरीफ़ लाये तो देखा यहाँ अम्बिया अलैहिमुस्सलाम का मजमअ (भीड़) है। आप ने नमाज़ पढ़ाई। और सब ने आप के पीछे नमाज़ अदा की इस के बाद आप अपने मक़ाम पर वापस तशरीफ़ ले आये और सुब्ह को उसी मक़ाम से बेदार हुये।

मेराज की अहमियत और आइंदा के लिये इशारे:- सुब्ह को जब आप ने यह वाक़िआ बयान फ़रमाया तो कुफ़्फ़ारे क़ुरैश में जो लोग मुख़ालिफ़ थे उन्हों ने आप को झूठा कहा (नऊज़बिल्लाह) और जिन लोगों के दिलों में आप की सच्चाई और सदाक़त का यक़ीन था। उन्हों ने हर्फ़ हर्फ़ की तसदीक़ की और कहा कि जब आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं तो यह सब वाक़िआत दुरूस्त ही हैं। इस तरह मेराज का यह वाक़िआ एक तरफ़ तो लोगों के ईमान और रिसालत की तसदीक़ का इम्तिहान था। दूसरी तरफ़ ख़ुद आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को ग़ैब की बेशुमार हक़ीक़तों के मुशाहिदे का ज़रिया, साथ ही साथ यह उस आने वाले इंक़लाब के लिये एक इशारा था जिस से इस्लामी तहरीक को जल्द ही दोचार होना था। इस इशारे की तफ़सीलात क़ुरआन पाक की सूरह बनी इसराईल में मिलती हैं जिस में मेराज का बयान है। इस सूरत के मज़ामीन में जो खुले खुले इशारे मिलते हैं वह यह हैं:-

यहूद की मअज़ूली (बरतरफ़ी):- बनी इसराईल अब तक

अल्लाह तआला के दीन के वारिस थे और इस ख़िदमत पर मामूर कि वह दुनिया को ख़ुदाई पैग़ाम (इस्लाम) से रोशनास करायें लेकिन उन्हों ने इस ख़िदमत को अंजाम नहीं दिया। बल्कि खुद बेशुमार बुराइयों का शिकार हो गये और इस क़ाबिल न रहे कि अल्लाह के दीन की ख़िदमत बजा ला सकें। लिहाज़ा अब यह ख़िदमत बनी इसराईल को सुपुर्द करने का फ़ैसला कर दिया गया। और आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को इस ख़ानदान में मबऊस (भेजा गया) किया गया। अब तक बनी इसराईल से बराहेरास्त ख़िताब नहीं किया गया था। अब सूरह बनी इसराईल में उन से कहा गया कि अब तक जो ग़लतियाँ तुम कर चुके सो कर चुके तुम को अब से पहले दो बार आज़माया जा चुका है लेकिन तुम ने अपनी हालत को ठीक नहीं किया अब इस नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की बेअसत (भेजने) के बाद फिर तुम्हें मौक़ा मिल रहा है। अगर तुम उन की पैरवी (फ़रमाबरदारी) करोगे तो फिर तरक़्क़ी की राह पर क़दम बढ़ा सकोगे। मक्के की इन्तिहाई मज़लूमाना और परेशानी से भरी हुई ज़िन्दगी में यह इशारा एक बहुत बड़ी बशारत थी जो आगे चल कर बिल्कुल ठीक साबित हुई।

कुफ़्फ़ारे मक्का को तंबीहः– कुफ़्फ़ारे मक्का के मज़ालिम और उन की हटधर्मी की इन्तिहा हो चुकी थी और वह बार बार कहते थे कि अगर यह अल्लाह के रसूल हैं तो हमारे इंकार करने पर हम पर वह अज़ाब क्यों नहीं आता जिस से यह हमें डराते हैं। इस के जवाब में उन्हें बताया गया कि अल्लाह तआला का तरीक़ा यह है कि जब तक किसी क़ौम में अल्लाह का रसूल न आये उस वक़्त तक उस पर अज़ाब नहीं आता।

जब अल्लाह का रसूल आता है तो क़ौम के दौलतमंद और ऊँचे तबक़े के लोग उस की दावते हक़ की जड़ काटने के लिये कमर बाँध लेते हैं। और क़ौम के आम लोग उन का साथ देने के लिये तयार हो जाते हैं। सिवाये कुछ ऐसे लोगों के जिन में हक़ के कुबूल करने की सलाहियत होती है और जो आगे बढ़ कर हक़ को कुबूल कर लेते हैं उस वक़्त उन दोनों गिरोहों में कशमकश शुरू हो जाती है। और फिर अल्लाह की मदद आती है उस मदद का एक वक़्त मुअय्यन (तैय) होता है। अलबत्ता इंसान चूँकि जल्दबाज़ वाक़े हुआ है इस लिये वह कभी ऐसी चीज़ को भी ख़ैर समझ कर तलब करने लगता है जो दरअसल उस के लिये ख़ैर नहीं होती बल्कि उस के लिये शर होती है और उसे यह ध्यान नहीं आता कि अल्लाह तआला के सारे काम अपने अपने औक़ात के एतबार से बंधे हुये हैं। दिन और रात को ही देखो, अल्लाह तआला की निशानियाँ हैं और एक लगे बंधे निज़ाम के तहत एक के बाद एक आते हैं पिछली तारीख़ पर नज़र करो। देखो नूह के बाद से ले कर उस वक़्त तक कितनी क़ौमों को हलाक कर दिया गया ख़ुदा अपने बन्दों के हाल से पूरी तरह बाख़बर है। और उन्हें उन के इसतेहक़ाक़ (सज़ावार होना) के एतबार से बदला दिया करता है, लिहाज़ा कुफ़्फ़ारे मक्का को भी यह बात समझ लेनी चाहिये कि अब वह जो सुलूक अल्लाह के रसूल की दावत के मुक़ाबिले में इख़्तियार करेंगे उसी के एतबार से उन के साथ भी मुआमला किया जायेगा और अब फ़ैसला करने का वक़्त क़रीब ही है।

इस्लामी मुआशरे की बुनियादें:– अब वह वक़्त क़रीब आ चुका था जब इस्लाम का मज़लूमियत का दौर ख़त्म होने वाला

था और जल्द ही एक ऐसे मुआशरे (समाज) की तशकील होने वाली थी जिस की बुनियादें इस्लामी उसूलों पर हों। चुनाचे इस इस्लामी निज़ामे ज़िन्दगी के लिये बुनियादी उसूलों का तोहफ़ा भी इसी मेराज के वाक़िआ के साथ मुतअल्लिक़ किया गया यही बुनियादी उसूल आइंदा इस्लामी निज़ामे ज़िन्दगी के लिये रहनुमा उसूलों की हैसियत से काम आये वह उसूल यह थेः-

(1) अल्लाह के साथ किसी दूसरे को इलाह न बनाया जाये। इबादत, ज़िन्दगी, इताअत और फ़रमाबरदारी के हुकूक़ में किसी को उस का साझी न ठहराया जाये।

(2) माँ बाप की इज़्ज़त और इताअत की जाये। (अलबत्ता जहाँ उन की इताअत ख़ुदा की इताअत से टकराये वहाँ उन की इताअत न की जाये)

(3) रिश्तादारों, मिसकीनों और मुसाफ़िरों के हुकूक़ अदा किये जायें। सोसाइटी में एक इंसान पर दूसरे इंसान के जो हुकूक़ हैं उन की तरफ़ से ग़फ़लत न बरती जाये। उन्हें ठीक ठीक अदा किया जाये उस के बग़ैर किसी तमद्दुन की बुनियाद दुरूस्त नहीं हो सकती।

(4) फ़ुज़ूल ख़र्ची न की जाये। ख़ुदा की बख़्शी हुई नेमतों को ग़लत तरीक़े पर ख़र्च करना शैतानी काम है जिस सोसाइटी में लोग अंधाधुन्द ख़र्च करने लगें या बिल्कुल हाथ सुकेड़ कर माया के साँप बन बैठें वह कभी खुशहाल नहीं हो सकती। माल के ख़र्च करने और रोक कर रखने में एतदाल (बराबरी) की राह इख़्तियार की जाये।

(5) मुफ़लिसी (ग़रीबी) के डर से औलाद को क़त्ल न करो। असल में रोज़ी पहुँचाना ख़ुदा का काम है और वह इस का

इन्तिज़ाम करता है। तुम इस डर से कि कल क्या खाएँगे, अपनी नसलों को ख़त्म न करो, यह बहुत बड़ा गुनाह है और समाज के लिये ख़ुदकशी के हममअने है।

(6) ज़िना के क़रीब भी न जाओ। सिर्फ़ यही नहीं कि इस गंदे काम से बचते रहो, बल्कि उन तमाम हरकतों को भी ख़त्म करो जो इस नापाक काम पर उकसाते हैं। जो सोसाइटी (समाज) इस लानत से पाक न होगी वह ख़ुद अपनी जड़ काटेगी और बहुत जल्द तबाही से दोचार होगी।

(7) नाहक़ किसी की जान न मारो। जिस सोसाइटी में लोगों की जान महफ़ूज़ न हो वह कभी ख़ुशहाल नहीं हो सकता। अम्न की हालत के बग़ैर कोई तमद्दुन तरक़्क़ी नहीं कर सकता। इस लिये सब से पहले लोगों की जान और माल के तहफ़्फ़ुज़ (सुरक्षा) का इन्तिज़ाम ज़रूरी है।

(8) यतीम से अच्छा सुलूक करो। कमज़ोर या ऐसे लोग जो अपने हक़ की ख़ुद हिफ़ाज़त नहीं कर सकते। मदद करने के लायक़ हैं। जिस सोसाइटी में ऐसे कमज़ोरों के हुक़ुक़ का तहफ़्फ़ुज़ न हो वह कभी तरक़्क़ी नहीं कर सकती।

(9) अपना अहद पूरा करो। अहद के बारे में पूछ गछ होगी। यहाँ लोगों के आपस के क़ौल व क़रार और वादे भी मुराद हैं। और वह अहद भी मुराद है जो एक बन्द-ए-मोमिन ईमान लाते वक़्त अपने ख़ुदा से करता है।

(10) नाप तौल में अपने पैमाने और तराज़ू को ठीक रखो लेन देन में मुआमलात की दुरूस्ती और एक दूसरे के हुक़ूक़ का तहफ़्फ़ुज़ समाज के अम्न व सुकून के लिये इन्तिहाई ज़रूरी है, जहाँ लोगों को एक दूसरे पर एतमाद न हो और लोग दूसरों के

हुकूक़ ग़सब करने (नाजाइज़ क़ब्ज़ों) के दरपै हों वहाँ कभी एक दूसरे पर एतमाद और ख़ुशगवारी की फ़िज़ा (रौनक़) पैदा नहीं हो सकती।

(11) जिस बात का इल्म न हो सके उस के पीछे न पड़ो। बग़ैर किसी इल्म के नामालूम बातों की कुरेद और बिला वजह गुमान और तख़मीनों पर राय क़ायम कर लेने से मुआमलात हमेशा ख़राब होते हैं हर अच्छी सोसाइटी को इस ऐब से पाक होना चाहिये और इंसान को यह ख़याल रखना चाहिये कि उस के कान, आँख और दिल सब से बाज़ पुर्स (पूछ गछ) होगी।

(12) ज़मीन पर मग़रूर बन कर न चलो घमंड और तकब्बुर इंसान को बदतरीन अख़लाक़ कुबूल करने पर उभारता है। और उस ऐब की वजह से इंसान सोसाइटी के लिये इन्तिहाई मुज़िर (नुक़सान वाला) साबित होता है। बाहमी तअल्लुक़ात की ख़ुशगवारी के लिये ज़रूरी है कि लोग दूसरे लोगों को अपने मुक़ाबिले में ज़लील और कम दरजा न समझें और उन के साथ ग़ैर इंसानी सुलूक न करें।

हिजरत के लिये इशारेः- अल्लाह तआला का यह तरीक़ा रहा है कि जब वह किसी क़ौम में अपना रसूल भेजता है तो एक अरसा तक लोगों को मौक़ा दिया जाता है कि वह रसूल की दावत को सुनें, समझें और कुबूल करें। इस दावत के नतीजे में कुछ लोग तो उसे कुबूल कर लेते हैं और ज़्यादा तर लोग जो माद्दी अग़राज़, बाप दादा की अंधी तक़लीद और नफ़्स की ख़्वाहिशात में फंसे होते हैं वह इस दावत को रद कर देते हैं और उस की मुख़ालिफ़त पर कमर बाँध लेते हैं। आख़िरकार एक वक़्त वह आता है जब यह अंदाज़ा होता है कि क़ौम में जो

लोग सलाहियत रखते थे उन्हों ने दावत को कुबूल कर लिया और अब उस में ऐसे लोग बाक़ी नहीं रह गये जो इस दावत पर कान धरें, और इस पर ग़ौर करें।

ऐसे मरहले में क़ौम नबी से मोजिज़े (चमत्कार) भी तलब करती है और अकसर उस क़ौम के सामने मोजिज़े पेश भी कर दिये जाते हैं। चुनाचे खुद आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से भी इस दौर में मोजिज़े तलब किये गये और आप की ज़ात से मोजिज़ों का जुहूर हुआ। लेकिन जब उस सब के बावजूद इंकार करने वाले इंकार पर क़ायम रहे तो यह फ़ैसला हो गया कि अब नबी को इस क़ौम के दिर्मियान से चला जाना चाहिये ताकि क़ौम पर अज़ाब आये यह अज़ाब कभी तो आसमान और ज़मीन की किसी फ़ितरी कुव्वत मिसाल के तौर पर ज़लज़ला, पानी, हवा वग़ैरा के ज़रिया आता है, और कभी मोमिनीन के हाथों इस अज़ाब की तकमील होती है। चुनाचे इसी सूरह बनी इसराईल में अल्लाह तआला ने अपने इस तरीक़े की वज़ाहत फ़रमाई है। और साफ़ साफ़ फ़रमा दिया है कि यह लोग अपनी शिक़ावत(बदबख़्ती) की इन्तिहा पर पहुँच कर आप को बहुत जल्द इस बस्ती (मक्का) से निकलने पर मजबूर कर देंगे। अगर ऐसा हुआ तो फिर तुम्हारे बाद भी यहाँ इतमीनान के साथ रह न सकेंगे। तुम से पहले जिने रसूल हम ने भेजे हैं, सब के साथ यही दसतूर रहा है और अब भी इस में कोई तबदीली न होगी।

नमाज़े तहज्जुद की अहमियतः– साथ ही साथ इन हालत से निमटने के लिये नमाज़ और ख़ास तौर पर तहज्जुद का एहतमाम करने की हिदायत की और हिजरत की दुआ की तलक़ीन फ़रमाई कि ऐ पैग़म्बर अपने रब से यह दुआ माँगों "ऐ

रब मुझे अच्छी जगह पहुँचाइयो, और यहाँ से अच्छी तरह निकालियो, और दुश्मनों पर अपनी तरफ़ से फतेह व नुसरत दीजियो" उस के बाद यह बशारत भी दी गई कि हक़ को ग़लबा मिलना है और बातिल को मिटना है बातिल मिटने ही के लिये होता है, शर्त यह है कि हक़ मैदान में मौजूद हो।

उस के बाद कुफ़्फ़ारे मक्का के इन तमाम एतराज़ात के जवाबात भी दिये गये जो वह हट धर्मी की बुनियाद पर किया करते थे और इस तरह उन पर हर तरह हुज्जत पूरी की गई। और आख़िर में इबरत के लिये हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के वाक़िआत का तज़करा (ज़िक्र) भी किया गया।

इस दौर में दावत की ख़ुसूसियात:– इस दौर में जो कुरआन नाज़िल हो रहा था हालात की मुनासिबत से उस की कुछ खुसूसियात हसब ज़ैल हैं:–

1. तवक्कुल अलल्लाह और सब्र:– इंसान की फ़ितरत है कि जब वह किसी काम के लिये जद्दोजहद करता है और नताइज उस की उम्मीद के मुताबिक़ बरामद नहीं होते तो उस पर मायूसी तारी होने लगती है। दावते हक़ के अलमबरदारों के लिये यही मरहला सब से ज़्यादा नाज़ुक होता है, अगर वह ख़ुदा ना ख़्वास्ता मायूसी का शिकार हो जायें तो यह उन की और दावत की सब से बड़ी नाकामी होती है। इस मरहले में साबित क़दम रहने और नताइज को बिल्कुल ख़ुदा के तवक्कुल पर छोड़ कर लगातार काम किये जाने के लिये बड़े मज़बूत ईमान की ज़रूरत होती है। इस आख़िरी दौर में ख़ुसूसियत के साथ अल्लाह तआला ने इस बारे में हिदायात नाज़िल फ़रमाईं। तक़रीबन 12 साल की लगातार जद्दोजहद के जो नताइज सामने

थे वह एक आम नज़र रखने वाले इंसान के लिये हौसला शिकन हो सकते थे और इतनी तवील (लम्बी) मुद्दत के बाद भी जिन परेशानियों का सामना करना पड़ रहा था वह भी कुछ कम सब्र आज़मा नहीं थीं इसी लिये मोमिनों के दिलों को मज़बूत करने और उन्हें राहे हक़ पर जमाने के लिये इस दौर में खुसूसियत से तवज्जुह की गई।

इस बारे में सूरह अंकबूत के मज़ामीन एक अच्छी मिसाल हैं। इस में मोमिनों को साफ़ साफ़ बता दिया गया कि इब्तिला (मुसीबतें) और आज़माइशें तो इस राह की लाज़िमी मंज़िलें हैं, जिस पर चलने का तुम ने फ़ैसला किया है। यही वह कसोटी है जिस पर कसने के बाद ही दाव-ए-ईमान में सच्चे और झूटे लोगों में तमीज़ हो सकती है। लेकिन मोमिनों की इस आज़माइश का मतलब यह नहीं है कि काफ़िरों को हक़ीक़ी मअनों में कोई ग़लबा हासिल हो रहा है उन्हें भी यह समझ लेना चाहिये कि खुदा के मुक़ाबिले में वह बाज़ी नहीं ले जा सकते आख़िर में हक़ का ही बोलबाला हो कर रहेगा बशरते कि हक़ पर जमने वाले अपने सब्र और इस्तिक़ामत से अपने को अल्लाह की इमदाद का मुसतहिक़ साबित कर दें। मोमिनों को बताया गया कि इस राह में कितनी ही गो न गों रूकावटें आती रहें। लेकिन उन को किसी से बददिल होने की ज़रूरत नहीं। उन से पहले जिन अल्लाह के बन्दों ने दावते इस्लामी का अलम (झंडा) बुलंद किया उन को भी ऐसे ही हालात से गुज़रना पड़ा है। हज़रत नूह अलैहिस्सलाम का वाक़िया याद दिला कर बताया गया कि उन्हों ने साढ़े नौ सौ साल तक कैसे सब्र और इस्तिक़लाल के साथ अपनी क़ौम की मुख़ालिफ़त बरदाश्त की, इसी तरह हज़रत

इब्राहीम, हज़रत लूत, हज़रत शुऐब, हज़रत सालेह, हज़रत मूसा अलैहिमुस्सलाम को ऐसे ही हालात से दोचार होना पड़ा। लेकिन आख़िरकार हक़ की फ़तेह हुई और बातिल को मैदान से भागना पड़ा।

2. कुरआन एक मोजिज़ा है:- इस से पहले ज़िक्र किया जा चुका है कि काफ़िरों के मोजिज़ा तलब करने पर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और दूसरे मोमिनीन के दिलों में यह ख़्वाहिश पैदा होती थी कि काश कोई ऐसा मोजिज़ा ज़ाहिर हो जाता जिसे देख कर यह लोग ईमान ले आते। इस ख़्वाहिश के जवाब में अल्लाह तआला ने जो हिदायत फ़रमाई उस का ज़िक्र भी इस से पहले आ चुका है इस मौक़ा पर अल्लाह तआला ने अपने आख़िरी नबी स० के सब से बड़े मोजिज़े की साफ़ साफ़ निशानदही की, और लोगों को बताया कि तुम जो मोजिज़ात तलब करते हो तुम्हें चाहिये कि पहले उस मोजिज़े को तो देखो जो रहती दुनिया तक इंसानों के लिये मोजिज़ा हैं और जिस में हर अक़्ल और समझ रखने वाले इंसान की रहनुमाई का सामान है यह मोजिज़ा कुरआन है। हक़ यह है कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को जितने भी मोजिज़े अता हुए उन में सब से बड़ा मोजिज़ा कुरआन ही है।

इस दौर की नाज़िल शुदा सूरह अंकबूत में बताया गया है कि उन मुख़ातबों में से कौन नहीं जानता कि आप ने नुबुव्वत से पहले न तो किताबी इल्म हासिल किया है, और न आप लिखना पढ़ना ही जानते हैं लेकिन इस के बावजूद भी आप जो कलाम पेश कर रहे हैं वह इतना बुलंद और हिकमतों से भरा हुआ है, कि उन में से कोई बड़े से बड़ा आलिम भी उस की

मिसाल आज तक न पेश कर सका। न कि ऐसा कलाम उन के सामने एक अनपढ़ शख़्स की जुबान से पेश हो रहा है इस के बावजूद यह लोग मोजिज़ा तलब करते हैं। कह दीजिये कि मोजिज़ा का ज़ाहिर होना या न होना यह तो मेरे रब के हुक्म में है। मैं तो तुम्हें तुम्हारे अंजाम से साफ़ साफ़ डराने वाला हूँ। अलबत्ता तुम को यह ग़ौर करना चाहिये कि क्या मेरी नुबुव्वत के सुबूत के लिये वह आयाते इलाही काफ़ी नहीं हैं जो मैं तुम को सुनाता हूँ तुम ग़ौर करो तो तम्हें मालूम हो जाएगा कि यह आयात तो सरासर रहमत और नसीहत हैं उन लोगों के लिये जिन के दिल ईमान की दौलत से मालामाल होने के लिये अपने अन्दर सलाहियत रखते हों।

कुरआन पाक को ख़ुद आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने सब से बड़ा मोजिज़ा फ़रमाया है। आप ने फ़रमाया पैग़म्बरों में से हर पैग़म्बर को अल्लाह तआला ने इस क़द्र मोजिज़े इनायत किये जिन को देख कर लोग ईमान लाये लेकिन जो मोजिज़े मुझे मरहमत (अता) हुआ वह वह्ी (कुरआन) है जिस को अल्लाह तआला ने मुझ पर उतारा, इस लिये मैं उम्मीद करता हूँ कि क़यामत के दिन मेरे पैरुओं (उपासना करने वालों) की तादाद सब से ज़्यादा होगी"। कुरआन पाक एक ऐसा मोजिज़ा है जो दायमी (हमेशा रहने वाला) है दूसरे मोजिज़ात वक़्ती थे, और वह ख़त्म हो गये, लेकिन यह मोजिज़ा क़यामत तक रहेगा और लोगों को अपनी तरफ़ खींचता रहेगा। कुरआन पाक का नज़्मे कलाम, उस की फ़साहत व बलाग़त, उस में ऐसी ग़ैब की ख़ब्रों और पेशीनगोइयों का ज़िक्र जिन तक कोई इंसानी ज़हन नहीं पहुंच सकता था। इस की कुव्वते तासीर, इस के

अहकामात और तालीमात का ऐसा मुफ़ीद होना कि आज तक इंसानी सोसाइटी के लिये कोई दूसरा इतना कारआमद निज़ामे हयात पेश न हो सका और बावजूद मौज़ू की इतनी वुस्अत के उस का हर क़िस्म के तज़ाद (फ़र्क़) और इख़्तिलाफ़े बयानी से महफ़ूज़ होना और फिर सब से ज़्यादा यह कि यह सब कलाम एक ऐसे शख़्स की ज़ुबान से अदा होना जो इस्तिलाही मअनों में बिल्कुल अनपढ़ था। यह सब बातें कुरआन पाक के मोजिज़ा होने पर ऐसी दलीलें हैं जिन के होते हुये आज भी नुबुव्वते मुहम्मदी स० पर दिलों को इतमीनान हो सकता है और होता है।

3. दो टोक बातः– इस दौर के नाज़िल शुदा कलाम की एक खुसूसियत यह है कि अब कुफ़्फ़ार से बात बिल्कुल साफ़-साफ़ और दो टोक कही जाने लगी जिस का अंदाज़ यह था कि अब समझाने और बताने की हद हो गई। मानना है तो अब भी मौक़ा है मान लो नहीं तो अपने इंकार और ज़िद के नताइज भुगतने के लिये तयार रहो।

चुनाचे कहा गया[1] कि मैं तो अपने रब की तरफ़ से आई हुई एक रोशन दलील पर क़ायम हूँ लेकिन तुम उसे झुटला रहे हो और मुतालिबा कर रहे हो कि इस इंकार की पादाश (जुर्म) में जो अज़ाब आना है वह आ जाये लेकिन मैं तुम्हें बताये देता हूँ कि मेरे क़ब्ज़े में वह चीज़ नहीं है जिस की तुम जल्दी मचा रहे हो। इस का फ़ैसला ख़ुदा के हाथ है। अगर मेरे क़ब्ज़े की बात होती तो मुआमला कभी का चुका दिया गया होता। ग़ैब का इल्म अल्लाह को है वह जानता है कि किस काम के लिये कौन सा वक़्त मुनासिब है, वह इस बात की ताक़त रखता है कि जब

---

1. सूरह इनआम आयात 60 ता 70 और 134 व 135 के पेशे नज़र

चाहे तुम्हारे ऊपर अज़ाब भेज दे। फिर इस सिलसिले में आगे चल कर हिदायत दी गई कि जिन लोगों ने दीन के मुआमले को एक खेल समझ रखा है और वह दुनिया की ज़िन्दगी में मस्त हैं उन को उन के हाल पर छोड़ दो अलबत्ता उन को यह कुरआन बराबर सुनाते रहो। इस पर भी न मानें तो उन से कह दो कि लोगो! तुम अपनी जगह पर वह अमल करते रहो, जो तुम करना चाहते हो, मैं भी अपनी जगह अमल कर रहा हूँ। नतीजा जल्द ही तुम्हारे सामने आ जाएगा कि कौन सीधे रास्ते पर था।

यह एक मिसाल है इस क़िस्म के तरज़े कलाम की। इस के अलावा भी इस दौर की वह्ी में यह अंदाज़ साफ़ तौर पर सामने आता है और यह गोया एलान था इस बात का कि अब बात किसी फ़ैसलाकुन मरहले में दाख़िल होने वाली है।

4. हिजरत के लिये तयारी:- इस के अलावा हिजरत के लिये साफ़-साफ़ इशारे भी इस दौर के कलाम में बार-बार सामने आते हैं। चुनाचे सूरह अंकबूत में हिदायत दी गई कि ऐ मेरे बन्दो! बन्दगी तो मेरी ही करते रहना अगर मेरी बन्दगी की वजह से तुम्हारे अपने वतन की ज़मीन तुम्हारे लिये तंग हो गई है, तो इस की परवा न करना, मेरी ज़मीन बहुत वसीअ (बड़ी) है मुराद यह कि चाहे घर बार छूट जाये लेकिन मेरी बन्दगी का रिश्ता न टूटने पाये। ज़्यादा से ज़्यादा जो ख़तरा किसी जानदार को हो सकता है वह मौत का ख़तरा है तो यक़ीन रखो कि मरना तो हर एक को है और फिर पलट कर मेरे ही पास आना है तो अगर मेरी ही राह में मौत आये तो फिर फ़िक्र किस बात की है जो कोई ईमान और अमले सालेह की पूँजी ले कर आएगा उसे ऐसे बाग़ों में आराम से रखा जाएगा जिस के

नीचे नहरें जारी होंगी और जहाँ वह हमेशा रहेगा। यह कैसा अच्छा बदला है अमल करने वालों के लिये ऐसे अमल करने वाले जो सख़्त से सख़्त हालात में भी अल्लाह के दीन की राह पर जमे रहे और जिन्हों नें अपनी हर जद्दोजहद करते वक़्त भरोसा अपने रब पर ही रखा।

फिर यह बताया गया कि अल्लाह की राह में घर बार छोड़ने का दूसारा अंदेशा मआशी (रोज़ी) बदहाली का है। इस बारे में उन के इस ईमान को मज़बूत किया गया कि दरअसल रिज़्क़ का मुआमला बिल्कुल अल्लाह के हाथ में है, देखो ज़मीन पर चलने वाले कितने ही जानदार हैं जो अपना रिज़्क़ अपने साथ उठाये-उठाये नहीं फिरते लेकिन अल्लाह उन का रिज़्क़ मुहय्या करता है और उन्हें खाने को देता है तो आख़िर तुम ही उस की रज़्ज़ाक़ियत से ऐसे मायूस क्यों होते हो कि वह तुम्हें रिज़्क़ न देगा।

इस के अलावा इस दौर की एक और सूरत बनी इसराईल में हिजरत के लिये दुआ भी सिखाई गई, कहा गया कि दुआ यूँ माँगो कि "ऐ रब! मुझे अच्छी जगह पहुँचाइयो, और (मक्का) से अच्छी तरह निकालियो, और दुश्मनों पर अपनी तरफ़ से फ़तह व नुस्रत दीजियो। और ऐ पैग़म्बर एलान कर दो कि हक़ आ गया और बातिल मिट गया। बातिल को मिट ही जाना था"।

ग़र्ज़ यह कि यह और इसी तरह के दूसरे बहुत से ऐसे इशारात हैं जो इस दौर के कलाम में मिलते हैं जिन में एक तरफ़ तो इस आने वाले इंक़लाब की तरफ़ इशारे किये जा रहे थे और दूसरी तरफ़ इन हालात से निमटने के लिये जिस तयारी की ज़रूरत थी उस पर बार-बार मुतवज्जेह किया जा रहा था।

आख़िरत का ज़िन्दा यक़ीन दुनिया की नेमतों की आरज़ू का दिलों से खोद खोद कर निकाल फेंकना, तौहीदे ख़ालिस और उस के तक़ाज़ों का अच्छी तरह ज़हननशीन करना, अल्लाह के अलावा किसी दूसरे सहारे को दिल में कोई जगह न देना, सिर्फ़ उसी की ज़ात पर मुकम्मल भरोसा करना, जो कुछ हिदायात अल्लाह की तरफ़ से नाज़िल हो रही थीं, उन को बिला कुछ घटाये बढ़ाये बराबर पेश करते रहना और इन सब कामों के वास्ते तक़्वियत हासिल करने के लिये नमाज़ क़ायम करना और उस पर पूरी-पूरी तवज्जोह देना, यह और इसी तरह की दूसरी बुनियादें थीं जिन पर मुसलमानों की तरबियत की जा रही थी और साथ ही साथ उन्हें इन सख़्त हालात में भी दीन की तबलीग़ करने के लिये ज़रूरी हिदायात दी जा रही थीं।

सातवाँ बाब

हिजरत

इस्लामी इसतलाह में सिर्फ़ अल्लाह के दीन की ख़ातिर अपने वतन को छोड़ कर किसी ऐसी दूसरी जगह चला जाना जहाँ दीन के तक़ाज़े पूरे हो सकें, हिजरत कहलाता है। मुसलमान के लिये जायज़ नहीं है कि वह महज़ कारोबार, घर और जायदाद या दोस्त व रिश्तेदारों की ख़ातिर किसी ऐसी जगह से चिमटा रहे, जहाँ उस के लिये इस्लामी ज़िन्दगी बसर करने और अल्लाह के दीन की दावत देने की आज़ादी न हो।

यहाँ यह बात समझ लेनी चाहिये कि जो शख़्स अल्लाह के दीन पर ईमान लाया हो उस के लिये किसी निज़ामे कुफ़्र के तहत ज़िन्दगी बसर करना सिर्फ़ दो ही सूरतों में जायज़ हो सकता है, एक तो यह कि वह इस सरज़मीन में इस्लाम को ग़ालिब करने और निज़ामे कुफ़्र को निज़ामे इस्लाम में तबदील करने की जद्दोजहद करता रहे जिस तरह कि अब तक मुसलमान मक्का में रह कर बराबर कर रहे थे और इस काम के मुक़ाबिले में हर क़िस्म की सख़्तियाँ झेल रहे थे। दूसरे यह कि वह दरहक़ीक़त वहाँ से निकलने की कोई राह न पाता हो। या इस के लिये कोई ऐसी जगह मयस्सर न हो जहाँ वह इस्लामी ज़िन्दगी गुज़ारने और निज़ामे इस्लाम को बरपा करने

की जद्दोजहद कर सके।[1] लेकिन जब कोई ऐसा मक़ाम मयस्सर आ जाये जहाँ दीन के तक़ाज़े पूरे हो सकें, जैसा कि अब मदीना की सरज़मीन से उम्मीदें क़ायम हो चुकी थीं, तो ऐसी सूरत में सिर्फ़ वही लोग क़ाबिले मआफ़ी होते हैं जो इन्तिहाई माज़ूर और मजबूर हों और किसी तरह सफ़र के क़ाबिल न हों ख़्वाह बीमारी की वजह से या मुफ़लिसी की बिना पर।

आम मुसलमानों की मदीना को हिजरतः– मदीना में जब इस्लाम की इशाअत एक हद तक हो चुकी तो अब आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने आम मुसलमानों को जो मक्के में काफ़िरों के हाथों सताये जा रहे थे इस बात की इजाज़त दी कि वह मदीना को हिजरत कर जाएँ, यह देख कर काफ़िरों ने मुसलमानों को हिजरत से रोकने के लिये मज़ालिम और बढ़ा दिये और हर तरह कोशिश की, कि यह लोग उन के चंगुल से निकल कर जा भी न सकें। लेकिन मुसलमानों ने अपने माल, जान और औलाद को ख़तरे में डाल कर अल्लाह के दीन की ख़ातिर अपने वतन को छोड़ देना ही पसन्द किया और कोई लालच और दबाव उन्हें उन के इरादे से न रोक सका। रफ़्ता रफ़्ता बहुत से सहाबा रज़ि० मदीना तशरीफ़ ले गये। और आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथ हज़रत अबू बक्र रज़ि० और हज़रत अली रज़ि० रह गये या

---

1. यह बात पेशे नज़र रहे कि हिजरत के लिये किसी दारूल-इस्लाम का मौजूद होना शर्त नहीं है। मुसलमान के लिये अहकामे कुफ़्र की इताअत से बचने के लिये इतना ही काफ़ी है कि वह किसी जंगल और किसी पहाड़ में जा कर ज़िन्दगी बसर कर सके। मुसलमान की नज़र में हर चीज़ के बचाने से ज़्यादा दीन के बचाने की अहमियत है।

कुछ ऐसे मुसलमान रह गये जो मुफ़लिसी (ग़रीबी) की वजह से मजबूर थे और सफ़र नही कर सकते थे।

आँहज़रत स० के क़त्ल का मश्वराः– जब नुबुव्वत का तेरहवाँ साल शुरू हुआ तो उस वक़्त तक बहुत से सहाबा रज़ि० हिजरत कर के मदीना पहुँच चुक थे। अब कुरैश ने देखा की मुसलमान तो मदीना में जा कर ताक़त पकड़ते जा रहे हैं, और वहाँ इस्लाम फैलता जा रहा है तो उन्हें बड़ी तशवीश हुई और उन्हों ने इस्लाम को आख़िरी तौर पर ख़त्म करने के लिये तदबीरें सोचना शुरू कीं। आम क़ौमी मसाइल पर सोच बिचार करने के लिये दारुन-नदवा या मशवरे की एक जगह मुक़र्रर थी। वहाँ हर क़बीले के बड़े बड़े सरदार जमा हुये और यह सोचना शुरू किया कि अब इस तहरीक को ख़त्म करने के लिये क्या किया जाये। कुछ लोगों ने मशवरा दिया कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को ज़ंजीरों से जकड़ कर किसी मकान में बन्द कर दिया जाये। लेकिन यह मशवरा इस लिये रद कर दिया गया कि कुछ लोगों ने कहा कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के साथी उन को हम से छुड़ा ले जाएँगे और हो सकता है कि हमें उन के मुक़ाबिले में शकिस्त हो जाये। एक मशवरा यह दिया गया कि उन्हें जला वतन (वतन से निकाल देना) कर दिया जाये लेकिन यह भी इस लिये पसन्द न किया गया कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जहाँ कहीं भी जाएँगे वहाँ ही उन के पैरू पैदा होने लगेंगे और उन की तहरीक बराबर बढ़ती चली जाएगी। आख़िरकार अबू जहल ने यह मशवरा दिया कि हर हर क़बीले में से एक एक जवान चुन लिया जाये। और यह सब मिल कर एक साथ मुहम्मद (

सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पर हमला कर दें और उन्हें क़त्ल कर दें। इस तरह उन का ख़ून तमाम क़बीलों में बट जायेगा और ख़ानदाने हाशिम के लिये यह मुम्किन न होगा कि तमाम क़बीलों के मुक़ाबिले में अकेले जंग कर सकें। इस राय को सब ने पसन्द किया और आख़िर में इस काम के लिये एक रात मुक़र्रर कर ली गई। और यह तैय पाया कि इस रात को सब मुन्तख़ब लोग आप के घर को घेर लें और जब आप सुब्ह बाहर तशरीफ़ लायें तो यह अपना काम कर डालें। अरब वाले रात को बेख़बरी के आलम में किसी के घर में घुसना पसन्द न करते थे।

अल्लाह तआला का करना कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को भी दुश्मनों की इन ख़ुफ़िया (पोशीदा) तदबीरों का इल्म होता रहा और अब वह वक़्त आ गया कि वह्ी के ज़रिए आप को यह हुक्म मिल गया कि अब आप भी मक्का छोड़ कर मदीना तशरीफ़ ले जाएँ। चुनाचे इस हिजरत से दो-तीन दिन पहले आप ने हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि० से मशवरा किया और यह तैय हो गया कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथ हज़रत अबूबक्र तशरीफ़ ले जाएँगे। सफ़र के लिये ऊँटनियाँ भी तजवीज़ हो गईं और मुख़्तसर सा ज़ादेराह (रास्ते का ख़र्च) भी तयार कर लिया गया।

मक्के से रवानगी:- कुफ़्फ़ारे क़ुरैश ने जो रात आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के क़त्ल करने के लिये तैय की थी उस रात को आप ने हज़रत अली को बुलाया और फ़रमाया कि मुझे हिजरत करने का हुक्म मिल चुका है। मैं आज रात मदीना रवाना हो जाऊँगा। मेरे पास बहुत से लोगों की अमानतें जमा

हैं। यह तुम उन लोगों को वापस कर देना और आज रात तुम मेरे बिस्तर पर सोते रहना ताकि देखने वाले मुतमइन रहें कि मैं घर में मौजूद हूँ।

कुफ़्फ़ारे कुरैश एक तरफ़ तो आप के ख़ून के प्यासे थे। लेकिन इस हाल में भी आप ही को ऐसा अमानतदार और दियानतदार समझते थे कि अपनी अमानतें और माल ला ला कर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पास रखते थे।

रात को कुफ़्फ़ार ने आप का घर घेर लिया जब रात ज़्यादा हुई तो आप ख़ामोशी और इतमीनान के साथ मकान से बाहर निकले इस वक़्त आप सूरह यासीन की आयात[1] तिलावत फ़रमा रहे थे। आप ने एक मुट्ठी ख़ाक भर शाहतिल-वुजूह (चेहरे बिगड़ जायें) फ़रमाते हुये कुफ़्फ़ार की तरफ़ फेंकी। और उन के दर्मियान से हो कर तशरीफ़ ले गये। उस वक़्त अल्लाह तआला की कुदरत से उन मुहासरा (घेरा डालना) करने वालों पर कुछ ऐसी ग़फ़लत तारी हुई कि वह आँहज़रत स० को तशरीफ़ ले जाते हुये देख ही न सके। आप हज़रत अबूबक्र के मकान पर तशरीफ़ ले गये और वहाँ से उन के साथ मक्के से बाहर जा कर ग़ारे सौर में छुप गये।

ग़ारेसौर में पनाहः- हज़रत अबूबक्र रज़ि० के साहबज़ादे हज़रत अब्दुल्लाह जो उस वक़्त नौउम्र थे। रात को उन साहिबान के पास रहते और सुब्ह मक्के में आ कर पता चलाते कि कुफ़्फ़ार अब क्या मशवरा कर रहें हैं, जो कुछ मालूम होता उस से उन दोनों बुज़ुर्गों को भी बाख़बर करते रहते। कुछ रात

---

1. फ़अग़शयनाहुम फ़-हुम ला युबसिरून। فَاَغۡشَيۡنَاهُمۡ فَهُمۡ لَا يُبۡصِرُوۡنَ۔ ١ـ

गये हज़रत अबूबक्र का गुलाम बकरियों का दूध ले आता या कभी घर से कुछ खाना पहुँच जाता इस तरह तीन रातों तक यह दोनों साहिबान वहाँ ठहरे रहे।

सुब्ह को जब काफ़िरों ने देखा कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मक्के से हिजरत फ़रमा गये। तो बहुत परेशान हुये और आप की तलाश में इधर उधर दौड़ पड़े। एक बार यह लोग आप को ढूँढते ढूँढते ठीक उस ग़ार के मुँह तक आ गये जहाँ आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और हज़रत अबूबक्र रज़ि० छुपे हुये थे, उन लोगों के क़दमों की आहट पा कर हज़रत अबूबक्र रज़ि० कुछ परेशान हुये। इस लिये नहीं कि उन्हें अपनी जान का ख़तरा था बल्कि इस लिये कि कहीं अल्लाह के रसूल को कोई तकलीफ़ न पहुँच जाये। आप ने उन की घबराहट देख कर निहायत इतमीनान के साथ उन्हें तसल्ली दी और फ़रमायाः-

لَا تَحْزَنْ اِنَّ اللّٰهَ مَعَنَا۔

ला तहज़न इन्नल्लाहा मअना।

घबराओ नहीं अल्लाह तआला हमारे साथ है। (तौबा)

चुनाचे ऐसा ही हुआ अल्लाह तआला के हुक्म से ग़ार के मुँह पर कुछ ऐसी अलामतें पैदा हो गईं[1] कि उनहें देख कर काफ़िरों ने समझा कि इस ग़ार में कोई दाख़िल नहीं हुआ है।

साथ ही कुफ़्फ़ारे कुरैश ने यह एलान कर दिया कि अगर

---

1. कहा जाता है कि मकड़ी ने ग़ार के मुँह पर जाला तान दिया था और किसी कबूतर ने अपना घोंसला रख लिया था, जिसे देख कर देखने वालों को यही यक़ीन हुआ कि इस ग़ार में बहुत दिनों से कोई दाख़िल नहीं हुआ

कोई शख़्स मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को ज़िन्दा या मुर्दा गिरफ़्तार कर के लाएगा तो उसे 100 ऊँट इनआम दिया जायेगा। इस इनआम का एलान सुन कर कितने ही आदमी आप की तलाश में इधर उधर निकल खड़े हुये।

मदीना तक सफ़रः– चौथे दिन आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ग़ार से निकले और एक रात और एक दिन बराबर सफ़र करते रहे। सफ़र के लिये हज़रत अबूबक्र रज़िअल्लाहु अनहु की तयार की हुई दो उम्दा ऊँटनियाँ पहले से तैय हो चुकी थीं, रास्ता बताने के लिये भी एक जानने वाले को मुक़र्रर कर लिया गया था। दूसरे दिन दूपहर के वक़्त जब धूप तेज़ हो गई तो एक चटान के साया में कुछ देर आराम करने के लिये ठहरे, क़रीब ही कोई चरवाहा मिल गया उस की बकरियों का दूध पिया और फिर वहाँ से रवाना हुये जिस वक़्त आप रवाना हो रहे थे कि अचानक एक शख़्स सुराक़ा बिन जअशम ने आप को देख लिया। यह शख़्स इनआम के लालच में आप की तलाश में निकला था। उस ने आप को देख कर अपना घोड़ा दौड़ाया घोड़े ने ठोकर खाई और गिर पड़ा। लेकिन वह फिर संभला और फिर हमला करने के लिये तयार हुआ। अब जो आगे बढ़ा तो अल्लाह की कुदरत कि उस के घोड़े के पाँव घुटनों तक ज़मीन में धंस गये। अब तो सुराक़ा परेशान हो गया और समझ गया कि मुआमला दूसरा है। मैं मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पर हमला न कर सकूँगा। और फ़ौरन डर कर अपने आप को आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हवाले कर दिया और अमान (हिफ़ाज़त) की दरख़्वास्त की। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उस को माफ़ कर दिया और

अमान दे दी। यह भी आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का एक मोजिज़ा था।

मदीने में तशरीफ़आवरीः– आप के तशरीफ़ लाने की ख़ब्र मदीना में पहले ही पहुँच चुकी थी। और पूरा शहर आप की तशरीफ़आवरी का मुनतज़िर था बच्चे और बड़े हर रोज़ सवेरे शहर से निकल कर बाहर जमा होते और दूपहर तक इन्तिज़ार कर के लौट आते। आख़िर एक दिन वह मुबारक घड़ी आ ही गई जिस के यह लोग मुनतज़िर थे। दूर से आप के आने की अलामात देख कर सारा शहर तकबीर की आवाज़ों से गूँज उठा। और हर मुनतज़िर दिल की कली खिल गई। मदीना से तीन मील के फ़ासले पर एक मक़ाम है क़ुबा, यहाँ अनसार के बहुत से ख़ानदान आबाद थे। उन में अमर बिन औफ़ का ख़ानदान सब से मुमताज़ था और कुलसूम बिन अलहद्म उस के अफ़सर थे। यह सआदत उन की क़िस्मत में थी कि सरकारे दोआलम ने सब से पहले उन की मेहमानी कुबूल फ़रमाई और आप ने कबा में उन के मकान पर क़याम फ़रमाया। हज़रत अली जो आप के रवाना होने के तीन दिन बाद चले थे। वह भी तशरीफ़ ले आये और यहाँ ही क़याम फ़रमाया।

क़ुबा में आप की तशरीफ़आवरी नुबुव्वत के तेरहवें साल 8/माहे रबीउल-अव्वल (मुताबिक़ 20/ सितम्बर 622 ई०) को हुई। क़ुबा के क़याम में आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का पहला काम एक मस्जिद की तामीर था। आप ने अपने दस्ते मुबारक (मुबारक हाथ) से मस्जिद की बिना (बुनियाद) डाली और दूसरे सहाबा के साथ मिल कर ख़ुद उस मस्जिद की तामीर की। चन्द रोज़ क़ुबा में ठहर कर आप शहरे मदीना की

तरफ़ रवाना हुये। यह जुमा का दिन था। रास्ते में बनी सालिम के मुहल्ले में ज़ुहर की नमाज़ का वक़्त हो गया तो आप ने सब से पहले जुमा का ख़ुतबा दिया और सब से पहली जुमा की नमाज़ पढ़ाई मदीना में दाख़िले के वक़्त हर जाँनिसार की आरज़ू थी कि मेहमानी का शर्फ़ (फ़ख़्र) उस के हिस्से में आये हर क़बीला सामने आ कर अर्ज़ करता था कि "हुज़ूर यह घर है यहाँ क़याम फ़रमाएँ"। लोगों के शौक़ और ज़ौक़ का यह आलम था कि हर दिल फ़रशे राह था। और हर जान क़ुर्बान होने के लिये बेचैन, ख़वातीन मकानों की छतों पर गा रही थीं:-

طَلَعَ الْبَدْرُ عَلَيْنَا۔ مِنْ ثَنِيَّاتِ الْوِدَاعِ۔ وَجَبَ الشُّكْرُ عَلَيْنَا۔ مَا دَعٰى لِلّٰهِ دَاعٍ

तलअल-बद्रो अलैना, मिन सनिय्यातिल-वेदाए। वजबश्शुकरो अलैना, मा दआ लिल्लाहे दाई।

चौदहवीं का चाँद निकल आया कोहे वेदाअ की घाटियों से। हम पर ख़ुदा का शुक्र वाजिब है जब तक दुआ माँगने वाले दुआ माँगें।

मासूम लड़कियाँ दुफ़ बजा कर गा रही थीं:-

نَحْنُ جَوَارٍ مِنْ بَنِى النَّجَّارِ۔ يَا حَبَّذاً مُحَمَّدٍ مِّنْ جَارِ۔

नहनो जवारिन मिन बनी नज्जार, या हब्बज़ा मुहम्मदन मिन जारी।

हम ख़ानदाने नज्जार की लड़िकयाँ हैं। मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम कैसे अच्छे हमसाए (पड़ोसी) हैं।

आप ने उन लड़कियों से पूछा "क्या तुम मुझ से मुहब्बत रखती हो?" वह बोलीं "हाँ" फ़रमाया "मैं भी तुम से मुहब्बत रखता हूँ"।

मदीना में क़याम:– मेज़बानी (मेहमानदारी) का शर्फ़ किसे हासिल हो? यह एक ऐसा सवाल था जिस का फ़ैसला आसान न था। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि मेरी ऊँटनी जिस के मकान के सामने ठहर जाये वही इस ख़िदमत को अंजाम दे। चुनाचे यह शर्फ़ हज़रत अबू अय्यूब अनसारी के हिस्से में आया। जहाँ अब मस्जिदे नबवी है इस के क़रीब उन का मकान था। यह मकान दो मन्ज़िला था। उन्हों ने बालाख़ाना (ऊपर का हिस्सा) पेश किया लेकिन आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने लोगों के आने जाने की सुहूलत की वजह से नीचे की मंज़िल में रहना पसन्द फ़रमाया। और हज़रत अबू अय्यूब रज़ि० और उन की बीवी के हिस्से में ऊपर की मंज़िल आई।

आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने सात महीने तक यहीं क़याम फ़रमाया। इस के बाद जब मस्जिदे नबवी के क़रीब आप के क़याम के लिये हुजरे तामीर हो गये तो वहाँ मुंतक़िल हो गये थोड़े ही दिनों के अंदर आप के ख़ानदान के लोग भी मदीने चले आये।

मस्जिदे नबवी की तामीर:– मदीना में क़याम के बाद सब से पहला और ज़रूरी काम एक मस्जिद की तामीर था। जहाँ आप ने क़याम फ़रमाया था उस के क़रीब ही कुछ ज़मीन उफ़तादा(नाकारा) थी जो दो यतीम बच्चों की थी। उन को क़ीमत दे कर यह ज़मीन हासिल की गई और मस्जिद की तामीर शुरू हुई। इस वक़्त भी आप मज़दूरों की तरह सब के साथ मिल कर काम करते थे और पत्थर उठा-उठा कर लाते थे। यह मस्जिद बहुत ही सादा तरीक़े पर बनाई गई थी। कच्ची

ईंटों की दीवारें, खुजूर की पत्तियों की छत, खुजूर के तनों के सुतून। इस मस्जिद का क़िबला बैतुल-मुक़द्दस की तरफ़ रखा गया। क्यों कि अभी तक मुसलमानों का क़िबला भी वही था। फिर जब क़िबला काबा की तरफ़ हो गया तो मस्जिद में भी इसी निसबत से तरमीम (तबदीली) कर दी गई। मस्जिद का फ़र्श कच्चा था, बारिश होती तो मस्जिद में कीचड़ हो जाती थी। कुछ दिनों के बाद पत्थरों का फ़र्श बना लिया गया।

मस्जिद के एक सिरे पर एक पटा हुआ चबूतरा था जिसे सुफ़्फ़ा कहते थे। यह उन लोगों के ठहरने का मक़ाम था जो इस्लाम लाये थे। लेकिन उन का कोई घर दर न था।

जब मस्जिद बन चुकी तो उस के क़रीब ही आप ने अज़वाजे मुतह्हरात (आप स० की बीवियाँ) के लिये हुजरे बनवा लिये। यह भी कच्ची ईंटों और खुजूर की टट्टियों से बने हुये थे यह मकान छः-छः सात-सात हाथ चौड़े और दस-दस हाथ लम्बे थे छत इतनी ऊँची थी कि आदमी खड़ा हो तो छत को छू ले। दरवाज़ों पर कम्बल का परदा पड़ा रहता था।

आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के मकान के क़रीब जो अनसार रहते थे, उन में खाते पीते लोग आप की ख़िदमत में कुछ दूध भेज दिया करते, कभी सालन और कभी कुछ और। बस इसी पर बसर थी। ज़िन्दगी तंगी के साथ बसर होती थी।

मुवाख़ात (भाई बनाना):- मक्के से जो मुसलमान घर बार छोड़ कर आये थे वह तक़रीबन सभी बेसरोसामान थे। उन में जो लोग खाते पीते थे वह भी अपना माल मक्के से नहीं ला सके थे। और उन को सब कुछ छोड़ छाड़ कर यूँ ही आना पड़ा था। अगरचे यह सब मुहाजिर मदीना के मुसलमानों

(अनसार) के मेहमान थे। लेकिन बहरहाल अब उन के मुसतक़िल क़याम के बनदोबस्त की ज़रूरत महसूस हो रही थी। यूँ भी यह लोग अपने हाथों से मेहनत कर के ज़िन्दगी बसर करना पसन्द करते थे। चुनाचे जब मस्जिदे नबवी की तामीर ख़त्म हो गई तो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक दिन अनसार को बुलाया और उन से फ़रमाया कि यह मुहाजिर तुम्हारे भाई हैं। फिर आप ने एक शख़्स को अनसार में से और एक को मुहाजिरीन में से बुला कर फ़रमाया कि आज से तुम दोनों एक दूसरे के भाई हो। इस तरह सब मुहाजिरीन को अनसार का भाई बना दिया, और यह अल्लाह के मुख़लिस बन्दे सच मुच भाई ही क्या भाई से भी कहीं ज़्यादा एक दूसरे के रफ़ीक़ बन गये। अनसार मुहाजिरीन को अपने अपने घर ले गये और अपनी कुल जायदाद और सामान का हिसाब उन के सामने रख दिया और कह दिया कि आधा तुम्हार और आधा हमारा। बाग़ात की आमदनी, खेती की पैदावार, घर का सामान, मकान, जायदाद ग़र्ज़ यह कि हर चीज़ उन में भाईयों की तरह तक़सीम हो गई। और यह बेधर मुहाजिर सब के सब इतमीनान से हो गये। साथ ही बहुत से मुहाजिरों ने कारोबार भी शुरू कर दिया। दुकानें खोल लीं। और दूसरे कामों में मशग़ूल हो गये इस तरह मुहाजिरों के बसाने का काम अंजाम पाया। और इस तरफ़ से इतमीनान हासिल हुआ।

✤✤✤✤✤

आठवाँ बाब

दावते इस्लामी एक नये दौर में

हिजरत से पहले इस्लाम की दावत मक्के के मुश्रिकों के सामने दी जा रही थी। उन के लिये इस्लाम की दावत एक नई चीज़ थी लेकिन हिजरत के बाद मदीना में यहूद से साबिक़ा (मुआमला) पेश आया। यह लोग तौहीद, रिसालत, आख़िरत, मलायका, वह्यी वग़ैरा के क़ायल थे और एक पैग़म्बर हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के उम्मती होने के लिहाज़ से ख़ुदा की तरफ़ से आई हुई एक शरीअत के मानने के भी मुद्दई (दावा करने वाले) थे। उसूलन उन का असल दीन वही इस्लाम था जिस की तरफ़ हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम दावत दे रहे थे। यह बात दूसरी थी कि सदियों की लापरवाही की वजह से उन के अन्दर बेशुमार ख़राबियाँ पैदा हो गई थीं। उन की ज़िन्दगी असल ख़ुदाई शरीअत के ज़ाबतों (क़ानूनों) से आज़ाद हो गई थी और उस में सैकड़ों क़िस्म की बिदअतें और रस्म व रिवाज दाख़िल हो गये थे। "तौरात" उन के पास ज़रूर थी लेकिन उस में उन्हों ने बहुत सा इंसानी कलाम शामिल कर लिया था और जो कुछ ख़ुदाई अहकाम बाक़ी भी रह गये थे उन्हें अपनी मनमानी तावीलों (बयानों) और तशरीहों के साँचों में ढाल कर कुछ से कुछ बना दिया था। ख़ुदा के दीन से उन का

तअल्लुक़ इन्तिहाई कमज़ोर हो गया था और इजतिमाई तौर पर उन के अन्दर ऐसी ख़राबियाँ जड़ पकड़ गई थीं कि अगर कोई अल्लाह का बन्दा उन्हें सीधा रास्ता दिखाने के लिये कभी आया भी तो उन्हों ने उस की एक न सुनी, बल्कि उसे अपना सब से बड़ा दुश्मन जाना और हर तरह उस की आवाज़ दबाने की कोशिश की। अगरचे यह लोग अपनी असल के लिहाज़ से "मुस्लिम" ही थे लेकिन अब इतने बिगड़ गये थे कि उन्हें खुद भी यह याद न रहा था कि दरअसल उन का दीन क्या था।

इस लिहाज़ से अब तहरीके इस्लामी के सामने सिर्फ़ दीन के उसूलों की बुनियादी तालीम ही से लोगों को मुतआरफ़ (जान पहचान) कराने का काम न था बल्कि ऐसे लोगों में फिर से दीनी रूह बेदार करने का काम भी था। जो एक एतबार से "बिगड़े हुये मुस्लिम" थे फिर इस के अलावा अब मदीने में चारों तरफ़ से आकर मुसलमान इकट्ठा हो रहे थे और उन मुहाजिरीन और मदीने के अनसार से मिल कर एक छोटी सी इस्लामी रियासत की बुनियाद पड़ रही थी। इस लिये अब तक तो तहरीक को सिर्फ़ उसूली दावत, अक़ाइद की इस्लाह, और कुछ अख़लाक़ी तालीमात की हद तक हिदायात देना थीं लेकिन अब रहन सहन के तरीक़ों की इस्लाह इन्तिज़ामी क़वानीन और आपस के तअल्लुक़ात दुरुस्त करने के लिये ज़ाबतों की ज़रूरत थी चुनाचे अब उस तरफ़ भी पूरी तवज्जोह दी जाने लगी थी।

एक दूसरी बड़ी तबदीली और हुई अब तक इस्लाम की दावत खुद कुफ़्र के माहौल में दी जा रही थी और वहाँ रह कर मुसलमान काफ़िरों के मज़ालिम बरदाश्त कर रहे थे लेकिन अब उन की अपनी एक आज़ाद छोटी सी रियासत बन गई थी जो

चारों तरफ़ कुफ़्र के क़िलों से घिरी हुई थी और अब मुआमला सिर्फ़ सताने और परेशान करने का ही नहीं था बल्कि पूरा अरब अब इस बात पर तुला हुआ था कि उस मुट्ठी भर जमाअत को जल्द से जल्द ख़त्म कर दिया जाये नहीं तो उन्हें यह ख़तरा सामने नज़र आ रहा था कि अगर इस्लाम के इस नये मरकज़ ने ताक़त हासिल करना शुरू कर दी तो फिर उन के लिये ठहरने का कोई मक़ाम न रह जाएगा। इस लिये अब इस मुख़्तसर सी इस्लामी जमाअत के लिये अपने और अपनी तहरीक की बचाव के लिये ज़रूरी था किः-

1. वह पूरे जोश व ख़रोश के साथ अपने ममज़हब की तबलीग़ करें। उस का हक़ होना दलाइल से साबित करें और ज़्यादा से ज़्यादा लोगों को अपना हम ख़याल बनाने की कोशिश करें।
2. मुख़ालिफ़ीन जिन अक़ीदों पर जमे हुये थे उन का ग़लत होना दलाइल से साबित करें ताकि जो शख़्स भी अक़्ल की रोशनी में बात समझना चाहे, उस के लिये असल हक़ीक़त तक पहुँचने में कोई दुश्वारी न हो।
3. घर बार छोड़ने और कारोबार को ख़त्म कर देने के बाद जो लोग इस नई रियासत में आ-आ कर जमा हो रहे थे उन के लिये न सिर्फ़ यह कि जमाव का कोई इन्तिज़ाम किया जाये बल्कि उन की ऐसी अख़लाक़ी और ईमानी तरबियत की जाये कि फ़क्र व फ़ाक़ा और बेइतमीनानी की हालत में वह पूरे सब्र के साथ हालात का मुक़ाबिला कर सकें और किसी सख़्त से सख़्त मौक़ा पर भी उन के क़दम न डगमगाने पाएँ।
4. मुसलमानों को इस बात के लिये बिल्कुल तयार कर दिया जाये कि जब उन को मिटा डालने के इरादे के साथ मुख़ालिफ़ीन उन

पर हमला करें तो बावजूद अपनी कमज़ोरी और बेसरो सामानी के डट कर उन का मुक़ाबिला कर सकें और उन को अपने मसलक की सच्चाई पर ऐसा यक़ीन और अपने ख़ुदा पर ऐसा भरोसा हो कि वह कभी मैदान से मुँह न मोड़ें।

5. तहरीक के अलमबरदारों में इतनी हिम्मत पैदा कर दी जाये कि जो लोग समझाने के बावजूद उस निज़ामे ज़िन्दगी के क़ायम होने में आड़े आएँ जो इस्लाम क़ायम करना चाहता था तो उन को ताक़त के साथ मैदान से हटा दें।

चुनाचे मस्जिदे नबवी और दूसरी ज़रूरी इमारतों के इन्तिज़ाम और मुहाजिरीन के लिये क़याम का ठिकाना कर देने के बाद आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उन तमाम कामों की तरफ़ तवज्जोह फ़रमाई सूरह बक़रा का एक बड़ा हिस्सा उसी दौर में नाज़िल हुआ इस में उन्हीं तमाम बातों पर ज़ोर दिया गया है।

यहूद से मुआहिदे:– मदीने के चारों तरफ़ यहूद की बस्तियाँ थीं। उन लोगों में इस्लाम की दावत देने के साथ-साथ इस बात की भी ज़रूरत थी कि उन से सियासी तअल्लुक़ात की नौइयत (क़िस्म) मुतअय्यन (मुक़र्रर) हो जाये क्यों कि मक्के के क़ुरैश यह जान कर कि मुसलमान मक्के से चले गये, मुतमइन हो कर नहीं बैठ गये थे बल्कि जब उन्हों ने यह देखा कि मुसलमानों की एक अज़ीम जमाअत मदीनें में इकट्ठा हो रही है तो उन्हों ने इस्लाम के इस मरकज़ को अपनी ताक़त के बल पर मिटा डालने की तदबीरें सोचना शुरू कर दीं थीं इस लिये ज़रूरी था कि मदीने के चारों तरफ़ यहूद की जो बस्तियाँ थीं उन से मुसलमान अपने सियासी तअल्लुक़ात वाज़ेह तौर पर मुतअय्यन

कर लें ताकि मुशरिकीने मक्का के किसी हमला के वक़्त यह अंदाज़ा हो सके कि यहूद की ताक़त किस तरफ़ होगी चुनाचे मदीना और साहिल बहरे अहमर के दर्मियान जो क़बीले आबाद थे उन के साथ बात चीत शुरू हुई उन में से कुछ से आप स० ने ग़ैर जानिबदारी का मुआहिदा ले लिया। यानी यह कि अगर मदीना के मुसलमानों पर कुरैश या कोई और हमला करेगा तो यह लोग न मुसलमानों के साथ मिल कर लड़ेंगे और न मुसलमानों के दुश्मनों का साथ देंगे और कुछ क़बीलों से यह मुआहिदा ले लिया कि अगर मुसलमानों पर कोई हमला करेगा तो यह लोग मुसलमानों का साथ देंगे।

मुनाफ़िक़ीनः- मदीने में तहरीके इस्लामी को उस वक़्त जिन नये हालात से वास्ता पड़ रहा था उन में एक मसअला मुनाफ़िक़ीन का भी बड़ा अहम था। मक्के के आख़िरी दौर में कुछ ऐसे लोग तो इस्लामी जमाअत में आ गये थे जो अगरचे इस्लामी दावत को बिल्कुल बरहक़ जानते थे लेकिन अपने ईमान की कमज़ोरी की वजह से वह इस्लाम की ख़ातिर अपने दुनियावी तअल्लुक़ात को नहीं छोड़ सकते थे। तिजारत, ज़िराअत या अज़ीज़दारी की बनदिशें उन्हें अकसर इस्लाम के तक़ाज़े पूरा करने से रोक देती थीं लेकिन अब मदीने में कुछ ऐसे मुनाफ़िक़ भी इस्लामी जमाअत में घुस आये थे जो हक़ीक़त में इस्लाम के बिल्कुल मुनकिर (इन्कार करने वाले) थे लेकिन महज़ फ़ित्ना बरपा करने के लिये वह मुसलमानों के साथ शामिल हो गये थे या फिर कुछ लोग ऐसे थे जो मजबूरन अपने को मुसलमान ज़ाहिर करते थे उन के दिल तो इस्लाम पर मुतमईन नहीं थे मगर चूँकि क़बीले या ख़ानदान के बहुत से लोग मुसलमान हो

चुके थे इस लिये वह भी मजबूरन मुसलमानों के साथ शामिल हो गये थे साथ ही साथ कुछ ऐसे मौक़ा परस्त लोग भी जमाअत में घुस आये थे जो एक तरफ़ तो मुसलमानों के साथी बन कर अपने दुनियावी फ़ायदे हासिल करने की फ़िक्र करते थे और दूसरी तरफ़ काफ़िरों से भी साज़ बाज़ रखते थे। उन लोगों की तदबीर यह थी कि अगर इस्लाम और कुफ़्र की कशमकश में इस्लाम ग़ालिब आ जाये तो उन को इस्लाम के दायरें में अम्न मिल जाये और अगर जीत कुफ़्र की हो जाये तब भी उन के मफ़ाद (ग़र्ज़) महफ़ूज़ रहें।

इस्लामी तहरीक के लिये यह आसतीन के साँप काफ़ी मुश्किलात का बाइस थे और उन से निमटना आसान काम न था। मदीने की पूरी ज़िन्दगी में उन लोगों के फ़ित्नों का मुक़ाबिला कैसे कैसे किया गया उस का ज़िक्र तो अपने मुनासिब मक़ामात पर आइंदा आता रहेगा इस मौक़ा पर इस बात की शदीद ज़रूरत थी कि ऐसे मुनाफ़िक़ीन और इस्लाम की राह पर सोच समझ कर क़दम रखने वाले सच्चे मोमिनीन बिल्कुल एक दूसरे के मुक़ाबिले में पहचान लिये जाएँ। क्यों कि अब इस्लामी तहरीक को जिन हालात से दोचार होना था उन में इस बात की बड़ी सख़्त ज़रूरत थी कि जो लोग अभी तक पुराने तअस्सुबात और ग़ैर इस्लामी ख़यालात के गुलाम थे या जिन के ईमान में किसी पहलू से कमज़ोरी थी वह लोग छट कर अलग हो जाएँ।

क़िब्ले की तबदीली:- अब तक इस्लाम का क़िब्ला बैतुल-मुक़द्दस था। मुसलमान उसी की तरफ़ मुँह कर के नमाज़ पढ़ते थे। बैतुल-मुक़द्दस का तअल्लुक़ यहूदियों से बहुत ही क़रीब था यहूदी भी उसी तरफ़ मुँह कर के नमाज़ पढ़ते थे।

शअबान 2 हिजरी का वाक़िआ है कि ऐन नमाज़ की हालत में क़िब्ले को बदलने का हुक्म नाज़िल हुआ और अब बैतुल-मुक़द्दस के बदले काबे को मुसलमानों का क़िब्ला क़रार दिया गया। चुनाचे आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ऐन नमाज़ की हालत में अपना रूख़ बैतुल-मुक़द्दस की तरफ़ से बदल कर काबे की तरफ़ कर लिया। यह वाक़िआ तहरीके इस्लामी की तारीख़ में बड़ा अहम था इस की अहमियत का ज़िक्र खुद अल्लाह तआला ने इन अलफ़ाज़ में फ़रमाया है कि "हम ने जो काबा को तुम्हारा क़िब्ला बना दिया तो उस की वजह यह है कि यह मालूम हो जाये कि कौन पैग़म्बर का पैरू (फ़रमाबरबार) है और कौन उल्टा पीछे फिर जाने वाला है"। (अल-बक़रा) साथ ही साथ यह इस अम्र (हुक्म) का एलान भी था कि अब तक दुनिया की अख़लाक़ी और ईमानी रहनुमाई का जो काम यहूद को सौंपा गया था अब उन्हें उस से हटाया जा रहा है क्यों कि उन्हों ने इस का हक़ अदा न किया और इस नेमत की क़द्र न पहचानी। उन के बदले अब यह ख़िदमत उम्मते मुस्लिमा को सौंपी जा रही है और वही इस फ़रीज़ा को अंजाम देगी।

इस वाक़िआ का असर यह पड़ा कि बहुत से लोगों का जिन के दिलों में ईमान ने जगह नहीं पाई थी परदा फ़ाश हो गया और उन्हों ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के इस काम पर सख़्त नुकताचीनी की और यह वाज़ेह हो गया कि उन का मक़ाम इस्लामी जमाअत में क्या है? इस तरह बहुत से दोग़ले मुसलमान इस्लामी जमाअत से अलग हो गये और बड़ी हद तक जमाअत ऐसे नाकारा लोगों से पाक हो गई।

नवाँ बाब

तहरीके इस्लामी की मुदाफ़िअत[1]

मक्के में जब उक़बा के मक़ाम पर मदीना के कुछ लोगों ने आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हाथ पर बैअत की थी और आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत में यह पेशकश की थी कि आप और आप के साथी मदीना तशरीफ़ ले आएँ, उसी वक़्त यह ख़तरा खुल कर सामने आ गया था कि इस बैअत और इस पेशकश की हैसियत दरअसल मदीना वालों की तरफ़ से सारे अरब को एक चेलेंज की है चुनाचे बैअत करने वालों में से एक बुज़ुर्ग अब्बास बिन ओबादा के यह अलफ़ाज़ जो उन्हों ने अपने साथियों को मुख़ातब कर के कहे थे अब तक तारीख़ में महफ़ूज़ हैं "जानते हो इस शख़्स से किस चीज़ पर बैअत कर रहे हो? तुम इस के हाथ पर बैअत कर के दुनिया भर से लड़ाई मोल ले रहे हो लिहाज़ा अगर तुम्हारा ख़याल यह हो कि जब तुम्हारे माल तबाही के और तुम्हारे

---

1. यहाँ यह शुबहा न होना चाहिए कि इस्लाम में जंग सिर्फ़ मुदाफ़िअत के लिये होती है बल्कि जब दीन का तक़ाज़ा होता है तो हक़ को ख़ुद बढ़ कर भी बातिल का ज़ोर तोड़ना पड़ता है। इस क़िस्म की जंगों का मौक़ा तहरीके इस्लामी को बाद के मौक़ों पर पेश आया जिन का ज़िक्र आगे आएगा।

अशराफ़ (इज़्ज़तदार लोग) हलाकत के ख़तरे में पड़ जाएँ तो तुम उसे दुश्मनों के हवाले कर दोगे तो बेहतर है कि आज ही उसे छोड़ दो क्यों कि ख़ुदा की क़सम यह दुनिया और आख़िरत की रुस्वाई है और अगर तुम्हारा इरादा यह है कि जो बुलावा तुम उस शख़्स को दे रहे हो उस को अपने अमवाल की तबाही और अपने अशराफ़ की हलाकत के बावजूद निबाहोगे तो बेशक इस का हाथ थाम लो कि ख़ुदा की क़सम यह दुनिया और आख़िरत की भलाई है"। उस मौक़ा पर तमाम वफ़्द ने बिल-इत्तेफ़ाक़ (इत्तेफ़ाक़ के साथ) कहा था कि हम उसे ले कर अपने अमवाल को तबाही और अशराफ़ को हलाकत के ख़तरे में डालने के लिये तयार हैं। अब वह वक़्त आ गया था कि जब मदीना वालों के इस दावा की जाँच होना थी।

कुरैश के लिये ख़तराः- मदीना में मुसलमानों और आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के मुनतक़िल हो जाने का मतलब यह था कि अब इस्लाम को एक ठिकाना मयस्सर आ गया था और अब वह मुसलमान जिन की सदाक़त, सब्र और इस्तिक़ामत का बार-बार इम्तिहान हो चुका था एक मुनज़्ज़म (तरतीब दी हुई) जमाअत की शक्ल इख़्तियार कर चुके थे कुरैश के लिये यह एक शदीद ख़तरा था अब उन्हें साफ़ दिखाई दे रहा था कि इस्लामी जमाअत का इस तरह मुनज़्ज़म हो जाना दरअसल उन के जाहिली निज़ाम के लिये मौत का पैग़ाम है। इस के अलावा एक सख़्त ख़तरा और था जिस ने उन्हें इन्तिहाई बेचैन कर रखा था। मक्के वालों की मआश का बड़ा दारोमदार यमन और शाम की तिजारत पर था। शाम को तिजारत का जो रास्ता बहे्र अहे्मर के किनारे किनारे जाता था मदीन ठीक उसी राह पर

था। मदीने में मुसलमानों के ताक़त पकड़ने का मतलब यह था कि मुल्के शाम से कुरैश की तिजारत का दारोमदार या तो मुसलमानों के साथ अच्छे तअल्लुक़ात क़ायम रखने पर था या फिर उस रास्ते से तिजारत का माल सिर्फ़ इस सूरत में जा सकता था कि मदीने में मुसलमानों की ताक़त को आख़िरी तौर पर कुचल डाला जाये। यही वजह थी कि हिजरत से पहले कुरैश ने पूरी कोशिश की कि किसी तरह मदीने में मुसलमान इकट्ठे न हो सकें लेकिन जब उन की तदबीर नाकाम हो गई तो अब उन्हों ने यह तैय किया कि जिस तरह भी हो सके इस उभरते हुये ख़तरे को हमेशा के लिये दबा ही डालना चाहिये।

कुरैश की साज़िशः– अब्दुल्लाह बिन उबई मदीने का एक सरदार था हिजरत से पहले मदीने वाले उसे अपना बादशाह बनाने की तयारी कर चुके थे लेकिन मदीने के लोगों ने जब इस्लाम कुबूल करना शुरू किया और मक्के से मुसलमान और आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मदीने तशरीफ़ ले आये तो यह इसकीम ठप हो गई और अब्दुल्लाह बिन उबई की उम्मीदों पर पानी फिर गया। उस मौक़ा पर मक्का वालों ने उसे एक ख़त लिखा कि "तुम लोगों ने हमारे आदमी को अपने यहाँ पनाह दी है हम ख़ुदा की क़सम खाते हैं कि या तो तुम ख़ुद इस से लड़ो और इसे अपने यहाँ से निकाल दो नहीं तो हम सब तुम पर चढ़ाई करेंगे तुम्हारे मर्दों को क़त्ल करेंगे और तुम्हारी औरतों को लौंडियाँ बनाएँगे"। यह ख़त अब्दुल्लाह बिन उबई की टूटी हुई उम्मीदों के लिये कुछ सहारा बना लेकिन आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने बर वक़्त उस के शर (बुराई) को रोकने के लिये उसे समझाया कि "क्या तुम ख़ुद

अपने बेटो और भाइयों से लड़ोगे" चूँकि अनसार अकसर मुसलमान हो चुके थे इस लिये अब्दुल्लाह मजबूरन अपने बुरे इरादों से बाज़ रहा।

उसी ज़माने में मदीने के रईस सअद बिन मआज़ उमरा के लिये मक्का गये। हरम के दरवाज़े पर अबूजहल से मुलाक़ात हो गई। अबूजहल ने उन से कहा कि तुम तो हमारे दीन के मुरतदों (मुसलमानों) को पनाह दो और हम तुम्हें इतमीनान के साथ मक्के में तवाफ़ करने दें? अगर तुम उमय्या बिन ख़ल्फ़ के मेहमान न होते तो यहाँ से ज़िन्दा नहीं जा सकते थे"। यह सुन कर सअद ने जवाब में कहा "खुदा की क़सम अगर तुम ने मुझे इस चीज़ से रोका तो मैं तुम्हें उस चीज़ से रोक दूँगा जो तुम्हारे लिये इस से ज़्यादा शदीद है यानी मदीना पर से तुम्हारा रास्ता"। यह गोया एलान था इस बात का कि अगर कुरैश ने कोई शरारत की तो उन्हें अपने उस तिजारती रास्ते को जो मदीना के पास से गुज़रता है अपने लिये बन्द समझना चाहिये।

कुरैश पर दबावः– उस वक़्त कुरैश मुसलमानों और इस्लामी तहरीक को मिटा डालने के लिये जो मंसूबे बना रहे थे उन के पेशे नज़र उन को नीचा दिखाने और मजबूर करने के लिये मुसलमानों के सामने उस से बेहतर कोई सूरत न थी कि वह उस रास्ते पर अपना कब्ज़ा करें और उन के लिए शाम की तिजारत बन्द कर दें। यही एक दबाव ऐसा था जिस से मक्के के लोग मजबूर हो सकते थे। चुनाचे जैसा कि पहले ज़िक्र हो चुका है आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उस राह के क़रीब बसने वाले यहूदी क़बीलों से मुख़्तलिफ़ क़िस्म के मुआहिदे कर के इतमीनान कर लिया और फिर क़ाफ़िलों को धमकी देने

के लिये कभी कभी मुसलमानों के छोटे छोटे दस्ते भेजना शुरू कर दिये उन दस्तों के ज़रिए अगरचे न तो कभी कोई कश्त व ख़ून हुआ और न कभी कोई क़ाफ़िला लूटा गया लेकिन उन को भेज कर कुरैश को साफ़ साफ़ आगाह कर दिया गया कि वह अब जो कुछ भी क़दम उठाएँ यह सोच कर उठाएँ कि हवा का रुख़ किधर है अगर वह मुसलमानों को तंग करेंगे तो उन्हें भी अपनी तिजारत से हाथ धोना पड़ेगा।

हज़रमी का क़त्लः- इस दर्मियान आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम हालात से बराबर बाख़बर रहने की कोशिश फ़रमाते रहते थे ताकि यह मालूम होता रहे कि कुरैश किस क़िस्म के मंसूबे बना रहे हैं। रजब 2 हिजरी का वाक़िआ है कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अब्दुल्लाह बिन जहश को बारह आदमियों के साथ बतने नख़ला की तरफ़ भेजा यह मक़ाम मक्के और ताइफ़ के दर्मियान था आप ने अब्दुल्लाह को एक ख़त देकर फ़रमाया था कि दो दिन बाद इसे खोलना। हज़रत अब्दुल्लाह ने हस्बे इरशाद ख़त खोला तो लिखा था कि "मक़ामे नख़ला में क़याम करो और कुरैश के हालात का पता लगाओ और इत्तला (ख़बर) दो"। इत्तफ़ाक़ यह कि कुरैश के कुछ आदमी शाम से तिजारत का माल लिये आते थे हज़रत अब्दुल्लाह ने उन पर हमला किया और उन में से एक शख़्स उमर बिन अलहज़रमी मारा गया दो गिरिफ़्तार हुये और माले ग़नीमत भी हाथ आया। हज़रत अब्दुल्लाह ने मदीना आ कर यह वाक़िआ बयान फ़रमाया और ग़नीमत का माल आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत में पेश किया तो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने निहायत नाख़ुशी का

इज़हार फ़रमाते हुये इरशाद फ़रमाया कि "मैं ने तुम को यह इजाज़त नहीं दी थी" और ग़नीमत का माल कुबूल करने से इंकार फ़रमा दिया।

इस वाक़िआ में क़त्ल होने वाला और दोनों गिरिफ़्तार होने वाले बड़े मुअज्ज़ज़ ख़ानदान के लोग थे और इस बिना पर इस वाक़िआ ने कुरैश को बहुत ज़्यादा मुशतइल (भड़काना) दिया और ख़ून का बदला लेने की एक बुनियाद क़ायम हो गई।

ग़ज़्व-ए-बद्र

यह हालात थे कि शअबान 2 हिजरी (फ़रवरी या मार्च 623 ई॰) में कुरैश का एक बहुत बड़ा क़ाफ़िला जिस के साथ तक़रीबन 50 हज़ार अशरफ़ी का माल था। शाम से वापस आते हुये उस इलाक़े के क़रीब आया जो मुसलमानों की ज़द में था। क़ाफ़िले के साथ तीस-चालीस मुहाफ़िज़ों से ज़्यादा लोग न थे और इस बात का डर था कि कहीं मदीने के क़रीब वाले इलाक़े में पहुँचने के बाद मुसलमान उस पर हमला न कर दें। क़ाफ़िला का सरदार अबूसुफ़ियान था उस ने इस ख़तरे को महसूस कर के एक शख़्स को मक्के दौड़ाया कि वह वहाँ से मदद ले आये। चुनाचे उस शख़्स ने मक्के में आ कर एक शोर मचा दिया कि क़ाफ़िले को मुसलमान लूटे ले रहे हैं, दौड़ो मदद के लिये दौड़ो" क़ाफ़िले में जो माल था उस से बहुत से लोगों का तअल्लुक़ था फिर यह एक क़ौमी मसअला बन गया चुनाचे इस पुकार पर कुरैश के तमाम बड़े-बड़े सरदार लड़ाई के लिये निकल खड़े हुये और तक़रीबन एक हज़ार जोशीले जवानों की एक फ़ौज तयार हो गई। यह फ़ौज इन्तिहाई जोश और शान व शौकत के साथ

मक्के से इस इरादे के साथ रवाना हुई कि अब मुसलमानों का ख़ात्मा कर डालना चाहिये ताकि यह रोज़-रोज़ की झंझट ही मिट जाये। एक तरफ़ माल के बचाने की ख़्वाहिश दूसरी तरफ़ पुरानी दुश्मनी और तअस्सुब का जोश, ग़र्ज़ यह कि लोग इन्तिहाई दीवानगी और शान के साथ मदीना पर चढ़ाई के लिये रवाना हुये।

कुरैश की चढ़ाई:- उधर नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को भी इन हालात की ख़बरें पहुँच रही थीं आप ने महसूस फ़रमाया कि अब वह वक़्त आ गया है कि अगर इस वक़्त क़ुरैश को अपने इरादों में कामियाबी हो गई और उन्हों ने मुसलमानों की इस नई जमाअत को नीचा दिखा दिया तो फिर इस्लामी तहरीक के बढ़ने का सवाल इन्तिहाई मुश्किल हो जायेगा और हो सकता है कि इस्लाम की आवाज़ हमेशा के लिये दब जाये। मदीना में आये हुये अभी दो साल भी न हुये थे मुहाजिरीन अपना सब कुछ मक्के में छोड़ छाड़ कर आये थे और ख़ाली हाथ थे। अनसार लड़ाई के मुआमले में नातजरबाकार थे। यहूदियों के भी बहुत से क़बीले मुख़ालिफ़त पर आमादा थे। ख़ुद मदीने में मुनाफ़िकों और मुश्रिकों की मौजूदगी एक बहुत बड़ा मसअला था। ऐसे हालात में इस बात का अंदेशा था कि अगर कुरैश मदीना पर चढ़ आए तो हो सकता है कि मुसलमानों की मुट्ठी भर जमाअत का ख़ात्मा हो जाये और अगर वह हमला न भी करें बल्कि अपने ज़ोर से क़ाफ़िले को बचा कर निकाल ले जायें तो भी मुसलमानों की ऐसी हवा उखड़ जाएगी कि फिर आइंदा आस पास के क़बीलों को मुसलमानों के दबा लेने में कोई अंदेशा बाक़ी न रह जाएगा और वह कुरैश के इशारों पर मुसलमानों

को परेशान करना शुरू कर देंगे। उधर मदीना के यहूदी, मुनाफ़िक़ीन और मुश्रिकीन भी सिर उठाएँगे और मुसलमानों का जीना दूभर कर देंगे। इसी लिये आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़ैसला फ़रमाया कि इस वक़्त जो ताक़त भी मयस्सर है उसे ले कर मैदान में निकलें और यह फ़ैसला हो जाये कि जीने का हक़ किसे है और किसे नहीं।

मुसलमानों की तयारी:– यह फ़ैसला कर लेने के बाद नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मुहाजिरीन और अनसार को जमा किया और पूरे हालात उन के सामने साफ़ साफ़ रख दिये कि एक तरफ़ मदीने के शुमाल में तिजारती क़ाफ़िला है और दूसरी तरफ़ जुनूब में क़ुरैश का लशकर चला आ रहा है अल्लाह का वादा है कि उन दोनों में से कोई एक तुम्हें मिल जाएगा। बताओ तुम किस के मुक़ाबिले पर चलना चाहते हो जवाब में बहुत से सहाबा ने यही ख़्वाहिश ज़ाहिर की कि क़ाफ़िले पर हमला किया जाये लेकिन नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पेशे नज़र तो कुछ और ही था इस लिये आप ने फिर अपना सवाल दोहराया। इस पर मुहाजिरीन में से एक सहाबी मिक़्दाद बिन अमर रज़ि० ने उठ कर फ़रमाया "या रसूलुल्लाह! जिधर आप को आप का रब हुक्म दे रहा है उस तरफ़ चलिये हम आप के साथ हैं। हम बनी इसराईल की तरह यह कहने वाले नहीं हैं कि जाओ तुम और तुम्हारा ख़ुदा दोनों लड़ें हम यहाँ बैठे हैं"[1] मगर इस मसअले में आख़िरी राय क़ायम करने से पहले अनसार की राय मालूम करना ज़रूरी था इसलिये हुज़ूर स० ने उन लोगों को बराहे रास्त मुख़ातब कर के अपने सवाल को दोहराया उस पर

1. यह बात बनी इसराईल ने हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से कही थी।

हज़रत सअद बिन मआज़ रज़ि० उठे और फ़रमाया "या रसूलुल्लाह! हम आप पर ईमान लाये हैं आप की तसदीक़ कर चुके हैं इस बात की गवाही दे चुके हैं कि आप जो कुछ लाये हैं वह हक़ है, आप की अताअत का पुख़्ता अहद बाँध चुके हैं, पस ऐ रसूलुल्लाह! आप ने जो कुछ इरादा फ़रमाया है उसे कर गुज़रिये, क़सम है उस ज़ात की जिस ने आप को हक़ के साथ भेजा है कि अगर आप हमें लेकर समुन्द्र पर जा पहुँचे और उस में उतर जायें तो हम आप के साथ कूदेंगे और हम मे से एक भी पीछे न रहेगा। हम जंग में साबित क़दम रहेंगे, मुक़ाबिले में सच्ची जाँनिसारी दिखाएँगे और बईद नहीं कि अल्लाह आप को हम से वह कुछ दिखवा दे जिसे देख कर आप की आँखें ठंडी हो जाएँ। पस अल्लाह की बरकत के भरोसे पर आप हमें ले चलें"।

इन तक़रीरों के बाद फ़ैसला हो गया कि क़ाफ़िले के बजाये लशकर ही के मुक़ाबिले के लिये चलना है लेकिन यह फ़ैसला कोई मामूली फ़ैसला न था। मुसलमानों की जमाअत कुरैश के मुक़ाबिले में बहुत कमज़ोर थी लड़ाई के क़ाबिल लोगों की तादाद तीन सौ से कुछ हीं ज़्यादा थी जिन में से दो-तीन के पास घोड़े थे और ऊँट भी 70 से ज़्यादा न थे लड़ाई का सामान भी नाकाफ़ी था सिर्फ़ चार आदमियों के पास ज़िरहें थीं इसी लिये मुसलमानों में थोड़े से लोगों को छोड़ कर लोग दिलों में डर रहे थे और उन्हें ऐसा मालूम हो रहा था गोया जानते बूझते मौत के मुँह में जा रहे हैं सूरह अनफ़ाल की यह आयत उसी नक़्शे को पेश करती हैं:-

كَمَآ اَخْرَجَكَ رَبُّكَ مِنْۢ بَيْتِكَ بِالْحَقِّ وَاِنَّ فَرِيْقًا مِّنَ الْمُؤْمِنِيْنَ

لَكٰرِهُوْنَ۔ يُجَادِلُوْنَكَ فِي الْحَقِّ بَعْدَ مَا تَبَيَّنَ كَاَنَّمَا يُسَاقُوْنَ اِلَى الْمَوْتِ وَهُمْ يَنْظُرُوْنَ۔ وَاِذْ يَعِدُكُمُ اللّٰهُ اِحْدَى الطَّآئِفَتَيْنِ اَنَّهَا لَكُمْ وَتَوَدُّوْنَ اَنَّ غَيْرَ ذَاتِ الشَّوْكَةِ تَكُوْنُ لَكُمْ وَيُرِيْدُ اللّٰهُ اَنْ يُّحِقَّ الْحَقَّ بِكَلِمٰتِهٖ وَ يَقْطَعَ دَابِرَ الْكٰفِرِيْنَ۔ لِيُحِقَّ الْحَقَّ وَ يُبْطِلَ الْبَاطِلَ وَ لَوْ كَرِهَ الْمُجْرِمُوْنَ۔

कमा अख़्रजका रब्बुका मिम बैतिका बिल-हक़्क़े व इन्ना फ़रीक़म-मिनलमूमिनीना लकारिहून। युजादिलूनका फ़िल-हक़्क़े बाद-मा तबय्यना कअन्नमा युसाकूना इलल मौते वहुम यंज़ूरून। वइज़ यएदु-कुमुल्लाहो इह्दत्ताइफ़तैनि अन्नहा लकुम व तवद्दूना अन्ना ग़ैरा ज़ातिश्शौकते तकूनु लकुम वयुरीदुल्लाहो अय्युहिक़्क़ल-हक़्क़ा बिकलेमातिही व यक़्तआ दाबिरल-काफ़िरीना। लियुहिक़्क़ल-हक़्क़ा व युब्तिलल-बातिला वलौ करिहल मुजरिमून।

जिस तरह ऐ नबी! तेरा रब तुझे हक़ के साथ तेरे घर से निकाल लाया और मोमिनों में से एक गिरोह को यह सख़्त नागवार था। वह इस हक़ के मुआमिले में तुझ से झगड़ रहे थे हालाँकि वह साफ़-साफ़ ज़ाहिर हो चुका था उन का हाल यह था कि गोया वह आँखों देखते मौत की तरफ़ हाँके जा रहे हैं।

याद करो वह मौक़ा जब अल्लाह तुम से वादा कर रहा था कि दोनों गिरोहों में से एक तुम्हें मिल जायेगा तुम चाहते थे कि कमज़ोर गिरोह तुम्हें मिले मगर अल्लाह का इरादा यह था कि अपने इरशादात से हक़ को हक़ कर दिखाये और काफ़िरों की जड़ काट दे ताकि हक़ हक़ हो कर रहे और बातिल बातिल हो कर रह जाये चाहे यह बात

मुजरिमों को कितनी ही नागवार क्यों न हो। (सूरह अनफ़ाल रुकू 1. पारह 9)

मदीने से मुसलमानों का कूचः– बावजूद इस बेसरोसामानी के 12 रमज़ान 2 हिजरी को नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के भरोसे पर तक़रीबन 300 मुसलमानों को साथ ले कर मदीना से निकल खड़े हुये और उन्हों ने सीधी जुनूब मग़रिब की राह ली। जिधर से कुरैश का लशकर आ रहा था 16 रमज़ान को बदर के क़रीब पहुँचे। बदर एक गाँव का नाम है जो मदीना मुनव्वरा से जुनूब मग़रिब की तरफ़ तक़रीबन 80 मील के फ़ासले पर हैं यहाँ पहुँचने पर पता चला कि कुरैश का लशकर वादी के दूसरे सिरे तक आ पहुँचा है लिहाज़ा आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हुक्म के बमूजिब (मुताबिक़) यहाँ ही पड़ाव डाल दिया गया।

इधर कुरैश का हाल सुनिये यह लोग बड़े साज़ व सामान से निकले थे एक हज़ार से ज़्यादा सिपाही और तक़रीबन 100 सरदार शरीक थे सिपाहियों के लिये रसद (ग़ल्ला,राशन) का बहुत अच्छा इन्तिज़ाम था। उतबा बिन रबीआ फ़ौज का सिपहसालार था।

बदर के क़रीब पहुँच कर कुरैश के लशकर को भी यह मालूम हो गया कि उन का तिजारती क़ाफ़िला मुसलमानों की ज़द से बाहर है। उस पर क़बील-ए-ज़ुहरा और अदी के सरदारों ने कहा कि “अब लड़ना ज़रूरी नहीं” लेकिन अबूजहल न माना। ज़ोहरा और अदी के लोग इसी बिना पर वापस चले गये और बाक़ी फ़ौज आगे बढ़ी।

लड़ाई का मौदानः– लड़ाई के मैदान में जिस हिस्से पर

कुरैश क़ाबिज़ थे वह मौक़ा के लिहाज़ से बेहतर था ज़मीन पुख़्ता थी लेकिन जिस पर मुसलमानों ने पड़ाव डाला था वह रेतीली थी और सिपाहियों के पाँव धंसते थे रात को सब सिपाहियों ने आराम किया लेकिन नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम तमाम रात दुआ में मसरूफ़ रहे और 17 रमज़ान को नमाज़े फ़ज्र के बाद आप ने जहाँ पर वअज़ फ़रमाया और उसूले जंग के लिहाज़ से फ़ौजों की सफ़ें दुरूस्त कीं रोज़े उसी साल फ़र्ज़ हुये थे और यह अजीब आज़माईश थी कि मुसलमानों को पहले ही रमज़ान में अपने से तीन गुनी फ़ोज के मुक़ाबिले में जंग के लिये तयार होना पड़ा। उसी रात को दो बातें ऐसी हुईं जो अल्लाह तआला के ख़ुसूसी करम का मज़हर थीं एक तो यह कि मुसलमानों को सुकून के साथ नींद आई और वह सुब्ह ताज़ा दम हो कर उटे दूसरे उसी रात को बारिश हो गई बारिश हो जाने से रेतीली ज़मीन सख़्त हो गई और मुसलमानों के लिये मैदान अच्छा हो गया इस के बरख़िलाफ़ इसी बारिश से उस हिस्से में कीचड़ हो गई जिस में कुरैश का लशकर था और उन के पाँव धंसने लगे। दूसरे यह कि मुसलमानों के लिये तालाबों में पानी भी जमा हो गया जिस से उन्हों ने गुस्ल किया और वज़ू वग़ैरा का आराम हो गया। दिल की हरास और घबराहट दूर हो गई और मुसलमान पूरे इतमीनान के साथ मुक़ाबिले के लिये तयार हो गये।

जंग की इब्तिदाः– जिस वक़्त दोनों लशकर एक दूसरे के मुक़ाबिल हुये तो यह एक अजीब मंज़र था एक तरफ़ अल्लाह पर ईमान रखने वाले और उस के सिवा किसी दूसरे की बन्दगी और इताअत कुबूल न करने वाले 313 मुसलमान थे जिन के

पास लड़ाई का सामान भी ठीक से नहीं था और दूसरी तरफ़ साज़ो सामान से लेस एक हज़ार से ज़्यादा काफ़िरों का लशकर था जो इस फ़ैसले के साथ आये थे कि तौहीद की इस आवाज़ को हमेशा के लिये दबा कर ही दम लेंगे उस मौक़ा पर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ख़ुदा के आगे दुआ के लिये हाथ फैला दिये और इन्तिहाई आजिज़ी और ज़ारी के साथ दुआ फ़रमाई कि "ऐ अल्लाह! यह कुरैश हैं, अपने गुरूर के सामान के साथ आये हैं ताकि तेरे रसूल को झूटा साबित करें। ऐ अल्लाह! बस अब तेरी वह मदद आ जाये जिस का तूने मुझ से वादा फ़रमाया है। ऐ अल्लाह! अगर आज यह मुट्ठी भर जमाअत हलाक हो गई तो फिर रूए ज़मीन पर तेरी इबादत कहीं न होगी"।

इस जंग में सब से ज़्यादा सख़्त इम्तिहान मुहाजिरीन का था। उन के अपने भाई, बेटे और रिश्तेदार मुक़ाबिले में थे। किसी का बाप, किसी का बेटा, किसी का चचा किसी का मामू और किसी का भाई उस की तलवार की ज़द में था और उन को अपने हाथों से अपने जिगर के टुकड़ों को काटना पड़ रहा था। इस सख़्त इम्तिहान में वही लोग ठहर सकते थे जिन्हों ने वाक़ई सच्चे दिल से अल्लाह से यह अह्द किया था कि जिन रिश्तों को उस ने जोड़ा है वह बस उन्हीं को जोड़ेंगे और जिन को उस ने काटने का हुक्म दिया है उन को काट फेकेंगे चाहे वह रिश्ते उन को कितने ही अज़ीज़ क्यों न हों लेकिन साथ ही अनसार का इम्तिहान भी कुछ कम सख़्त न था। अब तो अरब के कुफ़्फ़ार और मक्के के मुशिरकीन की नज़र में उन का "जुर्म" बस इतना ही था कि उन्हों ने उन के दुश्मनों यानी मुसलमानों

को पनाह दी थी लेकिन अब तो वह खुल कर इस्लाम की मदद में कुफ़्फ़ार से जंग करने के लिये निकल आये थे इस का मतलब यह था कि उन्हों ने अपनी बस्ती मदीने के ख़िलाफ़ सारे अरब को दुश्मन बना लिया था। हालाँकि मदीने की आबादी एक हज़ार से ज़्यादा नहीं थी। यह हिम्मत वही लोग कर सकते थे जिन के दिलों में अल्लाह और उस के रसूल की मुहब्बत और आख़िरत के पुख़्ता ईमान ने पूरा-पूरा घर कर लिया हो वरना यूँ इस तरह अपने माल व जायदाद और अपने बीवी बच्चों को कौन सारे अरब की दुश्मनी के ख़तरे में डाल सकता था।

कुरैश की शकिस्तः– ईमान का यही वह मक़ाम है जिस के हासिल हो जाने के बाद अल्लाह की मदद आती है और ज़रूर आती है चुनाचे बदर के मैदान में भी अल्लाह तआला ने उन कमज़ोर 313 मुसलमानों की मदद फ़रमाई और उन के मुक़ाबिले में एक हज़ार से ज़्यादा के लशकर को ऐसी शकिस्त हुई कि गोया कुरैश की सारी कुव्वत ही टूट गई। इस जंग में कुरैश के तक़रीबन 70 आदमी मारे गये और इतने ही क़ैद हुये उन मारे जाने वालों में उन के बड़े बड़े सरदार तक़रीबन सब ख़त्म हो गये उन में शैबा उतबा, अबूजहल, ज़मआ, आस, उमय्या वग़ैरा ख़ास तौर से क़ाबिले ज़िक्र हैं उन सरदारों की मौत ने कुरैश की कमर तोड़ दी मुसलमानों में से छः मुहाजिर और आठ अनसार ने शहादत पाई।

जंग में जो लोग क़ैद हो कर आये वह दो-दो चार-चार कर के सहाबा में तक़सीम कर दिये गये और हिदायत कर दी गई कि उन के साथ अच्छा सुलूक किया जाये। चुनाचे सहाबा ने उन को ऐसे आराम से रखा कि बहुत से मौक़ों पर ख़ुद

तकलीफ़ उठाई लेकिन उन को तकलीफ़ न होने दी। इस अच्छे सुलूक ने उन लोगों के दिलों को इस्लाम के लिये नर्म कर दिया और यही तहरीक की सब से बड़ी कामियाबी थी। बाद में उन क़ैदियों में से बहुत से लोग फ़िदिया (बदले में कुछ माल) दे कर रिहा हो गये। जो ग़रीब थे और लिखना पढ़ना जानते थे वह भी इस शर्त पर रिहा कर दिये गये कि वह दस-दस बच्चों को लिखना पढ़ना सिखा दें।

जंगे बद्र के नताइज और असरातः- बद्र की लड़ाई अपने नताइज और असरात के लिहाज़ से बहुत अहम थी। यह लड़ाई दरअसल उस अज़ाबे इलाही की पहली क़िस्त थी जो इस्लाम की दावत कुबूल न करने की सज़ा में कुफ़्फ़ारे मक्का के लिये मुक़द्दर हो चुका था। इस लड़ाई ने यह ज़ाहिर कर दिया कि इस्लाम और कुफ़्र में दरअसल जीने का हक़ किसे है और आइंदा हालात का रूख़ क्या होगा। इस एतबार से इस्लामी तारीख़ का यह पहला मअरका (जंग) बहुत अज़ीमुश्शान मअरका (जंग) कहा जाता है कुरआन पाक की सूरह अनफ़ाल में इस मअरका पर बहुत तफ़सीली तबसरा किया गया है लेकिन यह तबसरा उन तमाम तबसरों से बिल्कुल मुख़तलिफ़ है जो दुनियवी बादशाह और जनरल किसी लड़ाई के जीतने के बाद आम तौर से किया करते हैं।

इस तबसरे की ख़ुसूसियात ऐसी हैं कि उन पर ज़रा तफ़सील से नज़र डालना ज़रूरी है इस से इस्लामी तहरीक के मिज़ाज और मुसलमानों की तरबियत के प्रोग्राम पर रोशनी पड़ती है।

जंगे बद्र पर तबसरा और मोमिनीन की तरबियतः-(1) जैसा

कि पहले ज़िक्र हो चुका है, इस्लाम से पहले जंग अरबों का बहुत दिल पसन्द मशग़ला था जंग में जो माल हाथ आता था (माले ग़नीमत) उस से उन्हें बेहद दिलचसपी थी और कभी-कभी उसी माल की कशिश उन की लड़ाई का सबब बन जाती थी लेकिन इस्लाम की नज़र में जंग का मक़सद माल व दौलत से बहुत बुलंद था और इस मक़सद को पूरे तौर से दिलों में बिठा देना बहुत ज़रूरी था। बद्र की लड़ाई वह पहली लड़ाई है जिस में मुसलमानों को इम्तिहान देना पड़ा कि आया उन के दिलों में इस्लामी जंग के उसूल और अख़लाक़ पूरे तौर पर बैठ चुके हैं या अभी तक ग़ैर इस्लामी लड़ाइयों के तसव्वुरात दिलों में किसी न किसी दरजे में मौजूद हैं।

बद्र की लड़ाई में जिन लोगों के हाथ कुफ़्फ़ार का जो माल आया वह अपने पुराने तरीक़े के मुताबिक़ उसे अपनी ही मिल्कियत समझ बैठे और जो लोग कुफ़्फ़ार का पीछा करने या आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की हिफ़ाज़त करने में मसरूफ़ रहे उन को कुछ न मिला। इस तरह आपस में कुछ बदमज़गी सी पैदा होने लगी यही मौक़ा था कि अब तहरीके इस्लामी के दाइयों की मुनासिब तर्बियत की जाये। चुनाचे उन्हें सब से पहले साफ़-साफ़ यह बता दिया गया कि माले ग़नीमत दरअसल जंग का बदला नहीं है उसे तो "अंफ़ाल" समझो यानी मालिक की तरफ़ से एक अतिया और इनआम, जो असल उजरत के अलावा दिया जाता है। अल्लाह की राह में जंग करने का असल बदला तो वह है जो अल्लाह तआला आख़िरत में अता फ़रमाएगा। यहाँ जो कुछ मिल जाता है वह किसी का हक़ नहीं है बल्कि अल्लाह की एक मज़ीद बख़शिश है इस लिये इस

बख़शिश के बारे में इस्तिहक़ाक़ का कोई सवाल ही नहीं पैदा होता। यह सब कुछ तो अल्लाह और उस के रसूल का है वह जिस तरह चाहे उसे तक़सीम करे। चुनाचे आगे चल कर उस की तक़सीम का उसूल भी बना दिया। इस तरह जंग के सिलसिले में एक बहुत बड़ी अख़लाक़ी इसलाह कर दी गई मुसलमानों को हमेशा के लिये बता दिया गया कि वह दुनिया के फ़ायदे बटोरने के लिये कभी तलवार नहीं उठाता है बल्कि दुनिया के अख़्लाक़ी बिगाड़ को ठीक करने के लिये और अल्लाह के बन्दों को ग़ैर अल्लाह की गुलामी से आज़ाद कराने के लिये वह मजबूरन उस वक़्त ताक़त का इस्तेमाल करता है जब वह देखता है कि मुख़ालिफ़ ताक़तें उस की आवाज़ को दबा देने के लिये ताक़त के इस्तेमाल करने पर उतर आई हैं और उन्हों ने दावत व तबलीग़ के ज़रिया इसलाह को नामुम्किन बना दिया है इस लिये मुसलमान की नज़र हमेशा उस इसलाह पर रहनी चाहिये जिस के लिये उस ने बेड़ा उठाया है न कि उन माद्दी फ़वाइद पर जो इस मक़सद के लिये कोशिश करने में हासिल हो ही जाते हैं।

2. इस्लामी निज़ाम में इताअते अमर की अहमियत ऐसी ही समझना चाहिये जैसे किसी जिस्म में रूह, इसी लिये मुकम्मल और बग़ैर किसी बहाने के इताअत पर दिलों को आमादा करने के लिये बार बार तवज्जोह दी गई चुनाचे इस जंग के मौक़ा पर भी माले ग़नीमत के सिलसिले में सब से पहले मुकम्मल इताअत का मुतालबा किया गया और कह दिया गया कि यह सब कुछ खुदा और उस के रसूल का है। इस बारे में वह जो कुछ भी फ़ैसला फ़रमायें उस पर दिलों

को राज़ी होना चाहिये।

3. आम तहरीकों का मिज़ाज यह होता है कि वह अपने पैरूओं और कारकुनों के दिल बढ़ाने के लिये उन के कारनामों का ज़िक्र करते हैं और इस तरह शुहरत और नामवरी हासिल करने के जज़्बा को उभार कर लोगों को ईसार और कुर्बानियों के लिये तयार करते हैं चुनाचे बड़े मअरकों या बड़े कारनामों के बाद वह अपने जाँबाज़ों और कारकुनों को ख़िताबात और तमग़े देते हैं। इनआमात तक़सीम करते हैं और तरह तरह से उन को ऊँचा उठाने का ऐसा इन्तिज़ाम करते हैं कि एक तरफ़ तो वह अपनी कारगुज़ारियों का बदला पा कर मुतमइन हो सकें औ आइंदा के लिये और ज़्यादा जाँबाज़ी दिखा सकें और दूसरी तरफ़ दूसरे लोगों के दिलों में उन्हीं की तरह ऊँचा मक़ाम हासिल करने की आरज़ू पैदा हो सके। इस्लामी तहरीक का मिज़ाज इस के बिल्कुल ख़िलाफ़ है। बावजूद इस के कि मुसलमानों के 313 सिपाहियों ने एक हज़ार से ज़्यादा लशकर का मुँह फेर दिया था और बावजूद अपनी बेसरोसामानी के अपने से कई गुना ज़्यादा मुक़ाबिल कुव्वत का ख़ात्मा कर दिया था। लेकिन उन से यही कहा गया कि वह इस वाक़िआ को अपनी बहादुरी या अपनी कारगुज़ारी न समझें यह महज़ अल्लाह का फ़ज़्ल था सिर्फ़ उस की रहमत और फ़ज़्ल का यह नतीजा था कि उन्हों ने अपने दुश्मन को मार भगाया। उन्हें कभी अपने वसाइल और कुव्वत पर भरोसा न करना चाहिये उन की असल ताक़त यह है कि वह अल्लाह पर भरोसा रखें और हमेशा उस के फ़ज़्ल के सहारे मैदान में उतरें ठीक लड़ाई के

वक़्त आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मुट्ठी भर रेत हाथ में ले कर शाहतुल-वुजूह (चेहरे बिगड़ जाएँ) फ़रमाते हुये उसे कुफ़्फ़ार की तरफ़ फेंका था और उस के बाद ही मुसलमान एक दम काफ़िरों पर टूट पड़े और काफ़िरों के पैर उखड़ गये। यह एक ऐसा वाक़िआ है कि जिसे दूसरे लोग अपनी करामत बता कर जो कुछ भी फ़ख़्र करते, थोड़ा था और अगर वह खुद ऐसा न करते तो उन के पैरू (फ़रमाँबरदार) मालूम नहीं इस की बुनियाद पर कैसी कुछ बातें बनाते लेकिन खुद अल्लाह तआला ने कुरआन पाक में मुसलमानों को यह बता कर कि "तुम ने उन्हें क़त्ल नहीं किया बल्कि अल्लाह ने उन को क़त्ल किया" और आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से यह फ़रमा कर कि "तू ने नहीं फेंका बल्कि अल्लाह ने फेंका" और यह कि यह तो सब कुछ इस लिये था कि अल्लाह मोमिनों को एक बेहतरीन आज़माईश से कामियाबी के साथ गुज़ार दे" (अनफ़ाल आयत 17) मुसलमानों को अच्छी तरह बता दिया कि दरअसल सारे कामों का इन्तिज़ाम अल्लाह के हाथ में है जो कुछ होता है उस के हुक्म और इरादे से होता है मोमिन का काम अल्लाह पर भरोसा करना और हर हाल में खुदा और रसूल की पूरी पूरी इताअत करना है इसी में उन का इम्तिहान है।

4. इस्लामी तहरीक में जिहाद ही वह आख़िरी इम्तिहान है जिस में तहरीक के हर अलमबरदार की पूरी पूरी जाँच होती है। जब कुफ़्र और इस्लाम की कशमकश इस दरजे में पहुँच जाये कि मोमिन को दावत व तबलीग़ के काम को बाक़ी

रखने के लिये मजबूरन मैदान में उतरना ही पड़े तो फिर मैदान से वापसी उस के लिये मुम्किन नहीं रहती। अल्लाह की राह में जंग करते हुये मैदान से भागने का मतलब इस के सिवा और क्या हो सकता है कि या तोः-

क. मोमिन को अपनी जान इस मक़सद से ज़्यादा अज़ीज़ है जिस के लिये वह लड़ाई लड़ी जा रही है। या

ख. उस का यह ईमान कमज़ोर है कि दरअसल मौत और ज़िन्दगी अल्लाह के हाथ है और जब तक उस का हुक्म न हो मौत आ नहीं सकती और जब उस का हुक्म आ जाये तो फिर मौत टल नहीं सकती। या

ग. उस के दिल में अभी अल्लाह की रज़ा और आख़िरत की कामियाबी के अलावा कुछ और आरज़ुएँ भी परवरिश पा रही हैं और दरअसल अभी उस ने अपने आप को ख़ुदा के दीन को क़ायम करने के लिये बिल्कुल वक़्फ़ नहीं कर दिया है।

ज़ाहिर है कि जिस ईमान के साथ इन में से कोई बात शामिल है उसे किस तरह पूरा ईमान कहा जा सकता है, इसी लिये इस पहली अहम जंग के मौक़ा पर मुसलमानों को साफ़-साफ़ बता दिया कि जंग से मुँह मोड़ना मुसलमान का काम नहीं। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि तीन गुनाह ऐसे हैं जिन के साथ कोई नेकी फ़ायदा नहीं दे सकती। एक शिर्क, दूसरे माँ, बाप की हक़तलफ़ी (हक़ मारना) और तीसरे अल्लाह की राह में लड़ी जाने वाली लड़ाई से मुँह फेर कर भागना।

5. अल्लाह की राह में पेशक़दमी करने में आदमी उस वक़्त भी सुस्त हो जाता है जब दुनियावी तअल्लुक़ात से उस की

दिलचसपी एक जायज़ हद से आगे बढ़ जाती है। माल और औलाद उस राह की बड़ी रूकावटें बन जाती हैं चुनाचे इस मौक़ा पर भी अल्लाह तआला ने माल और औलाद की सही हैसियत से मुसलमानों को बाख़बर किया फ़रमाया कि "जान रखो तुम्हारे माल और तुम्हारी औलाद हक़ीक़त में तुम्हारी आज़माइश का सामान हैं। और अल्लाह के पास अज्र (इनआम) देने के लिये बहुत कुछ है (सूरह अनफ़ाल आयत 28) माल व दौलत देकर अल्लाह तआला मोमिन की आज़माइश करता है कि आया वह उस को सही मसरफ़ (काम) में लाता है या नहीं। और यह कि कहीं माल की मुहब्बत दिल में इतनी तो नहीं बढ़ जाती कि जब अल्लाह की राह में उस की बाज़ी लगाने का वक़्त आ जाये तो दिल तंग हो जाये या उस की ख़ातिर हक़ की जद्दोजहद में कुछ सुस्ती आ जाये। इसी तरह औलाद भी इंसान के इम्तिहान का दूसरा परचा है एक तरफ़ तो मोमिन को उन के जायज़ हुकूक़ इस तरह अदा करने हैं कि वह उन्हें अल्लाह की बन्दगी और उस की इताअत की राह पर लगाने की पूरी कोशिश करे और दूसरी तरफ़ यह भी देखना है कि कहीं वह उन की फ़ितरी मुहब्बत जो अल्लाह ने हर इंसान के दिल में रख दी है बढ़ कर इतनी हावी तो नहीं हो जाती कि अल्लाह की राह पर चलने के लिये उस के क़दमों को बोझल कर दे। माल और औलाद के सिलसिले में यही दोहरा इम्तिहान है जिस के लिये हर मोमिन को तयार रहना चाहिये।

6. सब्र, हर तहरीक की जान है और इस्लामी तहरीक के लिये

तो यह सिफ़त ऐसी ही ज़रूरी है जैसे जिस्म के लिये रूह ज़रूरी है। मक्के में मुसलमान जिन हालात से गुज़रे थे वहाँ भी इस सिफ़त को ज़्यादा से ज़्यादा पैदा करने की तरफ़ तवज्जोह दी गई थी लेकिन वहाँ सूरते हाल यह थी कि सिवाए मज़ालिम बरदाश्त करने के और कोई सूरत मुसलमानों के सामने नहीं थी। अब तहरीक दूसरे मरहले में दाख़िल हो रही थी अब इस का अंदेशा (डर) भी था कि ख़ुद मुसलमानों के हाथों किसी पर ज़्यादती हो जाये। इस लिये उन बदले हुये हालात में भी इस सिफ़त को बरक़रार रखने और बढ़ाने की ताकीद की गई। फ़रमाया "ऐ ईमान वालो! जब किसी गिरोह से तुम्हारा मुक़ाबिला हो तो साबित क़दम रहो और अल्लाह को कसरत से याद करो उम्मीद है कि तुम्हें कामियाबी नसीब होगी। अल्लाह और उस के रसूल की इताअत करो और आपस में झगड़ो नहीं कि तुम्हारे अन्दर कमज़ोरी पैदा हो जाएगी और तुम्हारी हवा उखड़ जाएगी। सब्र से काम लो यक़ीनन अल्लाह सब्र करने वालों के साथ है (सूरह अनफ़ाल आयत 45-46) यहाँ सब्र के मफ़हूम में यह सब बातें शामिल हैं कि:-

1. अपने जज़बात और ख़्वाहिशात को क़ाबू में रखा जाये।

2. जल्दबाज़ी और घबराहट और हरास (ख़ौफ़) से बचा जाये।

3. किसी लालच या नामुनासिब जोश को क़रीब न आने दिया जाये। हर काम ठंडे दिल और जचे तुले फ़ैसले के साथ किया जायें।

4. ख़तरे और मुश्किलें सामने आएँ तो क़दम डगमगा न

जाये।

5. जोश और ग़ैज़ व ग़ज़ब का शिकार हो कर कोई ग़लत काम न कर डालें।

6. मसाइब का हमला हो और हालात बिगड़ते नज़र आएँ तो बेचैनी और घबराहट की वजह से हवास परेशान न हो जाएँ।

7. मक़सद के हासिल कर लेने का शौक़ इतना न बढ़ जाये कि जल्दबाज़ी में किसी नाक़िस तदबीर पर अमल कर डाला जाये।

8. दुनियावी फ़ायदे और लालच नफ़्स को इतना न लुभा लें कि उस के मुक़ाबिले में कमज़ोरी दिखा कर उन फ़ायदों की तरफ़ खिंच जाएँ अब उन बदले हुये हालात में मोमिनों को अपने सब्र का इम्तिहान कुछ दूसरे तरीक़ों से भी देना था।

9. मक़सद की मुहब्बत का ग़लबा कभी कभी इतना बढ़ जाता है कि इंसान उस के मुक़ाबिले में हक़ और इंसाफ़ का पूरा पूरा लिहाज़ नहीं रखता और समझता है कि मक़सद की ख़ातिर ऐसा करने में कोई हर्ज नहीं है लेकिन इस्लामी तहरीक जो सरासर हक़ की बुनियादों पर उठती है अपने पैरुओं को किसी मौक़ा पर भी हक़ और इंसाफ़ से क़दम हटाने नहीं देती। चुनाचे कुफ़्र और इस्लाम की इस अहम कशमकश के मौक़ा पर दूसरी अख़लाक़ी और तरबियती हिदायात के साथ मुख़ालिफ़ीन से सियासी मुआहिदों के बारे में भी मुसलमानों को ऐसी हिदायात दी गईं जो सरासर इंसाफ़ और हक़ पर मबनी (निर्भर) थीं। उन हिदायात की रूह यह है कि मुसलमान किसी हाल में भी फ़तेह और शकिस्त और माद्दी फ़ायदों को मेयार बना कर मुआहिदों

की ख़िलाफ़वर्ज़ी न करें, अल्लाह पर भरोसा रखें और पूरी दियानतदारी के साथ मुआहिदों का पास करें चाहे उस की वजह से उन्हें खुद अपने भाई मुसलमानों की एआनत से ही क्यों न हाथ उठाना पड़े।

यह हैं इस तबसरे की चन्द मोटी-मोटी खुसूसियात जो बद्र की लड़ाई के बाद कुरआन पाक में इस फ़ैसलाकुन जंग के बारे में किया गया है। इन से अंदाज़ा हो साकता है कि इस्लामी तहरीक दुनिया की तमाम दूसरी तहरीकों के मुक़ाबिले में किस दरजा मुम्ताज़ है और वह अपने पैरुओं की तरबियत किस अंदाज़ पर करती है।

ग़ज़व-ए-उहुद

अस्बाबः- बद्र की लड़ाई में अगरचे मुसलमानों को फ़तेह(जीत) हासिल हुई थी लेकिन उस जंग का मतलब यह था कि गोया मुसलमानों ने भिड़ों के छत्ते में पत्थर मारे थे। बद्र की लड़ाई पहली लड़ाई थी जिस में मुसलमानों ने कुफ़्फ़ार का मुक़ाबिला डट कर किया और कुफ़्फ़ार को शकिस्त खा कर वापस जाना पड़ा। इस वाक़िआ ने सारे अरब को मुसलमानों के ख़िलाफ़ चौकन्ना कर दिया था और जो लोग इस नई तहरीक के दुश्मन थे वह तो इस वाक़िआ के बाद और ज़्यादा भड़क गये थे फिर उधर बद्र की लड़ाई में मक्के के जो सरदार मारे गये थे उन के ख़ून का बदला लेने के लिये हज़ारों दिल बेचैन हो गये थे अरब में किसी एक शख़्स का ख़ून अकसर पुश्तों तक लड़ाई का सबब बना रहता था और यहाँ तो ऐसे बहुत से लोग मारे गये थे जिन के ख़ून की क़ीमत सैकड़ों लड़ाईयों से भी अदा न हो

सकती थी हर तरफ़ तूफ़ान के आसार दिखाई देते थे यहूद के वह क़बीले जिन से उस से पहले मुआहिदे हो चुके थे उन्हों ने भी उन मुआहिदों का कोई पास और लिहाज़ नहीं किया और बावजूद इस के कि उन लोगों को ख़ुदा 'रिसालत' आख़िरत और किताब पर ईमान रखने का दावा करने के लिहाज़ से मुसलमानों से ज़्यादा क़रीब होना चाहिये था लेकिन उन की हमदर्दियाँ एक दम क़ुरैश के मुशरिकीन के साथ हो गईं और उन्हों ने खुल्लम खुल्ला मुश्रिकों को मुसलमानों के ख़िलाफ़ जंग के लिये उभारना शुरू कर दिया ख़ास तौर से बनी नज़ीर का एक सरदार कअब बिन अशरफ़ तो इस मुआमले में इन्तिहा से ज़्यादा कमीनापन और अंधी दुश्मनी पर उतर आया। चुनाचे यह अंदाज़ा हो गया कि यहूद न तो पड़ोसी होने का कोई लिहाज़ करेंगे और न उन मुआहिदों का कोई पास करेंगे जो उन्हों ने आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से किये थे।

इन हालात में मदीने की छोटी सी बस्ती चारों तरफ़ से ख़तरे में घिर गई थी और अन्दरूनी तौर पर भी मुसलमानों की हालत अच्छी न थी उन की माली हालत एक तो यूँ ही कमज़ोर थी अब जंग के बाद तो और भी मुश्किलात का सामना करना पड़ रहा था।

मक्के के मुश्रिकीन के दिलों में एक तो यूँ ही मुसलमानों से बदला लेने की आग भड़क रही थी चुनाचे उन के कितने ही बड़े बड़े सरदारों ने बदला लेने की क़समें खा रखी थीं। हर क़बीला जोश और गुस्से से भरा हुआ था कि इन हालात में यहूद की तरफ़ से मक्के वालों को जंग पर उभारने की कोशिशों ने आग पर तेल डालने का काम किया और अभी बद्र की

लड़ाई को मुश्किल से साल भर ही गुज़रा था कि यह ख़बरें मदीना पहुँचने लगीं कि मक्के के मुशिरकीन एक बहुत ज़बरदस्त लश्कर ले कर मदीना पर हमले के लिये बिल्कुल तयार हो चुके हैं।

कुरैश की पेशकदमीः– आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने शव्वाल 3 हिजरी के पहले हफ़्ते में दो लोगों को सही ख़बर लाने के लिये रवाना किया। उन्हों ने आकर ख़बर दी कि कुरैश का लशकर तो मदीने के क़रीब ही आ गया है और मदीने की एक चरागाह उन के घोड़ों ने साफ़ भी कर डाली है अब नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने सहाबा से मशवरा किया कि क्या लशकर का मुक़ाबिला मदीने में ठहर कर किया जाए या बाहर निकल कर जंग की जाए? कुछ सहाबा की राय थी कि मुक़ाबिला मदीने ही में किया जाये। लेकिन कुछ नवजवान जो शहादत के शौक़ से बेताब थे और जिन्हें बद्र की लड़ाई में लड़ने का मौक़ा न मिला था इस बात पर इसरार कर रहे थे कि नहीं मुक़ाबिला बाहर मैदान में निकल कर किया जाये। आख़िरकार उन के इसरार को देख कर नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने यही फ़ैसला फ़रमाया कि बाहर निकल कर जंग की जाये।

मुनाफ़िक़ों का धोका देनाः– कुरैश ने मदीना के क़रीब पहुँच कर उहुद की पहाड़ी पर अपना पड़ाव डाला। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम उस के एक दिन बाद जुमा की नमाज़ पढ़ कर एक हज़ार सहाबा के साथ शह्र से रवाना हुये उन में अब्दुल्लाह इब्ने उबई भी था जो अगरचे बज़ाहिर मुसलमान हो चुका था लेकिन असल में वह मुसलमानों का दुश्मन था। और आख़िर वक़्त तक मुनाफ़िक़ ही रहा यह भी

मुसलमानों के साथ था। उस का असर मानने वाले और भी बहुत से मुनाफ़िक़ मुसलमानों के साथ मिले हुये थे कुछ दूर जा कर अब्दुल्लाह इब्ने उबई अपने साथ तीन सौ लोगों को तोड़ कर अलग हो गया और अब सिर्फ़ 700 सहाबा बाक़ी रह गये। ऐसे नाज़ुक मौक़ा पर उस की यह हरकत एक बहुत सख़्त नफ़सियाती हरबा था लेकिन जिन मुसलमानों के दिल अल्लाह पर ईमान, आख़िरत के यक़ीन और और राहे हक़ में शहीद होने के शौक़ से भरे हुए थे उन पर उस वाक़िआ का कोई नागवार असर नहीं हुआ। और अब यह बचे हुये मुसलमान ही अल्लाह के भरोसे पर आगे बढ़े।

नवजवानों का जोशः- इस मौक़ा पर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपने साथियों का जायज़ा लिया और जो कमसिन (कम उम्र) थे उन्हें वापस फ़रमा दिया। उन नवजवानों में राफ़ेअ और समरा नामी दो नौउम्र भी थे। नोउम्रों को जब फ़ौज से अलग किया जाने लगा तो राफ़ेअ अपने पंजों के बल खड़े हो गये ताकि क़द में कुछ ऊँचे दिखाई देने लगें और ले लिये जाएँ। उन की यह तरकीब चल गई लेकिन समरा को शिर्कत की इजाज़त न मिली तो उस पर उन्हों ने कहा कि जब राफ़ेअ लिये गये हैं तो मुझे भी इजाज़त मिलना चाहिये मैं तो उन को कुश्ती में पिछाड़ लेता हूँ चुनाचे उन के दावा के सुबूत के लिये दोनों में कुश्ती कराई गई और जब उन्हों ने राफ़ेअ को पिछाड़ लिया तो वह भी फ़ौज में ले लिये गये। यह एक छोटा सा वाक़िआ है लेकिन इस से अंदाज़ा होता है कि मुसलमानों में अल्लाह की राह में जिहाद करने का किस दरजा जज़्बा मौजूद था।

फ़ौज की तरतीबः- उहुद का पहाड़ मदीना से तक़रीबन चार

मील के फ़ासले पर है। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपनी फ़ौज को इस तरह लगाया कि पहाड़ पुश्त पर था और कुरैश का लशकर सामने। पुश्त की तरफ़ सिर्फ़ एक रास्ता ऐसा था जिस से पीछे की तरफ़ से हमला होने का डर था। वहाँ आप ने अब्दुल्लाह बिन जुबैर को 50 तीर अंदाज़ दे कर मुक़र्रर कर दिया और हिदायत फ़रमा दी कि "किसी को उस दर्रे के रास्ते से आने न देना और तुम यहाँ से किसी हाल में न हटना। अगर तुम देखो कि परिन्दे हमारी बोटियाँ नोचे लिये जाते हैं तब भी तुम अपनी जगह न छोड़ना"।

कुरैश का साज़–ओ–सामानः– कुरैश इस मौक़ा पर बड़े साज़–ओ–सामान से आये थे। तक़रीबन 3 हज़ार की फ़ौज और जंग का काफ़ी सामान साथ था। अरबों में जिस जंग में औरतें शामिल होती थीं उस में वह जान पर खेल कर लड़ते थे। उन्हें यह ख़याल होता था कि अगर लड़ाई में हार हो गई तो औरतों की बेइज़्ज़ती होगी। इस लड़ाई के मौक़ा पर बहुत सी औरतें भी फ़ौज के साथ थीं उन में से बहुत सी तो वह थीं जिन के बेटे और अज़ीज़ बद्र की लड़ाई में मारे गये थे। और उन्हों ने मन्नतें मानी थीं कि वह उन के क़ातिलों का ख़ून पी कर दम लेंगी।

लड़ाई की इब्तिदाः– कुरैश ने अपनी फ़ौज को बहुत अच्छी तर्बियत दी थी जब लड़ाई शुरू हुई तो सब से पहले कुरैश की औरतों ने दुफ़ (डफ़ली) जोश और ग़ैरत दिलाने वाले अशआर पढ़ना शुरू किये ताकि लड़ने वालों में बद्र के मक़तूलीन (मारा गया) का ग़म और उन के ख़ून का बदला लेने का जोश ख़ूब उभर आये। उस के बाद लड़ाई शुरू हुई शुरू में मुसलमानों का

पल्ला भारी रहा और कुरैश की फ़ौज के बहुत से लोग मारे गये उन की फ़ौज में अबतरी फैल गई और मुसलमान यह समझे कि उन्हों ने मैदान मार लिया। चुनाचे उन्हों ने इस इब्तिदाई फ़ौज को आख़िरी हद तक पहुँचाने के बदले माले ग़नीमत लूटना शुरू कर दिया उधर जो लोग दर्रे की हिफ़ाज़त पर लगाये गये थे उन्हों ने जब देखा कि मुसलमान माल लूटने में लगे हुये हैं और दुश्मन के पैर उखड़ गये हैं तो वह समझे कि लड़ाई का ख़ात्मा हो चुका है और वह भी माले ग़नीमत लूटने के लिये लपके। उन के सरदार हज़रत अब्दुल्लाह बिन जुबैर ने उन्हें रोका और आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का हुक्म याद दिलाया मगर सिवाये चन्द आदमियों के और कोई न रुका।

कुरैश का पीछे से हमलाः- ख़ालिद बिन वलीद ने जो उस वक़्त काफ़िरों के लशकर के एक रिसाले की कमान कर रहे थे उस मौक़ा से फ़ायदा उठाया और पहाड़ी का चक्कर काट कर पीछे से मुसलमानों पर हमला कर दिया। हज़रत अब्दुल्लाह बिन जुबैर और उन के चन्द साथी जो दर्रे की हिफ़ाज़त के लिये बाक़ी रह गये थे उन्हों ने मुक़ाबिला भी किया लेकिन वह काफ़िरों के उस हल्ले को रोक न सके और शहीद हो गये दुश्मन अचानक पीछे से मुसलमानों पर टूट पड़े। उधर जो भागते हुये लोगों ने यह रंग देखा तो वह भी पलट पड़े और अब दोनों तरफ़ से मुसलमानों पर हमला हो गया। इस सूरतेहाल ने मुसलमानों को ऐसा बौखला दिया कि एक दम लड़ाई का पाँसा पलट गया और मुसलमान तित्तर बित्तर हो कर इधर उधर भागने लगे। इन्तिहा यह कि घबराहट में ख़ुद मुसलमानों के हाथ से मुसलमान शहीद हो गये। और इसी

घबराहट में यह ग़लत अफ़वाह उड़ गई कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम शहीद हो गये। इस ख़बर से सहाबा के रहे सहे औसान ख़ता हो गये और कितने ही लोगों ने हिम्मत हार दी।

अल्लाह की मदद और फ़तेहः— उस वक़्त नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को 10-12 सहाबा अपने घेरे में लिये हुये थे। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ज़ख़्मी भी हो चुके थे। सहाबा आप को ले कर एक पहाड़ी की तरफ़ आ गये और ऐन वक़्त पर मुसलमानों को मालूम हो गया कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम बसेहत व आफ़ियत मौजूद हैं। चुनाचे वह फिर सिमट कर आप के गिर्द जमा हो गये लेकिन उस मौक़ा पर मालूम नहीं क्या सूरत पेश आई और किस तरह काफ़िरों के मुँह लड़ाई से मुड़ गये और वह अपनी जीत को मुकम्मल किये बग़ैर मैदान छोड़ कर वापस चले गये।

जब कुफ़्फ़ार कई मंज़िल दूर चले गये तो उन्हें होश आया और उन्हों ने आपस में कहा कि यह हम ने क्या ग़लती की मुसलमानों की ताक़त को बिल्कुल ख़त्म कर देने का जो मौक़ा हाथ आया था उसे इस तरह खो दिया और यूँही लोट आये। चुनाचे उन्हों ने एक जगह ठहर कर मशवरा किया कि अब मदीने पर दोबारा हमला करना चाहिये लेकिन फिर हिम्मत न पड़ी और मक्के वापस चले गये उधर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को भी यह ख़याल था कि कहीं दुश्मन फिर न पलट पड़ें चुनाचे आप ने भी मुसलमानों को जमा कर के फ़रमाया की कुफ़्फ़ार का पीछा करना चाहिये। यह बड़ा नाज़ुक मौक़ा था मगर जो लोग सच्चे मोमिन थे वह अल्लाह के भरोसे पर फिर जान कुर्बान करने के लिये तयार हो गये और नबी

सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम एक मक़ाम हमराउल-असद तक दुश्मन के पीछे गये। यह मक़ाम मदीने से कोई आठ मील के फ़ासले पर है लेकिन जब मालूम हुआ कि कुरैश मक्के वापस हो गये तो आप भी मदीना वापस तशरीफ़ ले आये।

उहुद की लड़ाई में 70 सहाबा शहीद हुये उन में ज़्यादातर अनसार थे मदीने का हर घर मातमकदा बना हुआ था। उस मौक़ा पर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मुसलमानों को हिदायत फ़रमाई कि मातम करना और नौहा कर के रोना पीटना मुसलमान की शान नहीं।

इब्तिदाई शकिस्त के असबाब और मुसलमानों की तर्बियतः– उहुद की लड़ाई में मुसलमानों को जो पहले शकिस्त हुई उस में अगरचे मुनाफ़िक़ों की तदबीरों और चालों को भी बड़ा दख़ल था मगर साथ ही साथ मुसलमानों की अपनी कमज़ोरियों का भी हिस्सा कुछ कम न था तहरीके इस्लामी जिस क़िस्म का मिज़ाज बनाना और अपने कारकुनों की जैसी तर्बियत करना चाहती है उस के लिये अभी पूरा मौक़ा नहीं मिला था अल्लाह की राह में जान की बाज़ी लगाने का यह दूसरा ही मौक़ा था और इस मौक़ा पर कुछ न कुछ कमज़ोरियों का इज़हार हुआ। जैसे माल की मुहब्बत में अपनी डयूटी को छोड़ देना, अपने ज़िम्मेदार के अहकाम की नाफ़रमानी करना, दुश्मन की ताक़त को ख़त्म करने से पहले माले ग़नीमत की तरफ़ मुतवज्जेह होना वग़ैरा। इस लिये इस जंग के बाद भी अल्लाह तआला ने जंग के हालात पर ऐसा तबसरा फ़रमाया जिस में इस्लामी नुक़्त-ए-नज़र से मुसलमानों के अंदर जो कोताहियाँ बाक़ी रह गई थीं उन में से एक एक को ज़ाहिर किया और

उसी से मुतअल्लिक़ ज़रूरी हिदायात दीं। यह हिदायात सूरह आल-इमरान के आख़िरी हिस्से में मिलती हैं। उन में चन्द का ज़िक्र यहाँ किया जाता है। ताकि एक बार फिर यह अंदाज़ा हो सके कि इस्लामी तहरीक में जंग का मक़ाम क्या है और इस्लामी नुक़्त-ए-नज़र से जंग के वाक़िआत और हालात पर किस तरह रौशनी डाली जा सकती है।

तवक्कुलः- मुसलमान जब मुक़ाबिले के लिये चले तो उन की तादाद एक हज़ार के क़रीब थी जब कि दुश्मन की तादाद तीन हज़ार थी उस पर भी कुछ दूर जा कर तीन सौ मुनाफ़िक़ीन एक दम अलग हो गये और अब मुसलमान 700 ही रह गये। लड़ाई का सामान भी कम था और अब एक तिहाई फ़ौज भी कम हो गई उसी नाज़ुक मौक़ा पर कुछ लोगों के दिल टूटने लगे। उस वक़्त सिर्फ़ अल्लाह पर ईमान और उस की मदद पर भरोसा ही था जो मुसलमानों को दुश्मन के मुक़ाबिले के लिये ले गया। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मुसलमानों को इस मौक़ा पर जो तसल्ली दी थी उस का ज़िक्र अल्लाह तआला ने इस तरह फ़रमाया है "याद करो जब तुम में से दो गिरोह बुज़दिली दिखाने पर आमादा हो गये थे। हालाँकि अल्लाह उन की मदद के लिये मौजूद था और मोमिनों को तो अल्लाह पर ही भरोसा करना चाहिये आख़िर इस से पहले बद्र की लड़ाई में अल्लाह तुम्हारी मदद कर चुका है हालाँकि तुम बहुत कमज़ोर थे। लिहाज़ा तुम को चाहिये कि अल्लाह की नाशुक्री से बचो उम्मीद है कि अब तुम शुक्रगुज़ार बनोगे। याद करो जब तुम (नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) मोमिनों से कह रहे थे "क्या तुम्हारे लिये यह बात काफ़ी नहीं कि अल्लाह तीन हज़ार

फ़रिशते उतार कर तुम्हारी मदद करे बेशक अगर तुम सब्र करो और ख़ुदा से डरते हुये काम करो तो जिस वक़्त दुश्मन तुम्हारे ऊपर चढ़ कर आएँगे उस वक़्त तुम्हारा रब पाँच हज़ार फ़रिशतों से तुम्हारी मदद करेगा। यह बात अल्लाह ने तुम्हें इस लिये बता दी है कि तुम ख़ुश हो जाओ और तुम्हारे दिल मुतमईन हो जाएँ। फ़तह व नुस्रत जो कुछ भी है अल्लाह की तरफ़ से है जो बड़ी कुव्वत वाला और दाना व बीना है"। (आल इमरान आयत नम्बर 122 ता 126)

मुसलमानों को आख़िरी तौर पर समझा दिया गया कि दर असल माद्दी कुव्वत पर भरोसा मुसलमान का काम नहीं उस की कुव्वत का असल सरचश्मा अल्लाह पर ईमान और उस की मदद पर भरोसा है।

माल की मुहब्बतः– उहुद में शकिस्त का बड़ा सबब यह था कि मुसलमान ऐन लड़ाई के मौक़ा पर माल की मुहब्बत में गिरिफ़तार हो गये। और दुश्मन को पूरी तरह से मार भगाने से पहले माल की तरफ़ मुतवज्जे हो गये यहाँ तक कि जिन लोगों के ज़िम्मे दर्रे की हिफ़ाज़त थी उन से भी इस बारे में कोताही हो गई और इस तरह लड़ाई का पाँसा पलट गया। चुनाचे अल्लाह तआला ने मुसलमानों के दिलों से माल की मुहब्बत निकालने के लिये उसी मौक़ा पर माल की मुहब्बत पैदा करने वाले एक सब से बड़े सबब को भी ख़त्म फ़रमाया यानी उसी मौक़ा पर सूद को हराम ठहराया सूद के कारोबार करने वालों के दिलों में माल की मुहब्बत ऐसी रच बस जाती है कि वह उन को किसी ऊँचे काम के लायक़ नहीं छोड़ती। उसी से एक तबक़ा में लालच, बख़ीली, ख़ुदग़र्ज़ी और माल की मुहब्बत पैदा होती है

और दूसरे तबक़े में नफ़रत, गुस्सा और बुग्ज़ व हसद पैदा होता है।

कामियाबी की ज़मानतः- अगर हिम्मतों को बुलंद रखने के लिये कोई मुहरिक मौजूद न हो तो नाकामी के बाद हिम्मतों में कमी आ ही जाती है। उहुद में मुसलमानों को शकिस्त हुई थी। हो सकता था कि कुछ लोगों के दिल टूटने लगते तो उस मौक़ा पर मुसलमानों को ज़मानत दी गई कि तुम को न कम हिम्मत होना चाहिये और न ग़म करना चाहिये जीत तुम्हारी ही होगी बशर्ते कि तुम मोमिन हो। तुम ईमान पर क़ायम रहो और उस के तक़ाज़े पूरे करते रहो तुम्हारा इतना ही काम है इस के बाद तुम को सरबुलंद करना और फ़िक्र और ग़म से निजात देना अल्लाह का काम है। रह गई यह वक़्ती तौर पर कुछ तकलीफ़ें और यह शकिस्त तो तुम्हारे मुक़ाबिल गिरोह को भी ऐसी ही मुसीबतें आया करती हैं। जब वह बातिल पर होते हुये हिम्मत नहीं हारते तो तुम हक़ पर होते हुये क्यों फ़िक्र करते हो। तुम तो जन्नत के ख़्वाहाँ (चाहने वाला) हो। तो क्या तुम यह समझते हो कि तुम जन्नत में यूँही चले जाओगे हालाँकि अभी अल्लाह ने यह तो जाँचा ही नहीं कि तुम में से कौन उस की राह में जानें लड़ाने वाले हैं। और कौन उस की ख़ातिर नाख़ुशगवार हालात पर सब्र करने वाले हैं। (आल इमरान आयत 139 ता 142)

इस्लामी तहरीक का असल मुहरिकः- यूँ तो हर तहरीक में कोई न कोई मरकज़ी शख़्सियत इस तहरीक की जान होती है लेकिन उसूली तहरीकों की बक़ा और तरक़्क़ी का मदार कभी भी किसी शख़्सियत पर नहीं होता बल्कि उन उसूलों की पुख़्तगी और सदाक़त पर होता है जिसे वह तहरीक लेकर उठी है।

इस्लामी तहरीक के लिये अंबिया ए केराम अलैहिमुस्सलाम की शख़्सियतें जितनी अहम होती हैं उस का अंदाज़ा लगाना कुछ मुश्किल नहीं। लेकिन चूँकि यह तहरीक एक उसूली तहरीक है और उस की बक़ा और तरक़्क़ी का मदार ख़ालिस उन उसूलों की कुव्वत पर होता है जो इस्लाम पेश करता है इस लिये मुसलमानों को यह बात बताना भी ज़रूरी था कि कहीं उन के ज़ेहनों के किसी गोशे में यह बात न पड़ी रह जाये कि जब तक नबी का मुबारक वजूद उन के दर्मियान मौजूद है उसी वक़्त तक वह अल्लाह के दीन का अलम (झंडा) बुलंद करेंगे। लेकिन अगर किसी वक़्त वह उस ज़ाते मुबारक (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की बराहे रास्त रहनुमाई से महरूम हो जाएँ तो वह उस राह से हट कर कोई और राह इख़्तियार कर लेंगे। चुनाचे उहुद के मैदान में जब यह ग़लत ख़बर मशहूर हो गई कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम शहीद हो गये तो कुछ मुसलमानों के दिल छोटे हो गये और उन्हों ने सोचा कि जब हुज़ूर ही का साया उठ गया तो अब लड़ कर क्या करेंगे इस ख़याल की इसलाह के लिये उस मौक़ा पर उन्हें यह समझाया गया कि देखो मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) इस के सिवा कुछ नहीं कि बस एक रसूल हैं। उन से पहले और रसूल भी गुज़र चुके हैं फिर क्या अगर वह मर जाएँ या क़त्ल कर दिये जाएँ तो तुम लोग उलटे पाँव फिर जाओगे याद रखो जो उलटा फिरेगा वह अल्लाह का कुछ नुक़सान न करेगा। अलबत्ता जो अल्लाह के शुक्रगुज़ार बन्दे बन कर रहेंगे उन्हें वह अज्र देगा" (आल इमरान आयत 144) तुम ने जिस दीन को सोच समझ कर इख़्तियार किया है उस पर क़ायम रहने और उसे

क़ायम करने के लिये यह ज़रूरी नहीं है कि अल्लाह के नबी हमेशा तुम्हारे साथ मौजूद रहें बल्कि यह तो तुम्हारी अपनी फ़लाह व बहबूदी का सौदा है इस पर क़ायम रहोगे तो ख़ुद ही कुछ पाओगे और इस दीन की असल कुव्वत वह सच्चाई है जिसे यह पेश करता है। उस की सरबुलंदी का मदार न तुम्हारी क़ुव्वतों पर है और न किसी ख़ास शख़्सियत पर।

कमज़ोरी की जड़:- इंसान की तमाम कमज़ोरियों की जड़ मौत का डर है। उस मौक़ा पर उन्हें याद दिलाया गया कि मौत के डर से भागना बिल्कुल फ़ुज़ूल है कोई जानदार उस वक़्त तक मर नहीं सकता जब तक उस की मौत का वक़्त न आ जाये अल्लाह के उस मुक़र्रर किये हुये वक़्त से पहले न कोई मर सकता है और न उस के बाद एक लमहा के लिये जी सकता है। लिहाज़ा तुम को मौत से बचने की फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं। फ़िक्र इस बात की होना चाहिये कि ज़िन्दगी की जो मुहलत मिली हुई है वह कहाँ सर्फ़ हो रही है दुनिया कमाने में या आख़िरत हासिल करने में? इस लिये जो शख़्स दुनिया कमाने के लिये अपनी मेहनतें लगा देता है तो फिर उसे जो कुछ मिलता है इसी दुनिया में मिल जाता है लेकिन जो आख़िरत के सवाब के लिये काम करता है तो फिर उसे अल्लाह तआला आख़िरत का सवाब देगा। जिन लोगों को अल्लाह का दीन कुबूल करने, उस पर क़ायम रहने और उस को क़ायम करने की जद्दोजहद करने की नेमत हासिल हो चुकी है उन्हें इस सब से ज़्यादा क़ीमती नेमत की क़द्र करना चाहिये और उस की ख़ातिर अपना सब कुछ लगा देना चाहिये। इस का नतीजा अच्छा ही निकलेगा आख़िरत की दायमी कामियाबी उन के हिस्से

में आयेगी। और अल्लाह की इस नेमत का शुक्र अदा करने वालों को अल्लाह तआला अपनी बेहतरीन नेमतों से नवाज़ेगा और वह अपने मालिक से बेहतरीन जज़ा पाएँगे।

उहुद की शकिस्त के बाद

दो एक क़बीलों को छोड़ कर अरब के तक़रीबन तमाम ही क़बाइल इस नई उठती हुई इस्लामी तहरीक के मुख़ालिफ़ थे इस तहरीक की ज़द उन के आबाई मज़हब और रस्म व रिवाज पर पड़ती थी उस का तक़ाज़ा था कि इंसान अख़लाक़ी एतबार से बुलंद हो और उन बातों को छोड़े जो अरब में आम तौर पर फैली हुई थीं जैसे शराब, जुवा, ज़िना और लूट मार वग़ैरा। बद्र की जंग से पहले बहुत से क़बीले यह सोच रहे थे कि किस तरह इस नई तहरीक को ख़त्म किया जाये लेकिन बद्र में कुरैश की शकिस्त के बाद उन की हिम्मतें भी कुछ पस्त हो गई थीं और यह एक तरह के तरद्दुद (अंदेशा) में पड़ गये थे कि अब क्या रवय्या इख़्तियार किया जाये लेकिन उहुद की लड़ाई के बाद हालत बदल गई और अरब के बहुत से क़बाईल इस्लाम के ख़िलाफ़ उठ खड़े हुये। ऐसे चन्द क़बीलों के वाक़िआत हसब ज़ैल हैं।

क़बाईल की बद अहदीः– 1. मुहर्रम 4 हिजरी में इलाक़ा कुत्न के एक क़बीले जोफ़ीद ने मदीने पर हमले का इरादा किया। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हज़रत अबू सलमा को एक मुख़्तसर सी जमाअत के साथ उन के मुक़ाबिले के लिये रवाना फ़रमाया और हमला करने वाले भाग खड़े हुये।

2. उस के बाद इसी महीनें में कोहिस्तान अरना के एक

क़बीले लेहयान ने मदीने पर चढ़ाई का इरादा किया हज़रत अब्दुल्लाह बिन अनीस, उन के मुक़ाबिले के लिये भेजे गये और उन का सरदार सुफ़ियान क़त्ल हुआ और हमला करने वाले वापस हो गये।

3. सफ़र 4 हिजरी में क़बील-ए-किलाब का सरदार अबू बरा आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और कहा कि चन्द लोग मेरे साथ भेज दीजिये मेरी क़ौम के लोग इस्लाम की दावत सुनना चाहते हैं आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने 70 सहाबा उस के साथ कर दिये। उस में से बहुत से सहाबा सुफ़्फ़ा[1] में से थे। उन लोगों को क़बीले के रईस आमिर बिन तुफ़ैल ने घेर कर क़त्ल करा दिया। इस वाक़िआ से आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को बे इन्तिहा सदमा हुआ। महीना भर तक नमाज़े फ़ज्र में आप ने उन ज़ालिमों के लिये बद-दुआ फ़रमाई। उन 70 सहाबा में से सिर्फ़ एक सहाबी हज़रत अमर बिन उमय्या को आमिर ने यह कह कर छोड़ दिया था कि मेरी माँ ने एक ग़ुलाम आज़ाद करने की मन्नत मानी थी। जा मैं तुझे इस मन्नत में आज़ाद करता हूँ। जब हज़रत अमर बिन उमय्या वापस आ रहे थे तो रास्ते में उन्हें आमिर के क़बीले के दो आदमी मिले आप ने उन्हें क़त्ल

---

1. सुफ़्फ़ा अरबी में चबूतरे को कहते हैं। मस्जिदे नबवी के सहन में एक चबूतरा बना हुआ था जिस पर ऐसे लोग क़याम करते थे जो घर बार वाले न थे उन का मामूल था कि कुछ लकड़ियाँ वग़ैरा काट लाते और उसी से गुज़ारा करते। कुछ दूसरे असहाब भी उन की मदद करते थे उन लोगों का ख़ास काम दीन का इल्म सीखना और ख़ुदा की इबादत करना था।

कर दिया और यह समझे कि हम ने क़बील-ए- आमिर के लोगों की बेवफ़ाई का कुछ तो बदला ले लिया। जब आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को इस बात का इल्म हुआ तो आप ने सख़्त नापसंद फ़रमाया क्यों कि आप उस क़बीले के लोगों को अमान दे चुके थे। और यह बात इस इक़रार के ख़िलाफ़ थी चुनाचे आप ने उन दोनों के ख़ूँबहा अदा कर देने का एलान फ़रमा दिया।

इसी तरह दो और क़बीलों ने भी इसी क़िस्म की हरकत की आप ने उन के कहने से 10 सहाबा को दीन की तालीम के लिये उन के साथ भेज दिया लेकिन उन ज़ालिमों ने बदअहदी की उन में से सात सहाबा कुफ़्फ़ार से लड़ कर शहीद हुये और तीन गिरिफ़तार हो गये उन में हज़रत खुबैब रज़ि० और हज़रत ज़ैद रज़ि० भी थे, दुश्मनों ने उन्हें मक्के में ले जा कर बेच डाला। हज़रत खुबैब ने उहुद की लड़ाई में एक शख़्स हारिस बिन आमिर को क़त्ल किया था। हारिस के बेटों ने हज़रत खुबैब को इस लिये ख़रीद लिया कि वह उन्हें अपने बाप के बदले में क़त्ल कर देंगे। चुनाचे चन्द रोज़ के बाद उन्हों ने आप को शहीद कर डाला इसी तरह हज़रत ज़ैद को सफ़वान बिन उमय्या ने क़त्ल करने के लिये ख़रीदा और ख़रीद कर शहीद कर डाला।

इस तरह एक तरफ़ अरब के क़बीलों से बराबर ऐसी छेड़ छाड़ चली जा रही थी जिस में ज़्यादती मुख़ालिफ़ीन ही की तरफ़ से हो रही थी। और मुसलमान उन के ज़ुल्म बरदाश्त कर रहे थे। साथ ही साथ उसी ज़माने में यहूद के साथ भी ऐसे मुआमलात पेश आये जो मुसलमानों के लिये काफ़ी परेशानी की

वजह बने।

यहूदी उलमा और पैरूओं की मुख़ालिफ़तः- आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अगरचे मदीना तशरीफ़ लाने के बाद यहूदियों के क़बीलों से मुख़तलिफ़ क़िस्म के मुआहिदे कर लिये थे और उन को इतमीनान दिला दिया था कि उन के जान व माल से कोई तअर्रुज़ (रोक) न किया जायेगा और उन को हर क़िस्म की मज़हबी आज़ादी हासिल होगी लेकिन यहूद के उलमा और पीर ख़ास तौर पर इस्लामी तहरीक की तरक़्क़ी से बेचैन रहते थे और यह बिला सबब न था। चन्द असबाब हसब ज़ैल हैं:-

(1) अब तक मज़हबी एतबार से यहूद को एक क़िस्म की बड़ाई हासिल थी और सब लोग उन को ख़ुदा परस्ती और दीनदारी के एतबार से क़ाबिले इ़ज़्ज़त समझते थे लेकिन अब इस्लामी तहरीक के फैलने से उन की ग़लत मज़हबिय्यत और पेशावाराना ख़ुदा परस्ती की पोल ख़ुलती जाती थी। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के मवाइज़ सुन कर लोगों को मालूम होता था कि वाक़ई सच्ची मज़हबिय्यत किसे कहते हैं और हक़ीक़ी ख़ुदा परस्ती का मफ़हूम क्या है? इस तरह उन आलिमों और पैरूओं का "कारोबार" मद्धम (धीमा) पड़ता जाता था।

2. क़ुरआन करीम में यहूद के लोग और ख़ास तौर पर उन के अह्ले इल्म और दीनदार क़िस्म के लोगों के अख़लाक़ और मुआमलात पर खुली खुली तनक़ीदें नाज़िल हो रही थीं जैसे "वह झूट बातों को सुनने वाले और हराम माल के बड़े खाने वाले हैं" (सूरह मायदा आयत 42) "तू उन में से अकसर को देखेगा कि गुनाह और ज्यादती की तरफ़ तेज़ी से बढ़ने वाले

हैं (मायदा आयत 62) "यह सूद खाने वाले हैं हालाँकि उन को सूद से मना कर दिया गया था" और यह लोगों का माल खा लेते हैं" (निसा आयत 161) इसी तरह की बहुत सी तनक़ीदें सूरह बक़रा, मायदा और आल इमरान वग़ैरा में मौजूद हैं। इन सब को सुन कर सिवाए चन्द नेक नफ़्स लोगों के उन के अकसर लोग चराग़पा हो जाते थे और अंधा धुन्द इस्लामी तहरीक की मुख़ालिफ़त पर उतर आते थे।

3. इस्लाम के बढ़ते हुये इक़तिदार को देख कर उन्हें यह ख़तरा साफ़ दिखाई दे रहा था कि एक न एक दिन उन्हें उस के आगे सिर झुकाना ही पड़ेगा।

चुनाचे इन्हीं असबाब की बिना पर यहूद इस्लामी तहरीक के सख़्त दुश्मन हो गये थे।

ग़ज़्व-ए-बनी क़ैनक़ाअः- सब से पहले बद्र की फ़तेह के बाद यहूद ने कान खड़े किये और उन्हें यह अंदेशा साफ़ दिखाई देने लगा कि अब इस्लाम एक ताक़त बनता जाता है चुनाचे बद्र की लड़ाई के फ़ौरन बाद ही शव्वाल 2 हिजरी में यहूद के क़बीले बनी क़ैनक़ाअ ने मुसलमानों के ख़िलाफ़ लड़ाई का एलान कर दिया और आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से जो मुआहिदा किया था उस को तोड़ डाला। इस जंग का फ़ौरी सबब यह हुआ कि एक यहूदी ने एक मुसलमान ख़ातून की बेहुरमती की। उन के शौहर ने बेताब हो कर एक यहूदी को मार डाला। उस पर यहूदियों ने उस मुसलमान को क़त्ल कर दिया। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मुआमिले को रफ़ा दफ़ा फ़रमाने की कोशिश की लेकिन यहूद ने कहा हम क़ुरैश नहीं हैं कि जो बद्र में मुँह फेर कर चले गये हम से वास्ता

पड़ा तो दिखा देंगे कि लड़ाई इसे कहते हैं। इस तरह जब यहूद की तरफ़ से मुआहिदे की परवाह किये बग़ैर लड़ाई का एलान हुआ तो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने लड़ाई की तयारी की यहूद ने अपने आप को अपने क़िले में महफ़ूज़ कर लिया। 15 दिन के मुहासरे (घेरा डालना) के बाद यह तैय पाया कि यहूद को जला वतन कर दिया जाये चुनाचे सात सौ यहूद जला वतन कर दिये गये।

कअब बिन अशरफ़ का क़त्लः– यहूद में कअब बिन अशरफ़ मशहूर शायर था। उस ने बद्र की लड़ाई के बाद ऐसे अशआर लिखे कि जिन से मुसलमानों के ख़िलाफ़ मक्के में आग लग गई। उस ज़माने में शायरों का बड़ा असर था। उस ने बद्र की लड़ाई में क़त्ल होने वाले कुरैश के ऐसे पुरदर्द मरसिये लिखे और फिर उन्हें जा कर मक्के में सुनाया कि जो सुनता था सिर पीटता था और रोता था फिर मदीने में आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की हिज्व में अशआर कहे और लोगों को तरह तरह से आप के ख़िलाफ़ उभारा। एक बार तो एक दावत के बहाने बुला कर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को क़त्ल कर देने की भी साज़िश की। उन हालात के पेशे नज़र आप ने सहाबा से मशवरा किया कि क्या होना चाहिये। चुनाचे आप की मर्ज़ी से हज़रत मुहम्मद बिन मुस्लिमा ने कअब बिन अशरफ़ को रबीउल–अव्वल 3 हिजरी में क़त्ल कर दिया।

बनू नज़ीर का इख़राजः– बनू नज़ीर के यहूदियों ने कई मुआमलात में बदअहदी की और कई मरतबा ऐसी ख़ुफ़िया (छुपी हुई) साज़िशें कीं जिन का मक़सद आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को क़त्ल करना था। इस मक़सद के लिये उन

को मक्के के कुरैश ने भी उभारा था जब उन की हरकतें हद से बढ़ गईं तो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उन के क़िले का मुहासिरा कर लिया। यह मुहासिरा 15 दिन तक जारी रहा। आख़िरकार मजबूर हो कर बनू नज़ीर इस शर्त पर राज़ी हो गये कि वह अपना जितना माल व असबाब ऊँटों पर लाद कर ले जा सकें ले जाएँ। और अपने घरों को छोड़ कर निकल जाएँ इस मुआहिदे की रू से उन के कितने ही सरदार ख़ैबर चले गये यह लोग अपने साथ बहुत सा साज़ व सामान ले गये सिर्फ़ वही सामान पीछे छोड़ा जिसे यह ले जा नहीं सकते थे।

अब मुसलमानों के दोनों दुश्मन यानी मुश्रिकीने अरब ख़ुसूसन मक्के के कुरैश और यहूदी मिल कर मुसलमानों का ख़ात्मा कर डालने की तरकीबें सोचने लगे और तमाम क़बाइल ने मिल कर हमला करने की तयारियाँ शुरू कर दीं इब्तिदा में तो जब भी आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को यह मालूम हुआ कि क़बाइल मदीना पर हमला करने की तयारियाँ कर रहे हैं तो आप मुसलमानों की जमइय्यत (जमाअत) ले कर उन के मुक़ाबिले के लिये निकले लेकिन दुश्मन ने मुक़ाबिला न किया और भाग खड़ा हुआ। एक बार मुहर्रम 5 हिजरी में आप ज़ातुर्रिक़ाअ तक तशरीफ़ ले गये और दूसरी बार रबीउल-अव्वल 5 हिजरी में दोमतुल-जनदल तक।

ग़ज़्व-ए-अहज़ाब[1]

बनू नज़ीर मदीने से निकल कर ख़ैबर पहुँचे यहाँ उन्हों ने इस्लाम के ख़िलाफ़ एक बड़ी साज़िश शुरू की आस पास के क़बीलों को मुसलमानों के ख़िलाफ़ भड़काया। मक्के में जा कर कुरैश को लड़ाई के लिये तयार किया और कहा कि अगर सब मिल कर हमला करें तो इस नई तहरीक को कुचल डाला जाये। कुरैश तो इस बात के लिये तयार ही थे। चुनाचे यहूदियों के बहुत से क़बीलों ने और मक्के के कुरैश ने मिल कर एक बहुत बड़ा लशकर तयार किया जिस की तादाद का अंदाज़ा 10 हज़ार किया जाता है।

जब आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को मालूम हुआ कि इतने बड़े पैमाने पर मदीना पर चढ़ाई की तयारियाँ हो रही हैं तो आप ने सहाबा से मशवरा किया। हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ि० ने मशवरा दिया कि खुले मैदान में इतनी बड़ी तादाद से मुक़ाबिला मुनासिब नहीं है। हमारा लशकर किसी महफ़ूज़ मक़ाम में रहे और उस के गिर्द ख़न्दक़ खोद ली जाये ताकि दुश्मन बराहे रास्त हमला न कर सके यह राय पसंद की गई और ख़न्दक़ खोदने की तयारियाँ होने लगीं।

ख़न्दक़ की तयारी:– मदीना तीन तरफ़ से मकानात और नख़लिस्तान से घिरा हुआ था, सिर्फ़ एक रुख़ खुला हुआ था

---

1. इस ग़ज़्वा का नाम ग़ज़्व-ए-ख़नदक़ भी है क्यों कि इस में ख़नदक़ खोद कर अपना बचाव किया गया था। अहज़ाब अरबी में फ़ौजों को कहते हैं चूँकि इस में कुफ़्फ़ार की फ़ौजें एक साथ उमड आई थीं इस लिये इस ग़ज़्वा को ग़ज़्व-ए-अहज़ाब भी कहते हैं।

आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने तीन हज़ार सहाबा को साथ ले कर उसी रुख़ पर ख़न्दक़ खोदने का हुक्म दिया। यह काम 8 ज़ीक़ादा 5 हिजरी को शुरू हुआ। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ख़ुद ख़न्दक़ की दाग़ बेल डाली और दस-दस ग़ज़ ज़मीन दस-दस आदमियों पर तक़सीम कर दी। ख़न्दक़ पाँच गज़ गहरी खोदना था बीस दिन के अंदर 3 हज़ार मुसलमानों ने यह ख़ान्दक़ तयार कर ली ख़न्दक़ खोदने के दर्मियान आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ख़ुद तमाम लोगों के साथ काम में मसरूफ़ रहे। एक जगह पर इत्तिफ़ाक़ से एक चट्टान आ गई। वह किसी तरह टूटने में न आती थी। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम तशरीफ़ लाये और एक कुदाल ऐसा मारा कि सारी चट्टान चूरा-चूरा हो गई। यह वाक़िआ नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के मोजिज़ात में से एक मोजिज़ा है।

कुफ़्फ़ार का हमलाः- कुफ़्फ़ार के लशकर ने तीन हिस्सों में तक़सीम हो कर मदीने पर तीन तरफ़ से हमला किया। यह हमला इन्तिहाई शदीद था इस का नक़शा कुरआन पाक में इन अलफ़ाज़ में खींचा गया है।

"जब दुश्मन ऊपर की तरफ़ (मशरिक़ से) और नशीब की तरफ़ (मग़रिब से) तुम पर टूट पड़े और जब आँखें फटी की फटी रह गई। और कलेजे मुँह को आने लगे और तुम ख़ुदा के बारे में तरह-तरह के गुमान करने लगे उस वक़्त मुसलमानों की जाँच का वक़्त आ गया। और बुरी तरह झिंझोड़ डाले गये (सूरह अहज़ाब आयत 10-11)

यह वक़्त बड़े ही सख़्त इम्तिहान का था। एक तरफ़ सर्दी

का इन्तिहाई सख़्त मोसम, खाने पीने के सामान की कमी, लगातार कई–कई वक़्त के फ़ाक़े, न रातों की नीन्द, न दिन का आराम, हर वक़्त जान का ख़तरा, माल और औलाद सब कुछ दुश्मन की ज़द पर, मुक़ाबिले में बेपनाह लशकर का हुजूम, यह सब वाक़िआत ऐसे थे कि इस हालत में वही लोग साबित क़दम रह सकते थे जिन के ईमान सच्चे और मज़बूत थे। कमज़ोर ईमान वाले और मुनाफ़िक़ीन इन हालात का मुक़ाबिला नहीं कर सकते थे चुनाचे मुसलमानों की फ़ौज में जो मुनाफ़िक़ घुसे हुये थे वह इस मौक़ा पर साफ़ खुल कर सामने आ गये उन लोगों ने कहना शुरू कर दिया कि "हम से अल्लाह ने और उस के रसूल ने (फ़तेह व नुस्रत के) जो वादे किये थे वह सब धोका ही था" (अहज़ाब आयत 12)। उन लोगों ने अपनी जान बचाने के लिये बहाने ढूँढना शुरू कर दिये और कहने लगे कि "ऐ यसरिब वालो वापस चले चलो। आज तुम्हारा कोई ठिकाना नहीं है" उन लोगों ने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के सामने आकर कहना शुरू किया कि हमें तो इजाज़त दे दी जाये ताकि हम अपने घरों पर ही रह कर हिफ़ाज़त करें। हमारे घर बिल्कुल ग़ैर महफ़ूज़ हैं (अहज़ाब आयत 14) लेकिन जिन लोगों के दिलों में ईमान मौजूद था और जो अपने ईमान के दावा में सच्चे थे उन की हालत उस मौक़ा पर बिल्कुल दूसरी थी। उन्हों ने जब काफ़िरों के उस लशकर को देखा तो वह बोल उठे "यही तो (हालात) हैं जिन का वादा हम से अल्लाह और उस के रसूल ने किया था"। और इन हालात को देख कर उन के अंदर ईमान का जज़्बा ताज़ा हो गया और वह ज़्यादा फ़रमाँबरदारी के लिये तयार हो गये। इन सख़्त हालात नें उन के अंदर ज़र्रा

बराबर भी तबदीली ना पैदा होने दी"। (अहज़ाब 22-23)

दुश्मन तक़रीबन एक महीने तक घेरा डाले पड़े रहे। यह मुहासरा इतना सख़्त था कि मुसलमानों को तीन-तीन वक़्त तक खाना मयस्सर न आता था। मुहासरा इन्तिहाई शदीद और ख़तरनाक हो चुका था। मुहासरा करने वाले ख़न्दक़ को पार नहीं कर सकते थे। इस लिये वह दूसरी तरफ़ ही ठहरे हुये थे आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपनी फ़ौज को ख़न्दक़ के मुख़तलिफ़ हिस्सों पर लगा दिया था। कुफ़्फ़ार बाहर से पत्थर और तीर बरसाते थे। और इधर से भी जवाब दिया जाता था। इस दर्मियान में इक्का दुक्का हमले भी हो जाते थे। कभो-कभी कुफ़्फ़ार का दबाव इतना बढ़ जाता था कि उन को ख़न्दक़ के उस पार रोकने के लिये पूरी मुसतअदी (चाक़ व चौबन्द) से जम कर मुक़ाबिला करन पड़ता था यहाँ तक कि दो एक बार ऐसा भी हुआ कि नमाज़ तक क़ज़ा हो गई।

अल्लाह की मदद:- मुहासरा जितना लम्बा होता था हमला करने वालों की हिम्मतें कम होती जाती थीं। 10 हज़ार आदमियों के खाने पीने का इन्तिज़ाम करना कोई असान काम न था। फिर इन्तिहाई सर्दी। उसी दौरान एक बार ऐसी सख़्त तूफ़ानी हवा चली कि काफ़िरों के ख़ेमे उखड़ गये। सारी फ़ौज तित्तर बित्तर हो गई। हवा क्या थी ख़ुदा का अज़ाब था। और वाक़ई यह तूफ़ान अल्लाह तआला ने मुसलमानों के लिये रहमत और काफ़िरों के लिये अज़ाब बना कर ही भेजा था। इस वाक़िआ को अल्लाह तआला ने अपना एहसान फ़रमाया है। फ़रमायाः-

मुसलमानों ख़ुदा के उस एहसान को याद करो
जब कि फ़ौजें तुम पर टूट पड़ीं तो हम ने उन

पर तूफ़ानी आँधी भेजी और ऐसी फ़ौज भेजी (फ़रिशतों की फ़ौज) जिस को तुम देख नहीं सकते थे" (अहज़ाब 9)।

चुनाचे काफ़िर उन हालात का मुक़ाबिला न कर सके उन की कुव्वत टूट गई। यहूद ने पहले कन्नी काटी और जब कुरैश तनहा रह गये तो उन को भी सिवाए वापस जाने के और कोई सूरत नज़र न आई और इस तरह महज़ अल्लाह के फ़ज़्ल और उस की ग़ैबी इमदाद से मदीने पर जो बादल छा गये थे वह आप से आप छट गये। इस ग़ज़वा का ज़िक्र कुरआन पाक में जिस अंदाज़ से आया है और उस में मुसलमानों की तरबियत और तज़कीर के जो पहलू नुमायाँ किये गये हैं उन में से चन्द यह हैं।

अल्लाह के फ़ज़्ल पर भरोसाः– मोमिन का ईमान है कि असल ताक़त अल्लाह के पास है जो कुछ होता है उस की मशिय्यत (मर्ज़ी) और उस के हुक्म से होता है। वह अपनी किसी कामियाबी को अपनी तदबीरों या अपनी कुव्वत का नतीजा नहीं समझता बल्कि उसे अल्लाह का फ़ज़्ल समझता है जैसा की वाक़िअतन वह है। अहज़ाब की लड़ाई में 10–12 हज़ार का लशकर 3 हज़ार मुसलमानों का कुछ न बिगाड़ सका और उसे परेशान हो कर वापस जाना पड़ा। यह मौक़ा ऐसा था कि हो सकता था कुछ मुसलमान इस तरह सोचने लगते कि यह उन की अपनी तदबीर का नतीजा था (यानी ख़न्दक़ खोदना) इस लिये इस तदबीर पर नाज़ करने का अच्छा ख़ासा मौक़ा था। लेकिन अल्लाह तआला ने बरवक़्त इस कमज़ोरी से बचाने के लिये इरशाद फ़रमाया कि "ऐ ईमान वालो! अल्लाह के उस

एहसान को याद करो कि जब फ़ौजें तुम पर टूट पड़ीं तो हम ने उन पर तूफ़ानी आँधी भेजी और ऐसी फ़ौज जिसे तुम देख नहीं सकते थे"। (अहज़ाब आयत 9)

इस्लामी तहरीक के अलमबरदारों के लिये ज़ेहन की यही तरबियत मतलूब है कि उन का भरोसा सिर्फ़ अल्लाह के फ़ज़्ल पर हो और सिर्फ़ ख़ुदा को कारसाज़े मुतलक़ (अकेला काम बनाने वाला) समझते हुये वह एक़ामते दीन की जद्दोजहद में मुसलसल क़दम बढ़ाते रहें। चाहे मुक़ाबिल की कुव्वत और ताक़त कुछ ही क्यों न हो।

दाव-ए-ईमान की जाँचः- मसाइब के वक़्त इंसान के ईमान की जाँच हो जाती है। उसे ख़ुद भी मालूम हो जाता है कि वह कितने पानी में है। और दूसरे भी अंदाज़ा कर लेते हैं कि इस राह में कौन किस हद तक जम सकता है। जब तक हालात मामूली होते हैं बहुत से लोगों के बारे में अंदाज़ा ही नहीं हो सकता कि वाक़ई नसबुल-ऐन की मुहब्बत और ज़िन्दगी की बाज़ी लगा देने का फ़ैसला किस दरजे में है। कभी-कभी ख़ुद वह शख़्स अपने मुतअल्लिक़ बड़े धोके में मुबतला रहता है लेकिन जब कोई सख़्त वक़्त आता है तो खरा और खोटा साफ़ नज़र आ जाता है। अहज़ाब की लड़ाई ने यही काम किया। मदीने में मुसलमानों के साथ अच्छी ख़ासी तादाद में मुनाफ़िक़ और खोटे ईमान के लोग शामिल थे। और ज़रूरत थी कि आम मुसलमानों को दीन की सही हालत मालूम हो जाये। चुनाचे उस सख़्ती के वक़्त उन का पर्दा फ़ाश हो गया मुसलसल ख़न्दक़ खोदने का काम, खाने पीने और आराम से बेपरवाह हो कर रात दिन एक कर देना, इतनी बड़ी जमइय्यत (जमाअत) के

मुक़ाबिले के लिये हथेली पर जान रख कर तयार हो जाना और फिर 20-22 दिन तक मुसलसल ख़ौफ़ और अंदेशे की हालत में दिन का आराम और रात की नीन्द हराम कर लेना कोई आसान काम न था। जिन के दिलों में सच्चा ईमान था वह उन सख़्तियों की ताब न ला सके। और उन में से बहुत से लोग तो बोल उठे कि अच्छा रसूल ने हम से फ़तह व नुसरत का वादा किया था मगर अब तो पाँसा पलटता दिखाई दे रहा है। हम जान गये कि "अल्लाह ने और अल्लाह के रसूल ने हम से जो वादा किया था वह बस एक धोका था" (सूरह अहज़ाब 12) और कुछ ने बहाने बाज़ी शुरू की और अपने घरों की हिफ़ाज़त का बहाना कर के मैदान से खिसक गये लेकिन इस के मुक़ाबिल जिन अल्लाह के बन्दों के दिलों में सही ईमान मौजूद था, उन्हों ने उन हालात से दूसरा ही असर लिया। उन्हों ने जब फ़ौजों को उमड कर आते देखा तो कहने लगे "ठीक है यही हालात हैं जिन की ख़बर अल्लाह और उस के रसूल ने हमें पहले ही दे दी थी। यही तो है जिस का वादा अल्लाह और उस के रसूल ने किया था। अल्लाह और उस के लसूल ने सच कहा था। इन हालात से उन के अन्दर ईमान की कुव्वत और ज़्यादा हो गई। और वह ज़्यादा इताअत और फ़रमाँबरदारी के लिये आमादा हो गये" (अहज़ाब आयत 22)

कमज़ोरी की जड़:– जान और माल के नुक़सान का ख़ौफ़ इंसान की सब से बड़ी कमज़ोरी बल्कि तमाम कमज़ोरियों की जड़ है। इस्लाम अल्लाह की ज़ात और उस की सिफ़ात पर जिस तरह ईमान लाने का मुतालबा करता है उस में बुनियादी तौर पर यह अक़ीदा शामिल है कि मौत और ज़िन्दगी सिर्फ़

अल्लाह के क़ब्ज़े में है नफ़ा और नुक़सान सब कुछ अल्लाह के हाथ है कोई दूसरा ऐसा नहीं जो मौत को टाल सके या किसी तरह नफ़ा को नुक़सान में या नुक़सान को नफ़ा में बदल सके। यही अक़ीदा और यही ईमान मुसलमान की ताक़त की बुनियाद है। यह बुनियाद जितनी कमज़ोर होगी उतनी ही कमज़ोरी मुसलमान के हर काम में दिखाई देगी। चुनाचे इस कमज़ोरी को दूर करने के लिये साफ़-साफ़ फ़रमा दिया गया कि "ऐ नबी! उन से कह दीजिये कि अगर तुम मौत या क़त्ल के डर से भागोगे तो भागना तुम्हें कोई फ़ायदा न देगा और यह भी बता दीजिये कि (वह जो सोचें कि) कि अगर अल्लाह यह फ़ैसला करे कि उन्हें कोई नुक़सान पहुँच जाये तो वह कौन है जो उन्हें अल्लाह से बचा लेगा। (और अगर अल्लाह का फ़ैसला यह हो कि) उन्हें कोई नफ़ा पहुँचाए तो वह कौन है जो उसे रोक दे? (उन्हें याद रखना चाहिये कि) अल्लाह के सिवा वह किसी को न अपना हिमायती पाएँगे और न मददगार" (अहज़ाब आयत 17)

अगर यह अक़ीदा किसी दिल में मौजूद है तो फिर पीछे क़दम पड़ने का क्या मतलब? इंसान को हर नाज़ुक मौक़ा पर अपने ईमान की जाँच करते रहना चाहिये। कभी-कभी इंसान खुद अपने बारे में धोके में मुबतला रहता है और सही अंदाज़ा उस वक़्त होता है जब कोई इम्तिहान का वक़्त आता है।

रसूल का क़ाबिले तक़लीद नमूनाः- इसी जंग के तज़करे के दर्मियान में मुसलमानों को हिदायत की गई है कि तुम्हारे लिये रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़िन्दगी एक क़ाबिले तक़लीद नमूना है लेकिन उस से फ़ायदा उठाने के लिये वही लोग ठीक हो सकते हैं जिन्हें अल्लाह की मुलाक़ात और आख़िरत में मिलने

वाले इनआमात की उम्मीद हो और जो अल्लाह तआला को बहुत ज़्यादा याद करते रहते हों। उस मौक़ा पर अहले इस्लामी की हिम्मतों को बुलंद रखने, इन्तिहाई शदीद हालात में उन के दिलों को मज़बूत बनाने और पूरे इस्तिक़लाल के साथ अल्लाह के फ़ज़्ल का भरोसा रखने के लिये रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के इस्तिक़लाल, अज़्म, तवक्कुल अल-ल-लाह और सब्र का जो नमूना सामने आया वह क़यामत तक उन तमाम बन्दगाने ख़ुदा के लिये क़ाबिले तक़लीद नमूना है जो अल्लाह के दीन को क़ायम करने के लिये आमादा हों और उस राह पर क़दम बढ़ाएँ। यह नमूना ऐसा है जिसे उन्हें ज़िन्दगी के हर मोड़ पर सामने रखना चाहिये यही उन के लिये असल मशअले राह है।

बनू क़ुरैज़ा का ख़ात्माः- ऊपर बयान हो चुका है कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मदीना में तशरीफ़ लाते ही यहूद के क़बीलों से मुआहिदे किये थे। कुछ दिन तक तो यहूद अपने मुआहिदे पर क़ायम रहे लेकिन फिर उन्हों ने उन को तोड़ना शुरू कर दिया चुनाचे इसी बिना पर बनू नज़ीर को उन के वतन से निकाल दिया गया लेकिन बनू क़ुरैज़ा ने फिर से मुआहिदा कर लिया और आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उन्हें अम्न के साथ उन के क़िलों में रहने की इजाज़त दे दी।

जंगे अहज़ाब के मौक़ा पर यहूदी क़बाइल ने बनू क़ुरैज़ा को मुसलमानों के ख़िलाफ़ उकसाया और वह भी जंगे अहज़ाब में शरीक हो गये। और उन मुआहिदों का कोई पास और लिहाज़ न किया। जो वह आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से कर चुके थे। जब अहज़ाब के बादल छट गये तो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने सब से पहले बनू क़ुरैज़ा की

तरफ़ तवज्जोह फ़रमाई। और यह फ़ैसला किया कि उन को इस बदअहदी की सज़ा ज़रूर दी जाये। यह बदअहदी उन्हों ने ऐसे नाज़ुक मौक़ा पर की थी जब कि मुसलमानों पर तमाम अरब उमंड आया था और ज़ाहिर हालात में मुसलमानों के बचने की कोई सूरत बाक़ी न रही थी। बनू क़ुरैज़ा ने अपने अमल से साबित कर दिया कि वह मुसलमानों के हक़ में उस खुले हुये दुश्मन से कहीं ज़्यादा ख़तरनाक है जो खुल कर मुख़ालिफ़त करता है। उन्हों ने मुसलमानों से मुआहिदा कर के उन्हें अपने से मुतमइन भी कर दिया और फिर वक़्त आने पर साफ़ आँखें दिखा गये। और मुसलमानों को नेस्त व नाबूद करने की कोशिश में दूसरों के साथ मिल गये। चुनाचे उन के क़िलों का मुहासिरा कर लिया गया। मुहासिरा कोई एक महीने तक जारी रहा और आख़िरकार मजबूर हो कर बनू क़ुरैज़ा को हथियार डालने पड़े। इस मौक़ा पर ख़ुद तौरेत के अहकाम के मुताबिक़ उन के मुतअल्लिक़ यह फ़ैसला किया गया कि उन के क़ाबिले जंग लोग क़त्ल किये जाएँ बाक़ी गिरिफ़्तार कर लिये जाएँ। और उन का माल व असबाब ज़ब्त कर लिया जाये। उस मौक़ा पर तक़रीबन 400 अफ़राद क़त्ल किये गये जिन में एक औरत भी थी। जो इस जुर्म में क़त्ल की गई कि उस ने क़िले की दीवार से पत्थर गिरा कर एक मुसलमान को मार डाला था।

सुलहे हुदैबिया

काबा इस्लाम का असल मरकज़ था उसे हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम और उन के साहबज़ादे हज़रत इसमाईल अलैहिस्सलाम ने अल्लाह के हुक्म से तामीर किया था।

मुसलमानों को इस्लाम के इस मरकज़ से निकले हुये अब छः साल हो चुके थे। फिर इस्लाम के अहम अरकान में हज भी एक अहम रुक्न था। इस लिये अब मुसलमानों की शदीद ख़्वाहिश थी कि वह ख़ान-ए-काबा का हज करें।

ख़ान-ए-काबा की ज़ियारत के लिये सफ़रः- यूँ तो अरब वाले साल भर लड़ते रहते थे ताहम हज के मौक़ा पर चार महीनों में वह इस लिये लड़ाई बन्द कर देते थे कि लोगों को काबा तक जाने और वापस आने के लिये अम्न मयस्सर आ जाये और इस तरह वह इतमीनान के साथ काबे की ज़्यारत कर सकें। ज़ीक़ादा 6 हिजरी में आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने काबे की ज़ियारत का इरादा फ़रमाया। बहुत से मुहाजिरीन और अन्सार इस सआदत के मुनतज़िर थे कि काबे की ज़ियारत हो चुनाचे 1400 मुसलमान साथ चलने के लिये तयार हो गये। मक़ामे ज़ुलहलैफ़ा में पहुँच कर क़ुर्बानी की शुरूआती रस्में अदा की गईं इस तरह इस बात का एलान हो गया कि मुसलमानों का इरादा सिर्फ़ ख़ान-ए-काबा की ज़ियारत का है। लड़ाई या हमला का कोई इमकान नहीं फिर भी आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक साहब को मक्के भेजा कि वह जा कर क़ुरैश के इरादों की ख़बर लाएँ वह ख़बर लाये कि क़ुरैश ने तमाम क़बाइल को इकट्ठा कर के कह दिया है कि मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) मक्के में नहीं आ सकते और यह कि वह सब मुक़ाबिले के लिये तयार हैं। उन लोगों ने मक्के से बाहर एक मक़ाम पर अपनी फ़ौजें जमा करनी शुरू कर दीं और मुक़ाबिले के लिए बिल्कुल तयार हो गये।

क़ुरैश से बात चीतः- आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम

इस ख़बर के बावजूद आगे बढ़ते रहे और हुदैबिया के मक़ाम पर पहुँच कर क़याम किया। मक्के से एक मंज़िल के फ़ासले पर हुदैबिया नाम का एक कुआँ है और यही नाम उस गाँव का भी पड़ गया है यहाँ क़बील-ए-ख़ुज़ाआ के सरदार आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुये। और बताया कि कुरैश ने लड़ाई की तयारी कर ली है और वह आप को मक्के में न जाने देंगे। आप ने फ़रमाया कि उन से जा कर कह दो कि हम तो सिर्फ़ उमरा के ख़याल से आये हैं लड़ाई करना मक़सूद नहीं है हमें ख़ान-ए-काबा के तवाफ़ और ज़ियारत का मौक़ा देना चाहिये जब यह पैग़ाम कुरैश के पास पहुँचा तो कुछ शरीर लोगों ने तो कहा कि "हमें मुहम्मद का पयाम सुनने की ज़रूरत ही नहीं है"। लेकिन संजीदा लोगों में से एक शख़्स उरवा ने कहा कि "तुम मेरे ऊपर भरोसा करो और मैं जा कर मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से बात करता हूँ"। चुनाचे उरवा आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ लेकिन कोई मुआमला तैय न हो सका इस दर्मियान में कुरैश ने एक दस्ता मुसलमानों पर हमला करने के लिये भी भेज दिया। यह लोग गिरिफ़्तार कर लिये गये लेकिन आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपनी मेहरबानी से उन को माफ़ कर दिया और यह छोड़ दिये गये। अब यह तैय पाया कि सुलह की बात चीत करने के लिये हज़रत उसमान रज़िअल्लाहु अनहो को मक्के भेजा जाये। हज़रत उसमान मक्के तशरीफ़ ले गये लेकिन कुरैश किसी तरह भी राज़ी न हुये कि मुसलमानों को काबे की ज़ियारत का मौक़ा दिया जाये बल्कि उन्हों ने हज़रत उसमान को भी रोक लिया।

बैअते रिज़वाँः- यहाँ मुसलमानों में किसी तरह यह ख़बर उड़ गई कि हज़रत उसमान रज़ि० शहीद कर दिये गये। इस ख़बर ने मुसलमानों को बेचैन कर दिया। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इस ख़ाबर को सुन कर फ़रमाया कि अब तो उसमान रज़ि० के ख़ून का बदला ज़रूरी है। यह कह कर आप एक बबूल के पेड़ के नीचे बैठ गये और यहाँ आप ने सहाबा केराम रज़िअल्लाहु अनहुम अजमईन से इस बात पर बैअत ली कि हम मर जाएँगे लेकिन लड़ाई से मुँह न मोड़ेंगे और कुरैश से हज़रत उसमान रज़ि० के ख़ून का बदला लेंगे। इस क़ौल व क़रार ने मुसलमानों के अन्दर अजब जोश पैदा कर दिया और उन में से हर एक शौक़े शहादत में सरशार कुफ़्फ़ार से बदला लेने के लिये तयार हो गया। इस बैअत का नाम बैअतुर्रिज़वान है। इस का ज़िक्र कुरआन पाक में फ़रमाया गया है। और जिन ख़ुश नसीबों ने इस मौक़ा पर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के दस्ते मुबारक पर बैअत की उन के हक़ में अल्लाह तआला ने अपनी ख़ुशनूदी का इज़हार फ़रमाया।

सुलह का मुआहिदाः- मुसलमानों की इस जोश व ख़रोश की इत्तला कुरैश को भी हुई उधर यह भी मालूम हो गया कि हज़रत उसमान के क़त्ल की इत्तला ग़लत थी। कुरैश ने सुहैल बिन अमर को अपना सफ़ीर बना कर भेजा ताकि वह सुलह के बारे में बात चीत करें। उन से देर तक सुलह के बारे में बात चीत होती रही और आख़िरकार सुलह की शर्तें तैय हो गईं। सुलहनामा लिखने के लिये हज़रत अली रज़ि० बुलाये गये। सुलहनामा में जब यह लिखा गया कि यह मुआहिदा मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की तरफ़ से है

तो कुरैश के नुमाइंदे सुहैल ने एतराज़ किया कि लफ़्ज़े "रसूलुल्लाह" नहीं लिखना चाहिये इसी पर तो हमें इख़्तिलाफ़ है। चुनाचे आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उस की बात मान ली। और अपने दस्ते मुबारक से "रसूलुल्लाह" के अलफ़ाज़ मिटा दिये और फ़रमाया कि "तुम नहीं मानते तो क्या हुआ लेकिन मैं ख़ुदा की क़सम अल्लाह का रसूल ही हूँ"। जिन शर्तों पर सुलह हुई वह यह थीं:-

1. मुसलमान इस साल वापस चले जायें।
2. अगले साल आएँ और सिर्फ़ तीन दिन रह कर वापस चले जाएँ।
3. हथियार लगा कर न आएँ सिर्फ़ तलवार साथ रख सकते हैं मगर वह भी नियाम में रहेगी बाहर न निकाली जाएगी।
4. मक्के में जो मुसलमान बाक़ी रह गये हैं उस में से किसी को अपने साथ न ले जाएँ और अगर कोई मुसलमान मक्के में वापस आना चाहे तो उसे भी न रोकें।
5. काफ़िरों या मुसलमानों में से अगर कोई शख़्स मदीना चला जाये तो उसे वापस कर दिया जाये लेकिन अगर कोई मुसलमान मक्के में जाये तो वह वापस नहीं किया जाएगा।
6. क़बाइले अरब को इख़्तियार होगा कि वह मुसलमानों या काफ़िरों में से जिस के साथ चाहें मुआहिदा कर लें।
7. यह मुआहिदा 10 साल तक क़ायम रहेगा।

यह तमाम शर्तें बज़ाहिर मुसलमानों के ख़िलाफ़ थीं और उन से साफ़ ज़ाहिर होता था कि मुसलमानों ने दब कर सुलह की है।

हज़रत अबू जुनदुल का मुआमला:- इत्तफ़ाक़ की बात कि

अभी सुलहनामा लिखा ही जा रहा था कि सुहैल के बेटे हज़रत अबू जुनदुल मक्के से किसी तरह से भाग कर यहाँ पहुँच गये और बेड़ियाँ पहने हुये मुसलमानों के सामने आ कर गिर पड़े सब को अपनी बिप्ता सुनाई और बताया कि सिर्फ़ इस्लाम कुबूल करने की सज़ा में उन को कैसी कैसी तकलीफ़ें दी जा रही थीं। अबू जुनदुल ने आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से दरख़्वास्त की हुज़ूर! मुझे काफ़िरों के पंजे से छुड़ा कर अपने साथ ले चलें" सुहैल ने यह देख कर कहा कि सुलह के मुआहिदे की तकमील का यह पहला मौक़ा है। सुलहनामा की रू से आप अबू जुनदुल को अपने साथ नहीं ले जा सकते। यह बड़ा नाज़ुक मौक़ा था एक तरफ़ मुआहिदे का पास, दूसरी तरफ़ एक मज़लूम मुसलमान जिस पर ज़ुल्म व सितम इस लिये तोड़ा जा रहा था कि वह इस्लाम कुबूल कर चुका था और जो फ़रयाद कर रहा था कि ऐ मुसलमान भाइयो! क्या तुम मुझे फिर काफ़िरों के हाथ में दे देना चाहते हो तमाम मुसलमान यह सूरते हाल देख कर तड़प उठे। हज़रत उमर रज़ि० ने तो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से तो यहाँ तक कह दिया कि जब आप अल्लाह के सच्चे नबी हैं तो फिर हम यह ज़िल्लत क्यों गवारा करें। लेकिन आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि "मैं ख़ुदा का पैग़म्बर हूँ और उस के हुक्म की नाफ़रमानी नहीं कर सकता ख़ुदा मेरी मदद करेगा"। ग़र्ज़ यह कि सुलहनामा मुकम्मल हुआ। अबू जुनदुल को सुलहनामा की शर्त के मुताबिक़ वापस होना पड़ा और इस्लाम के फ़िदाकारों ने इताअते रसूल का एक सख़्त इम्तिहान पास कर लिया। एक तरफ़ बज़ाहिर इस्लाम की तौहीन थी। हज़रत अबू जुनदुल की

हालते ज़ार थी औ दूसरी तरफ़ रसूल की बेचूँ व चरा इताअत थी।

आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हज़रत अबू जुनदुल से फ़रमाया "अबू जुनदुल सब्र और ज़ब्त से काम लो, खुदा तुम्हारे लिये और मज़लूमों के लिये कोई राह निकालेगा। अब सुलह हो चुकी और हम उन लोगों से बदअहदी नहीं कर सकते" हज़रत अबू जुनदुल को इसी तरह बेड़ियाँ पहने हुये वापस जाना पड़ा।

सुलहे हुदैबिया के असरातः- सुलहनामा मुकम्मल हो जाने के बाद आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हुक्म दिया कि लोग यहीं कुर्बानी करें। पहले आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने खुद कुर्बानी की और बाल मुंडवाये उस के बाद सहाबा ने हुक्म की तामील की। सुलह के बाद आप तीन दिन तक हुदैबिया में ठहरे रहे। वापसी में सूरह फ़त्ह नाज़िल हुई जिस में इस सुलह के वाक़िआ की तरफ़ इशारा करते हुये उसे "फ़तहे मुबीन" यानी खुली हुई फ़त्ह कहा गया है बज़ाहिर यह अजीब सी बात है कि जिस मुआहिदे की रू से मुसलमानों ने दब कर सुलह की उसे खुली हुई फ़त्ह कहा जाये। लेकिन बाद के हालात ने साफ़ तौर पर वाज़ेह कर दिया कि वाक़ई हुदैबिया की सुलह इस्लामी तहरीक की तारीख़ में एक बड़ी फ़त्ह का पेशख़ेमा थी उस की तफ़सील यह है।

अब तक मुसलमानों और काफ़िरों के दर्मियान जंग की कैफ़ियत बरपा थी और दोनों फ़रीक़ को एक दूसरे से मिलने जुलने का कोई मौक़ा न था। इस सुलह के मुआहिदे ने इस कैफ़ियत को ख़त्म कर दिया और अब मुसलमान और ग़ैर

मुसलिम एक दूसरे से मिलने जुलने लगे। और आपस में ख़ानदानी और तिजारती तअल्लुक़ात होने लगे। ग़ैर मुस्लिम बेधड़क मदीना आते और महीनों वहाँ रह कर मुसलमानों से मिलते जुलते थे इस तरह उन्हें दस नई इस्लामी जमाअत के लोगों को क़रीब से देखने का मौक़ा मिलता था। यहाँ आ कर वह अजीब तरह मुतअस्सिर होते थे जिन लोगों के ख़िलाफ़ उन के दिलों में नफ़रत और गुस्सा भरा हुआ था उन्हें वह अख़लाक़, मुआमलात और आदात में अपने लोगों से कहीं ज़्यादा बुलंद पाते थे फिर वह देखते थे कि जिन अल्लाह के बन्दों से हम ने लड़ाई मोल ले रखी है उन के दिलों में उन के ख़िलाफ़ कोई नफ़रत और दुश्मनी नहीं है। बल्कि उन्हें जो कुछ नफ़रत है वह उन के ग़लत अक़ाइद और उन के ग़लत तरीक़ों से है। मुसलमान जो बात कहते हमदर्दी और इंसानियत से भरी हुई होती। बावजूद इतनी लड़ाई के मुसलमान उन के साथ इंसानी हमदर्दी और हुस्ने सुलूक में कोई कमी न करते। फिर इस तरह मिलने जुलने की वजह से ग़ैर मुस्लिमों को इस्लाम के बारे में जो कुछ शुकूक और एतराज़ात थे उन के मुतअल्लिक़ भी आपस में ख़ूब बात चीत करने का मौक़ा मिलता था और ग़ैर मुस्लिमों को मालूम हो जाता कि वह इस्लाम के बारे में किस दरजा ग़लतफ़हमियों में मुबतला कर दिये गये थे ग़र्ज़ यह कि उस सूरते हाल ने कुछ ऐसे हालात पैदा कर दिये कि ग़ैर मुस्लिमों के दिल ख़ुद बख़ुद इस्लाम की तरफ़ खिंचने लगे और आपस की ग़लतफ़हमियों के जो पर्दे उन के लीडरों ने उन के दिलों पर डाल रखे थे वह सब उठना शुरू हो गये चुनाचे इस मुआहिदे के बाद सिर्फ़ डेढ़ सौ बरस में इतने लोगों ने इस्लाम

कुबूल किया कि उस से पहले कभी कुबूल नहीं किया था। उसी दौरान कुरैश के कुछ बड़े नामवर सरदार तक इस्लाम से मुतअस्सिर हुये और ग़ैर मुस्लिमों से कट कर मुसलमानों के साथी बन गये। हज़रत ख़ालिद बिन वलीद और हज़रत अमर बिन अल-आस उसी ज़माने में इस्लाम लाये। और अब इस्लाम का दायर-ए-असर इतना फैल गया और उस की ताक़त इतनी ज़बरदस्त हो गई कि अब पुरानी जाहिलियत को अपनी मौत साफ़ नज़र आने लगी। कुफ़्फ़ार के लीडर इस सूरते हाल का अंदाज़ा कर के बौखला उठे। कुरैश को साफ़ नज़र आने लगा कि वह इस्लाम के मुक़ाबिले में यक़ीनन बाज़ी हार जाएँगे। अब उन्हें इस के सिवा कोई चारा नज़र न आया कि वह मुआहिदे को जल्द से जल्द तोड़ डालें। और इस्लामी तहरीक के ख़िलाफ़ एक बार फिर डट कर क़िस्मत आज़माएँ। और इस बढ़ते हुये सैलाब को जिस तरह हो रोकें। इस मुआहिदा को तोड़ने का ज़िक्र आइन्दा फ़तेह मक्का के सिलसिले में अपने मुनासिब मौक़ा पर आएगा।

दसवाँ बाब

सलातीन के नाम ख़ुतूत

हुदैबिया की सुलह से कुछ इतमीनान हुआ तो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने दावत व तबलीग़ के काम पर और ज़्यादा तवज्जोह फ़रमाई। एक दिन आप ने अपने सहाबा को ख़िताब फ़रमाया कि "ऐ लोगो! अल्लाह तआला ने मुझे तमाम दुनिया के लिये रहमत बना कर भेजा है, (मेरा पयाम सारी दुनिया के लिये है, और यह सब के लिये रहमत है) देखो ईसा के हवारियों की तरह इख़्तिलाफ़ न करना, जाओ मेरी तरफ़ से पैग़ामे हक़ सब को पहुँचा दो"। इसी ज़माने में यानी 6 हिजरी के आख़िर या शुरू 7 हिजरी में आप ने बड़े-बड़े बादशाहों के नाम दावती ख़ुतूत भी तहरीर फ़रमाये। जिन को ले कर मुख़तलिफ़ सहाबा मुख़तलिफ़ ममालिक को भेजे गये। जिन दावती ख़ुतूत की तफ़सील तारीख़ में मिलती है, उन में से कुछ यह हैं:-

क़ैसरे रूम के पास ख़त	हज़रत दहिय्या कलबी ले कर गये
ख़ुसरू परवेज़ शाहे ईरान-के नाम ख़त	हज़रत अब्दुल्लाह बिन ख़ुज़ाफ़ा सहमी ले कर गये
अज़ीज़े मिस्र के नाम	हज़रत हातिब बिन अबी बलतअ

नज्जाशी बादशाह हबश के नाम, हज़रत उमर बिन उमय्या

क़ैसरे रूम के नामः- क़ैसरे रूम के नाम जो ख़त भेजा

गया, वह यह था:-

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम ! मुहम्मद की तरफ़ से जो ख़ुदा का बन्दा और उस का रसूल है, बनामे हरक़िल जो रूम का रईसे आज़म है।

जो कोई हिदायत की पैरवी करे उस पर सलामती हो, इस के बाद मैं तुम को इस्लाम की दावत की तरफ़ बुलाता हूँ।

अल्लाह तआला की इताअत व फ़रमाँबरदारी कुबूल कर लो तो सलामत रहोगे, अल्लाह तआला तुम को दुगना अजर देगा। लेकिन अगर तुम ने अल्लाह की फ़रमाबरदारी से मुँह मोड़ा तो तुम्हारे मुल्क के लोगों का गुनाह भी तुम्हारे ऊपर होगा, (क्यों कि तुम्हारे इनकार की वजह से उन को भी इस्लामी दावत न पहुँच सकेगी)।

ऐ अहले किताब! आओ एक ऐसी बात की तरफ़ जो हमारे और तुम्हारे दर्मियान यकसाँ (एक जैसा) है। यह कि हम अल्लाह के सिवा किसी की बन्दगी न करें। उस के साथ किसी को शरीक न ठहराएँ और हम में से कोई अल्लाह के सिवा किसी को अपना रब न बनायें। लेकिन अगर तुम इस बात को मानने से मुँह मोड़ो तो (हम साफ़ कहे देते हैं कि) तुम गवाह रहो कि हम तो मुस्लिम हैं (यानी सिर्फ़ ख़ुदा की इताअत और बन्दगी करने वाले")

अबू सुफ़ियान से मुकालमा:- हज़रत दहिय्या कलबी ने यह ख़त बसरा में हारिस ग़स्सानी को जा कर दिया जो उस वक़्त क़ैसरे रूम की तरफ़ से शाम में हुकूमत कर रहा था। और उस ने उसे क़ैसर के पास भेज दिया। क़ैसर को ख़त मिला तो उस ने हुक्म दिया कि अरब का कोई शख़्स मिले तो उसे पेश किया

जाये। उसी ज़माने में अबू सुफ़ियान तिजारत के सिलसिले से उस इलाक़े में गये हुये थे। क़ैसर के लोगों ने उन को दरबार में पेश किया। उन से जो बात चीत हुई वह यह है:-

क़ैसरः - मुद्दई नुबुव्वत का ख़ानदान कैसा है?

अबू सुफ़ियानः -वह शरीफ़ ख़ानदान से तअल्लुक़ रखते हैं।

क़ैसरः - उस ख़ानदान में किसी और ने भी नुबुव्वत का दावा किया था?

अबू सुफ़ियानः - नहीं।

क़ैसरः - क्या उस ख़ानदान में कभी कोई बादशाह गुज़रा है?

अबू सुफ़ियानः - कभी नहीं।

क़ैसरः - जिन लोगों ने यह मज़हब क़ुबूल किया है वह कमज़ोर लोग हैं या दौलत वाले?

अबू सुफ़ियानः - कमज़ोर लोग।

क़ैसरः - उस के पैरू बढ़ रह हैं या घटते जा रहे हैं?

अबू सुफ़ियानः - बराबर बढ़ते जा रहे हैं।

क़ैसरः - क्या तुम लोगों ने उसे कभी झूट बोलते भी पाया है?

अबू सुफ़ियानः - कभी नहीं।

क़ैसरः -क्या वह अह्द व इक़रार की ख़िलाफ़वर्ज़ी भी करता है?

अबू सुफ़ियानः - अभी तक उस ने कभी अह्द और इक़रार के ख़िलाफ़ कोई बात नहीं की है। अब एक नया मुआहिदा हुआ है (सुलहे हुदैबिया) उस में देखना है कि वह अह्द पर क़ायम रहता है या नहीं।

क़ैसरः - क्या तुम ने कभी उस से जंग भी की है?

अबू सुफ़ियानः - हाँ की है।

क़ैसरः - जंग का नतीजा क्या रहा है?

अबू सुफ़ियानः -कभी हम जीते और कभी उस की फ़त्ह हुई।
क़ैसरः - वह क्या सिखाता है?
अबू सुफ़ियानः - वह कहता है कि सिर्फ़ एक ख़ुदा की बन्दगी करो। किसी दूसरे को किसी तरह भी उस का साझी न बनाओ। नमाज़ पढ़ो, पाक दामनी इख़्तियार करो, सच बोलो, आपस में एक दूसरे के साथ मेहरबानी और रहमत से पेश आओ।

इस बात चीत के बाद उस ने कहा कि "पैग़म्बर हमेशा अच्छे ही ख़ानदान में पैदा होते हैं। अगर कोई दूसरा उस के ख़ानदान में नुबुव्वत का दावा करता तो हो सकता था कि उस का दावा भी ख़ानदान का असर समझा जाता और अगर उस के ख़ानदान में कोई बादशाह होता तो यह समझा जा सकता था कि शायद हुकूमत के लालच में वह यह सब कुछ कर रहा हो, और जब यह तजरबा हो चुका है, कि उस ने आदमियों के मुआमले में कभी झूट नहीं बोला तो यह कैसे कहा जा सकता है कि उस ने ख़ुदा के बारे में इतना बड़ा झूट गढ़ लिया हो (कि उसे ख़ुदा ने अपना रसूल बनाया है) और यह भी वाक़िआ है कि पैग़म्बरों के इब्तिदाई पैरू हमेशा ग़रीब लोग ही होते हैं। और सच्चा मज़हब हमेशा बढ़ता ही रहता है, और यह भी सच है कि पैग़म्बर कभी किसी से धोका या फ़रेब नहीं करते। फिर तुम यह भी कहते हो कि वह नमाज़, पाकदामनी और तक़वा की हिदायत करता है अगर यह सब कुछ सच है तो मुझे यक़ीन है कि किसी न किसी दिन इस का क़ब्ज़ा मेरी हुकूमत तक भी हो जाएगा। मुझे यह तो मालूम था कि एक पैग़म्बर आने वाला है लेकिन यह ख़याल न था कि वह अरब में पैदा होगा। मैं अगर वहाँ जा सकता तो ख़ुद उस के पाँव धोता"।

कैसर के यह ख़यालात सुन कर उस के दरबारी पादरी और उलमा सख़्त नाराज़ हुये और यह अंदेशा पैदा हो गया कि कहीं कैसर के ख़िलाफ़ बग़ावत न उठ खड़ी हो। इसी अंदेशे में वह रोशनी जो कैसर के दिल में पैदा हो रही थी दब कर रह गई। सच है हक़ को कुबूल करने की राह में दौलत और इक़्तिदार ही सब से बड़ी रुकावट साबित होते हैं।

शाहे ईरान के नामः– ईरान के शहनशाह ख़ुसरू परवेज़ के नाम जो ख़त लिखा वह यह थाः–

" *बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम* " मुहम्मद अल्लाह के रसूल की तरफ़ से बनामे किसरा रईस आज़म फ़ारस। सलाम हो उस शख़्स पर जो हिदायत का पैरू हो और ख़ुदा और उस के रसूल पर ईमान लाए और यह गवाही दे कि अल्लाह के सिवा कोई दूसरा इलाह (इबादत के लायक़) नहीं है। और यह कि मैं तमाम इंसानों के लिये ख़ुदा की तरफ़ से भेजा हुआ पैग़म्बर हूँ ताकि हर मुतनफ़्फ़स (जानदार) को मैं (अल्लाह की नाफ़रमानी) के बुरे अंजाम से डरा दूँ। तुम भी अल्लाह की इताअत व फ़रमाबरदारी कुबूल करो। तुम सलामत रहोगे। वरना मजूसियों का वबाल तुम्हारी गर्दन पर होगा"।

ख़ुसरू परवेज़ बड़ी शान व शौकत का बादशाह था। उस के नज़दीक ख़त लिखने का यह अंदाज़ ही सख़्त तकलीफ़देह था। जिस में पहले ख़ुदा का नाम, फिर ख़त भेजने वाले का नाम और फिर बादशाह का नाम लिखा गया था और वह भी बिल्कुल सादा तरीक़े से। न वह अलक़ाब व आदाब और न वह अंदाज़े तहरीर जो उस के यहाँ रायज था। ख़ुसरू परवेज़ उस ख़त को देख कर झल्ला उठा और बोला "मेरा गुलाम हो कर

मुझे यूँ लिखता है"। यह कह कर नामामुबारक फाड़ डाला। और अपने यमन के गर्वनर को हुक्म भेजा कि उस नुबुव्वत के दावा करने वाले को पकड़ कर हमारे सामने हाज़िर किया जाये।

यमन के गर्वनर ने दो आदमियों को ख़िदमते मुबारक में भेजा कि आप को बुला लाएँ। उस दर्मियान ख़ुसरू परवेज़ को उस के बेटे ने क़त्ल कर दिया और ख़ुद तख़्त का मालिक बन बैठा। जब गर्वनर के भेजे हुये दोनों आदमी ख़िदमते मुबारक में हाज़िर हुये तो उन्हें अपने बादशाह के क़त्ल का हाल कुछ मालूम न था। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को यह बात अल्लाह तआला के हुक्म से मालूम हो चकी थी। चुनाचे आप ने उन दोनों आदमियों को उस वाक़िआ की ख़बर दी और फ़रमाया कि तुम वापस जाओ और गर्वनर से कह दो कि इस्लाम की हुकूमत ख़ुसरू के दारुस्सलतनत तक पहुँचेगी। जब यह लोग यमन वापस आये तो मालूम हुआ कि वाक़ई ख़ुसरू परवेज़ के क़त्ल की ख़बर सच्ची थी।

नज्जाशी और अज़ीज़े मिस्र के नामः- तक़रीबन इसी मज़मून का ख़त हबश के बादशाह नज्जाशी को भी भेजा गया था। उस के जवाब में उस ने लिखा था कि "मैं गवाही देता हूँ कि आप ख़ुदा के सच्चे पैग़म्बर हैं" नज्जाशी ने हज़रत जअफ़र के हाथ पर इस्लाम कुबूल किया था। जो हिजरत कर के हबश चले गये थे और जिन का ज़िक्र इस से पहले हिजरते हबश के ज़ैल में आ भी चुका है।

अज़ीज़े मिस्र अगरचे ख़त पढ़ कर इस्लाम नहीं लाया। लेकिन उस ने ख़त ले जाने वालों की इज़्ज़त की और उन्हें तोहफ़े दे कर वापस किया।

ग्यारहवाँ बाब

हुकूमते इस्लामी का इसतेहकाम

मदीना से जब बनू नज़ीर के लोग निकाले गये तो वह ख़ैबर में आ कर आबाद हो गये ख़ैबर एक मक़ाम है जो मदीना मुनव्वरा से तक़रीबन 200 मील शुमाल मग़रिब की जानिब है यहाँ यहूद ने कई मज़बूत क़िले बनाये थे।

ख़ैबर उस वक़्त इस्लामी तहरीक की मुख़ालिफ़त का सब से बड़ा मरकज़ और इस्लाम के लिये एक मुसतक़िल ख़तरा था ख़ैबर के यहूदी ही मदीना पर इस शदीद हमले का सब से बड़ा सबब बने थे। जिस का ज़िक्र अहज़ाब की लड़ाई के तहेत हो चुका है फिर जब उन की यह चाल अल्लाह तआला ने नाकाम फ़रमा दी तो उस के बाद भी मुसलसल ऐसी रेशादवानियाँ (साज़िश) करते रहे कि किसी न किसी तरह इस्लामी तहरीक का क़लअ क़मअ (तोड़ फोड़) हो जायें। इस मक़सद के लिये अरब के मुख़तलिफ़ क़बीलों और खुसूसन कुरैश के साथ साज़ बाज़ करने के साथ साथ उन्हों ने मदीना के मुनाफ़िक़ों को भी उभारा और उन्हें बराबर इस बात के लिये तयार करते रहे कि अगर वह मुसलमानों के अन्दर रह कर उन की जड़ें काटने का काम तेज़ कर दें तो फिर बाहर के मुख़ालिफ़ीन हमला कर के इस्लाम के ख़तरे को हमेशा के लिये मिटा डालेंगे। यहूद की यह

सारी कोशिशें आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के इल्म (ज्ञान) में आती रहती थीं। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कोशिश की कि किसी तरह यहूद से कोई मुनासिब मुआहिदा हो जाये और वह अपनी हरकतों से बाज़ आ जाएँ चुनाचे इस मक़सद के लिये आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने खुद तहरीक भी फ़रमाई लेकिन यहूद अपनी साज़िशों से बाज़ न आये। यहाँ तक कि उन्हों ने मुख़तलिफ़ क़बीलों को यह पैग़ाम दिया कि अगर हमारे साथ मिल कर मदीना पर हमला करो तो हम तुम्हें अपने नख़लिस्तान की आधी पैदावार हमेशा दिया करेंगे। ग़र्ज़ यह कि यहूद की साज़िशों के नतीजे में बहुत से क़बीलों के इरादे ग़ैर होने लगे और वह इस बात पर मुत्तफ़िक़ (राज़ी) होने लगे कि सब मिल कर मदीना पर हमला करें।

ख़ुद बढ़ कर वार करने की पालीसीः- अब तक मुसलमान अपने बचाओ के लिये लड़ते थे। दुश्मन उन को ख़त्म करने के लिये उन पर चढ़ आये और उन्हें अपनी हिफ़ाज़त में हथियार उठाना पड़े, अल्लाह तआला की मदद उन के शामिले हाल हुई और दुश्मन को नीचा देखना पड़ा। लेकिन अब हालात ने दूसरा रुख़ इख़्तियार कर लिया था अब इस बात की ज़रूरत थी कि इस्लामी तहरीक के लिये जहाँ ख़तरा उभरता दिखाई दे तो इस से पहले कि वह ख़तरा तहरीक को ख़त्म कर देने के लिये पूरी तरह मुनज़्ज़म हो जाये उस पर बढ़ कर खुद वार किया जाये और उसे ख़त्म कर दिया जाये इस्लामी तहरीक के क़याम और बचाव के लिये जहाँ मुदाफ़िआना (बचाव) जंग की ज़रूरत है वहाँ वक़्त आने पर खुद बढ़ कर हमला करना भी निहायत ज़रूरी है। इस्लाम एक निज़ामे ज़िन्दगी है मुकम्मल

दस्तूरे हयात। इस निज़ाम और दस्तूर को क़ायम करने के लिये सिर्फ़ इतना ही काफ़ी नहीं है कि ग़ैर इस्लामी ज़िन्दगी और ग़ैर इस्लामी दस्तूरे हयात के अलमबरदारों की तरफ़ से जब कोई हमला हो तो सिर्फ़ उस का बचाव किया जाये बल्कि उस दस्तूरे हयात को क़ायम करने के लिये वह वक़्त भी आता है जब दूसरे निज़ामों को उखाड़ने के लिये ख़ुद बढ़ कर जद्दोजहद करना होती है।

जंगे अहज़ाब के बाद इस्लामी तहरीक उस दौर में दाख़िल हो चुकी थी कि अब सिर्फ़ दिफ़ाई (सुरक्षा) क़िस्म की लड़ाइयाँ ही काफ़ी न थीं बल्कि अब वक़्त आ गया था कि जब ज़रूरत पड़े तो ख़ुद बढ़ कर ख़तरे को दूर किया जाये चुनाचे जंगे अहज़ाब के ख़त्म होने के बाद आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने यह भी इरशाद फ़रमा दिया था कि “अब ऐसा न होगा कि लोग हम पर चढ़ कर आएँ बल्कि अब हम ख़ुद निकल कर हमला करेंगे”।[1]

ख़ैबर पर हमलाः- अब वक़्त आ गया था कि ख़ैबर के यहूदियों के बढ़ते हुये फ़ित्ने को बर वक़्त रोका जाये चुनाचे आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ख़ैबर पर हमले की तयारियाँ शुरू कर दीं। और यहूद की जानिब से जिन हमलों का अंदेशा था उन को रोकने के लिये ख़ुद मदीने से निकले। यह वाक़िआ मुहर्रम 7 हिजरी का है। उस हमले के लिये जो फ़ौज साथ थी उस की तादाद 16 सौ थी जिन में दो सौ सवार और बाक़ी पैदल थे।

ख़ैबर में छः क़िले थे और उन में 20 हज़ार सिपाही मौजूद

---

1. मूज़हुल-कुरआन, शाह अब्दुल क़ादिर साहब, सूरह अहज़ाब।

थे। ख़ैबर पहुँचने पर भी आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को यह यक़ीन हो गया कि वाक़ई यहूद जंग ही के लिये आमादा हैं। और किसी उनवान पर मुआहिदे या सुलह के लिये तयार नहीं हैं तो आप ने सहाबा के सामने जिहाद पर एक ख़ुतबा दिया और उन्हें अल्लाह के दीन की ख़ातिर जान की बाज़ी लगाने की तरग़ीब दी। तक़रीबन 20 दिन के मुहासरे के बाद अल्लाह तआला ने मुसलमानों को फ़त्ह दी उस जंग में 93 यहूदी मारे गये और 15 मुसलमान शहीद हुये। यहूद का एक बड़ा पहलवान मरहब हज़रत अली के हाथ से क़त्ल हुआ उस पहलवान का मारा जाना एक अज़ीमुशशान वाक़िआ था यहूद को उस की ताक़त पर बड़ा नाज़ था।

फ़त्ह के बाद यहूदियों ने दरख़्वास्त की कि जो ज़मीनें अब तक उन के पास थीं वह अगर उन ही के क़ब्ज़े में छोड़ दी जाएँ तो वह मुसलमानों को आधी पैदावार देते रहेंगे। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उन की यह दरख़्वास्त मंज़ूर फ़रमा ली। आइंदा सालों में इस आधी पैदावार को हासिल करने के सिलसिले में मुसलमान हाकिमों ने जो इंसाफ़ का तरीक़ा यहूद से बरता उस ने रफ़्ता रफ़्ता उन के दिलों को भी जीत लिया मुसलमान हाकिम पैदावार के दो ढेर लगा देते थे और काश्तकार को यह हक़ देते थे कि वह जिस ढेर को चाहे पसंद कर ले।

मुस्लिम मुआशरे की तर्बियतः- जंगे उहुद के बाद इस्लामी तहरीक के लिये बैरूनी ख़तरात जिस पैमाने पर बढ़ चुके थे उस का अंदाज़ा जंगे अहज़ाब और उस के बाद के वाक़िआत से अच्छी तरह हो सकता है यह ज़माना बड़ी कशमकश का ज़माना था। लेकिन इस के बावजूद तहरीके इस्लामी के दाई (सल्लल्लाहु

अलैहि वसल्लम) जिस तरह एक होशियार जनरल की हैसियत से उन वाक़िआत से निमट रहे थे उसी तरह वह एक मुअल्लिमे अख़लाक़ और मुरब्बि व मज़की की हैसियत से तहरीक के अलमबरदारों की तर्बियत भी फ़रमा रहे थे और उस नये इस्लामी मुआशरे के लिये जिन ज़वाबित और क़वानीन की ज़रूरत थी। उन की तालीम भी मुसलसल दी जा रही थी। उस दौर की दो अहम सूरतों यानी सूरह निसा और सूरह मायदा के मुतालआ से अंदाज़ा होता है कि उस ज़माने में इस्लामी किरदार और मुस्लिम मुआशरे की तामीर के लिये कैस कैस अहम क़वानीन और ज़वाबित की तालीम दी गई।

सूरह निसा 6 हिजरी और 5 हिजरी में मुख़्तलिफ़ औक़ात में नाज़िल हुई है। उस से अंदाज़ा होता है कि उस वक़्त नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम उस नई इस्लामी सोसाइटी को किस तरह पुराने जाहिली रस्म व रिवाज से पाक फ़रमा कर अख़ालाक़, तमद्दुन, मुआशरत, मईशत, के नये उसूल पर मुनज़्ज़म फ़रमा रहे थे अल्लाह तआला की तरफ़ से उस वक़्त मुसलमानों को वाज़ेह हिदायात दी जा रही थीं कि वह अपनी शख़्सी ज़िन्दगी के साथ साथ अपनी इजतिमाई ज़िन्दगी को किस तरह इस्लाम के तरीक़ों पर दुरुस्त करें। उन्हें ख़ानदान की तनज़ीम के उसूल बताये गये निकाह और तलाक़ के बारे में वाज़ेह हिदायात दी गईं। औरतों और मर्दों के हुक़ूक़ मुतअय्यन कर के समाज की बहुत सी ख़राबियों को दूर किया गया। यतीमों और कमज़ोरों के हुक़ूक़ की हिफ़ाज़त की ताकीद की गई। विरासत की तक़सीम के उसूल बताये गये। लेन देन के मुआमलात की इसलाह के लिये हिदायात दी गई। घरेलू झगड़ों

की इसलाह के तरीके बताये गये, शराब पीने पर पाबन्दियाँ लगाई गईं, तहारत और पाकिज़गी के अहकाम दिये गये, मुसलमानों को बताया गया कि एक नेक इंसान का तअल्लुक़ ख़ुदा और उस के बन्दे के साथ कैसा होना चाहिये। साथ ही साथ अहले किताब के ग़लत बरताव और ना मुनासिब तर्ज़े ज़िन्दगी पर तनक़ीद कर के एक तरफ़ अहले किताब पर उन की ग़लतियाँ वाज़ेह की गईं और दूसरी तरफ़ ख़ुद मुसलमानों को यह समझाया गया कि वह इस क़िस्म की ग़लतियों से बचते रहें।

इस्लामी तहरीक का यही वह पहलू है जिस के दुरूस्त हुए बग़ैर उसे बातिल के मुक़ाबिले में कामियाबी हासिल नहीं को सकती। इस्लामी तहरीक के अलमबरदारों को न सिर्फ़ अपनी ज़ाती हैसियत में अख़्लाक़ी ऐतबार से बातिल परस्तों के मुक़ाबिले में ऊँचा होना चाहिये। बल्कि यह भी ज़रूरी है कि वह एक ऐसा मिसाली मुआशरा पेश करें जो ख़ुद जुबाने हाल से ग़ैर इस्लामी मुआशरे के मुक़ाबिले में अपनी बरतरी साबित कर सके। इस मक़सद के हुसूल के लिये किसी एहतमाम और बनावट की ज़रूरत नहीं पड़ती। बल्कि जब तहरीक के अलमबरदारों में तक़वा और एहसान की कैफ़ियत पैदा होती है तो फ़िर यही नताइज बरामद होने लगते हैं। एक नबी की इस्लाही और इंक़लाबी तहरीक इसी एतबार से दूसरी तमाम तहरीकों से मुमताज़ होती है नबी अपने पैरुओं की तालीम, तर्बियत और तज़किया की तरफ़ इस से कहीं ज़्यादा तवज्जोह फ़रमाता है, जितना वह अपने मुख़ातबीन में दावत का हक़ अदा करने के लिये बेचैन होता है यह इम्तियाज़ी ख़ुसूसियत ख़ुद सूरह निसा के मज़ामीन में भी मौजूद है। सूरह में जहाँ अख़लाक़,

तमद्दुन और मुआशरत वग़ैरा के बारे में क़वानीन बयान हो रहे हैं वहाँ साथ ही साथ दावत व तबलीग़ का पहलू भी सामने है और मुश्रिकीन और अहले किताब को बराबर दीने हक़ की तरफ़ दावत दी जा रही है।

सुलहे हुदैबिया के बाद तक़रीबन 7 हिजरी में सूरह मायदा नाज़िल हुई। हुदैबिया के सुलहनामा की रू से मुसलमान उस साल उमरा नहीं कर सके थे। बल्कि यह बात तैय हो गई थी कि आप आइंदा साल काबे की ज़ियारत के लिये आएँगे। चुनाचे इस मरहले से पहले काबे की ज़ियारत के सिलसिले में बहुत से आदाब बताये गये। और उन्हें यह तालीम दी गई कि काफ़िरों की ज़्यादती के बावजूद मुसलमान अपनी तरफ़ से कोई ज़्यादती न करें।

जिस ज़माने में सूरह मायदा नाज़िल हुई उस वक़्त तक मुसलमानों की हालत काफ़ी बदल चुकी थी अब वह वक़्त नहीं था कि इस्लाम को चारों तरफ़ से ख़तरे ही ख़तरे घेरे हुये हों। जैसा कि जंगे उहुद के बाद कैफ़ियत थी बल्कि अब सूरते हाल यह थी कि इस्लाम की अपनी एक ताक़त थी और इस्लामी रियासत काफ़ी फैल चुकी थी। मदीना के चारों तरफ़ डेढ़-डेढ़ दो-दो सौ मील तक तमाम मुख़ालिफ़ क़बीलों का ज़ोर टूट चुका था और मदीने को यहूदियों से जो हर वक़्त का ख़तरा था उस का भी ख़ात्मा हो चुका था। जहाँ कहीं यहूदी बाक़ी भी थे वह सब मदीने की रियासत की मातहती कुबूल कर चुके थे। ग़र्ज़ यह कि अब साफ़ नज़र आने लगा था कि इस्लाम महज़ चन्द अक़ाइद का मजमूआ ही नहीं है जिसे आम इस्लाह में "मज़हब" कहा जाये और जिस का तअल्लुक़ सिर्फ़ इंसानों के दिल और

दिमाग़ से ही हो बल्कि वह एक मुकम्मल निज़ामे ज़िन्दगी है जिस का तअल्लुक़ इंसान के दिल व दिमाग़ के अलावा उस की पूरी ज़िन्दगी से है। जिस मे हुकूमत और सियासत, सुलह और जंग सब कुछ शामिल है फिर यह भी वाज़ेह था कि अब मुसलमान इतने ताक़तवर हो चुके थे कि उन्हों ने जिस निज़ामे ज़िन्दगी यानी दीन को सोच समझ कर कुबूल किया था उस पर ख़ुद भी बिला किसी रोक टोक के ज़िन्दगी बसर कर सकें। और कोई दूसरा निज़ामे ज़िन्दगी या क़ानून उन का रास्ता न रोक सके। और साथ ही साथ अपने उस दीन की तरफ़ दूसरों को दावत भी दे सकें।

उस वक़्त तक मुसलमानों की अपनी एक तहज़ीब बन चुकी थी। जो दूसरों से मुमताज़ होती जा रही थी। उन के अख़लाक़, उन के रहने सहने के तरीक़े, उन के मुआमलात ग़र्ज़ कि उन की ज़िन्दगी का पूरा ढाँचा इस्लामी उसूलों के तहेत ढलता जा रहा था और अब वह दूसरों के मुक़ाबिले में बिल्कुल खुली हुई इम्तियाज़ी हैसियत इख़्तियार कर चुके थे। उन के अपने दीवानी और फ़ौजदारी के क़वानीन थे अपनी अदालतें थीं लेन देन और ख़रीद व फ़रोख़्त के अपने तरीक़े थे। विरासत का एक मुसतक़िल क़ानून था। तलाक़, निकाह, पर्दा और इसी क़िस्म के दूसरे मुआमलात के लिये उन के अपने क़वानीन और ज़वाबित थे। इन्तिहा यह कि उन के उठने बैठने, खाने पीने, मिलने जुलने के आदाब के बारे में भी वाज़ेह हिदायात मौजूद थीं और इन तमाम चीज़ों ने मिल कर इस्लामी मुआशरे और इस्लामी तरीक़-ए-ज़िन्दगी को दूसरे तमाम ग़ैर इस्लामी मुआशरों से मुमताज़ बना दिया था और यह सब उस तर्बियत और तालीम

का नतीजा था जिस की तरफ़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पूरी तवज्जोह फ़रमा रहे थे और जिस के नतीजे में मूसलमानों की ज़िन्दगियाँ पाकीज़ा से पाकीज़ा तर होती जा रही थीं।

सूरह मायदा में सफ़रे हज के आदाब, खाने पीने की चीज़ों में हराम और हलाल की तमीज़, वज़ू, गुस्ल और तयम्मुम के क़ायदे, शराब और जुवे की हुरमत, क़ानूने शहादत के बारे में हिदायात और अद्ल व इंसाफ़ पर क़ायम रहने की ताकीद वग़ैरा। सब ऐसे मौज़ू मिलते हैं जो इस्लामी मुआशरे की तामीर के लिये अज़ बस ज़रूरी थे और उन सब की तरफ़ पूरी तवज्जोह दी जा रही थी।

अदाए उमराः— हुदैबिया के सुलहनामा की एक शर्त यह थी कि मुसलमान अगले साल आ कर उमरा कर सकेंगे। चुनाचे अगले साल यानी 7 हिजरी में आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मुसलमानों की एक बड़ी तादाद के साथ काबे की ज़ियारत की। इस मौक़े पर सहाबा पर मसर्रत और जोश की एक अजीब कैफ़ियत तारी थी इस मंज़र ने कुफ़्फ़ारे कुरैश के दिलों में दबी हुई हसद और तअस्सुब की आग को और भड़का दिया और अब उन्हें अपना वह सुलहनामा जिस में उन्हों ने अपनी ख़्वाहिश के मुताबिक़ अपना पल्ला भारी रखा था हेच नज़र आने लगा।

फ़त्हे मक्का

सुलहे हुदैबिया की ख़िलाफ़वर्ज़ीः— हुदैबिया के सुलहनामा के रू से अरब के क़बीलों का यह हक़ तसलीम किया गया था

कि वह मुसलमानों या कुरैश जिस के साथ चाहें मआहिदा कर लें। चुनाचे इसी शर्त की बिना पर क़बीला खुज़ाआ ने मुसलमानों के साथ मुआहिदा कर लिया था और क़बीला बनू बक्र कुरैश का साथी बन गया था। तक़रीबन डेढ़ साल तक तो इस मुआहिदे पर पूरी तरह अमल होता रहा लेकिन उस के बाद एक नया वाक़िआ पेश आया कि खुज़ाआ और बनू बक्र के क़बीले जो अर्सा से आपस में लड़ते चले आ रहे थे उन के दर्मियान फिर लड़ाई छिड़ गई। जिस की इब्तिदा इस तरह हुई कि बनू बक्र ने खुज़ाआ पर चढ़ाई कर दी और कुरैश ने बनू बक्र की इमदाद की क्यों कि वह पहले ही इस बात पर खुज़ाआ से नाराज़ थे कि उन्हों ने उन की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ मुसलमानों से क्यों मुआहिदा किया था ग़र्ज़ यह कि दोनों ने मिल कर क़बील-ए-खुज़ाआ के लोगों को क़त्ल करना शुरू कर दिया यहाँ तक कि जब उन्हों ने ख़ान-ए-काबा में पनाह ली तो वहाँ भी उन को न छोड़ा और हरम में भी खुज़ाआ का ख़ून बहाया गया।

खुज़ाआ ने मजबूर हो कर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को हालात से बाख़बर किया और इस मुआहिदे की बुनियाद पर जो उन्हों ने आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से किया था मदद के तलबगार हुये आप ने जब खुज़ाआ की मज़लूमी का हाल सुना तो आप को सख़्त सदमा हुआ और आप ने कुरैश के पास एक क़ासिद भेजा कि वह अपनी हरकत से बाज़ आएँ और इन तीन शर्तों में से किसी एक को कुबूल करें।

(1) खुज़ाआ के जो लोग मारे गये हैं उन का ख़ून बहा अदा किया जाये।

(2) कुरैश बनू बक्र की हिमायत न करें।

(3) इस बात का एलान कर दिया जाये कि हुदैबिया का सुलहनामा ख़त्म हो गया।

क़ासिद के ज़रिए यह पयाम सुन कर कुरैश में से एक शख़्स क़रता बिन उमर ने कहा कि "हमें सिर्फ़ तीसरी शर्त मंज़ूर है" क़ासिद के चले जाने के बाद उन्हें अफ़सोस हुआ और उन्हों ने फिर अपनी तरफ़ से अबू सुफ़ियान को सफ़ीर बना कर भेजा कि वह हुदैबिया के सुलहनामा की तजदीद कर लाएँ। लेकिन आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को जो हालात मालूम हो चुके थे उन की बुनियाद पर और कुरैश के अब तक के रवय्या के पेशे नज़र उन की इस बात पर इतमीनान न हुआ और आप ने अबू सुफ़ियान की बात मंज़ूर न फ़रमाई।

मक्के पर हमले की तयारीः- ख़ान-ए-काबा तौहीदे ख़ालिस का वह मरकज़ था जिसे हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने ख़ालिस खुदा की इबादत के लिये तामीर फ़रमाया था। लेकिन वह अभी तक मुश्रिकों के क़ब्ज़े में था और शिर्क का सब से बड़ा गढ़ बना हुआ था। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के दीन के दाई थे और ख़ालिस तौहीद के अलमबरदार। इस ऐतबार से लाज़िम था कि तौहीद के उस मुक़द्दस मरकज़ को शिर्क की तमाम गंदगियों से जल्द से जल्द पाक किया जाये लेकिन अभी तक हालात ने उस की इजाज़त नहीं दी थी मगर अब आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने यह अंदाज़ा फ़रमा लिया कि अब वक़्त आ गया है कि अल्लाह के इस मुक़द्दस घर को सिर्फ़ उसी की इबादत के लिये मख़सूस कर लिया जाये और बुतपरस्ती की तमाम नापाकियों से इस घर को पाक कर दिया जाये। चुनाचे आँहज़रत

सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उन तमाम क़बीलों के पास पैग़ाम भेजे जिन से मुआहिदे थे और इस बात की एहतियात फ़रमाई कि मक्के वालों को इस तयारी की ख़बर न होने पाये जब सब तयारियाँ मुकम्मल हो गईं तो आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने 10 रमज़ान 8 हिजरी को मक्के की तरफ़ कूच फ़रमाया तक़रीबन दस हज़ार जाँनिसारों का निहायत शानदार लशकर साथ था और रास्ते में अरब के दूसरे क़बीले भी आ कर मिलते जाते थे।

अबू सुफ़ियान की गिरिफ़तारी:- इस्लामी लशकर जब मक्के के पास पहुँचा तो अबू सुफ़ियान जो छुप कर लशकर का अंदाज़ा कर रहे थे, गिरिफ़तार कर के आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत में पेश किये गये यह वही अबूसुफ़ियान हैं जो अब तक इस्लाम की मुख़ालिफ़त में बहुत पेश पेश थे। उन्हों ने ही बार बार मदीने पर हमले की साज़िशें की थीं। यहाँ तक कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को क़त्ल कराने की ख़ुफ़िया (छुपी हुई) तदाबीर भी की थीं। यह सब बातें ऐसी थीं कि अबूसुफ़ियान को फ़ौरन ही क़त्ल करा देना चाहिये था लेकिन आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उन पर मेहरबानी की नज़र डाली और फ़रमाया कि "जाओ आज तुम से कोई बाज़ पुर्स न की जाएगी। अल्लाह तुम्हें माफ़ करे वह सब रहम करने वालों से बढ़ कर रहम करने वाला है"। अबू सुफ़ियान के साथ यह मुआमला बिल्कुल ही अनोखा मुआमला था। रहमतुल्लिलआलमीन की इस रहमत ने अबू सुफ़ियान के दिल की आँखें खोल दीं और उन्हें यह मालूम हो गया कि मक्के पर फ़ौज ले कर आने वाला न तो दुश्मनों से

बदला लेने के लिये उन के ख़ून का प्यासा है और न दुनियावी बादशाहों की तरह मग़रूर व मुतकब्बिर है यही वजह थी कि अगरचे आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अबू सुफ़ियान को आज़ाद कर दिया। लेकिन वह मक्के वापस न गये बल्कि इस्लाम कुबूल कर के आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के जाँनिसारों में शामिल हो गये।

मक्के में दाख़िला:- अब आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ख़ालिद बिन वलीद को हुक्म दिया कि तुम मक्के की एक जानिब से दाख़िल हो लेकिन किसी को क़त्ल न करना हाँ अगर कोई तुम पर हाथ छोड़े तो अपने बचाव में तुम्हें भी हाथ उठाने की इजाज़त है और खुद आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम दूसरी जानिब से दाख़िल हुये। हज़रत ख़ालिद की फ़ौज के मुक़ाबिले में कुछ कुरैश क़बीलों ने तीर बरसाये और मुसलमानों के तीन अफ़राद को शहीद कर दिया। इसी लिये हज़रत ख़ालिद को भी मुक़ाबिला करना पड़ा और हमला करने वालों के 13 अफ़राद क़त्ल हुये और बाक़ी भाग खड़े हुये। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को जब हज़रत ख़ालिद के हमले की ख़बर हुई तो आप ने उन से बाज़पुर्स की। लेकिन जब असल क़िस्सा मालूम हुआ तो फ़रमाया "क़ज़ाए इलाही यही थी"। दूसरी तरफ़ से आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मक्के में बिला किसी मुज़ाहमत (रोक) के दाख़िल हुये और आप के लशकर के हाथों कोई क़त्ल न हुआ।

मक्के में अमन का एलान:- आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मक्के में दाख़िल होते ही एलान फ़रमा दिया कि:-

1. जो कोई अपने मकान के अन्दर किवाड़ बन्द कर के

बैठा रहे उसे अमन है।

2. जो अबू सुफ़ियान के घर में दाख़िल हो जाये उसे भी अमन है।

3. और जो कोई ख़ान-ए-काबा में पनाह ले उसे भी अमन है।

लेकिन इस आम अमन के एलान से ऐसे छः या सात आदमियों को मुसतसना (अलग) फ़रमा दिया था जो इस्लाम की मुख़ालिफ़त में बहुत पेश-पेश थे और जिन का क़त्ल कर देना ही ज़रूरी था।

नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मक्के में इस शान से दाख़िल हुये कि आप का अलम (झंडा) सफ़ेद रंगा का था और परचम सियाह रंग का। सिर पर मग़फ़र ओढ़े हुये थे। और उस पर सियाह अमामा बंधा हुआ था। सूरह "इन्ना फ़तहना" बुलंद आवाज़ से तिलावत फ़रमा रहे थे। और अल्लाह तआला की जनाब में ख़ुशू व ख़ुज़ू का यह आलम था कि जिस ऊँट पर आप सवार थे उस पर आप इस क़द्र झुके हुये थे कि चेहर-ए-मुबारक ऊँट की पीठ पर लग-लग जाता था।

ख़ान-ए-काबा में दाख़िला:- आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जब मस्जिदे हराम (ख़ान-ए-काबा) में दाख़िल हुये तो सब से पहले आप ने हुक्म दिया कि तमाम बुत निकाल कर फेंक दिये जाएँ। उस वक़्त काबे में 360 बुत मौजूद थे। दीवारों पर तसवीरें बनी हुई थीं यह भी सब मिटाई गईं और इस तरह अल्लाह के उस घर को शिर्क की गंदगी से पाक किया गया उस के बाद आप ने तकबीरें कहीं, ख़ान-ए-काबा का तवाफ़ फ़रमाया और मक़ामे इब्राहीम पर जा कर नमाज़ अदा की। बस यह था फ़त्ह का जश्न जिसे देख कर मक्के वालों की आँखें खुल गईं।

उन्हों ने देखा कि एक ऐसी ख़ुशी और ऐसी ज़बरदस्त फ़त्ह के मौक़ा पर भी उन लोगों में न तो शान व शौकत का इज़हार है और न गुरूर व तकब्बुर की बातें बल्कि इन्तिहाई आजिज़ी और शुक्र के साथ यह अपने ख़ुदा के सामने झुके जाते हैं। और उसी की हम्द और तकबीर में मस्त हैं। कौन था जो इस मंज़र को देख कर यह न कह उठता कि हक़ीक़त में यह न बादशाही है और न मुल्कगीरी बल्कि यह कुछ और ही है।

फ़त्ह के बाद ख़ुतबाः- फ़त्हे मक्का की तकमील के बाद आप ने एक निहायत अहम तारीख़ी ख़ुतबाइरशाद फ़रमाया जिस के कुछ हिस्से अहादीस में नक़ल हुये हैं। आप ने फ़रमायाः-

> "एक अल्लाह के सिवा कोई इलाह (इबादत के लायक़) नहीं है कोई उस का शरीक नहीं उस ने अपना वादा सच्चा किया। उस ने अपने बन्दे की मदद की और तमाम जत्थों को तनहा तोड़ दिया। हाँ सुन लो तमाम मफ़ाख़िर, तमाम पुराने क़त्ल और ख़ून के बदले और तमाम ख़ूँबहा सब मेरे क़दमों के नीचे हैं सिर्फ़ काबे की तौलियत और हुज्जाज को पानी पिलाना इस से मुसतसना हैं। ऐ अहले क़ुरैश! अब ख़ुदा ने जाहिलियत का गुरूर और नसब पर फ़ख़्र करना मिटा दिया तमाम लोग आदम अलैहिस्सलाम की नस्ल से हैं और आदम मिट्टी से बने थे"।

फिर क़ुरआन पाक की यह आयत पढ़ीः-

> "लोगो! मैं ने तुम को एक मर्द और औरत से पैदा किया और तुम्हारे क़बीले और ख़ानदान

बनाये ताकि तुम आपस में एक दूसरे से पहचान लिये जाओ। लेकिन ख़ुदा के नज़दीक शरीफ़ वह है जो ज़्यादा परहेज़गार हो। अल्लाह जानने वाला और बाख़बर है"। (हुजरात 20)

इसी के साथ ही चन्द दूसरे ज़रूरी मसाइल की भी तलक़ीन की।

यह है उस तक़रीर का अंदाज़ जो इस्लाम के फ़ातहे आज़म ने अपनी सब से बड़ी फ़तह के बाद की। उस में मुख़ालिफ़ों के ख़िलाफ़ न कोई गुस्सा है न नफ़रत, न अपने कारनामों का ज़िक्र है और न अपने जाँनिसारों की तारीफ़। तारीफ़ जो कुछ है वह बस एक अल्लाह के लिये है जो कुछ हुआ वह सब उसी के फ़ज़्ल का नतीजा है।

अरब में क़त्ल का बदला लेने की बड़ी अहमियत थी ख़ानदान का कोई शख़्स किसी के हाथ से क़त्ल हो जाता तो उसी ख़ानदान की याददाशत में उस वाक़िआ को महफ़ूज़ कर दिया जाता और बरसों के बाद भी आने वाली नस्लें जब तक क़ातिल के ख़ानदान से मक़तूल का बदला न ले लेतीं उन्हें चैन न आता। इस मौक़ा पर आप ने ऐसे तमाम ख़ून के बदलों को ख़त्म कर दिया। यूँ कहिये कि अरब को सही मानों में एक अमन और चैन की ज़िन्दगी इनायत फ़रमा दी। फिर अरबों में ख़ानदान और नस्ल पर फ़ख़्र करना एक बहुत पुरानी बीमारी थी। इस्लाम के नज़दीक इंसान और इंसान में कोई इम्तियाज़ इस के सिवा दुरूस्त नहीं है कि कौन अल्लाह के अहकाम का किस दरजा में इताअत गुज़ार है, जो जितना अल्लाह के अहकाम का पाबन्द और उस की ख़ुशी से डरने वाला है वह

उतना ही बुज़ुर्ग और शरीफ़ है नस्ल की शराफ़त इस्लाम में कोई चीज़ नहीं है ख़ानदानों का तअल्लुक़ सिर्फ़ एक दूसरे के तआरुफ़ के लिये है। अल्लाह के रसूल ने उस मौक़ा पर इस बीमारी को भी ख़त्म फ़रमा दिया और तमाम इंसानों के दर्मियान इस मसावात का एलान फ़रमा दिया जो आज तक इस्लाम के सिवा किसी दूसरे मज़हब ने इंसानों को नहीं दी है।

आम माफ़ी:– जिस मजमअ के सामने आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम खुतबा इरशाद फ़रमा रहे थे उस में कुरैश के बड़े- बड़े सरकश मौजूद थे। वह भी थे जिन्हों ने इस्लाम को मिटाने का बेड़ा उठाया था वह भी थे जिन्हों ने मुसलमानों को इतना सताया था कि वह अपना वतन छोड़ने पर मजबूर हो गये थे, वह भी थे जिन्हों ने मुसलमानों की जायदादों पर क़ब्ज़ा कर लिया था और वह भी थे जिन्हों ने आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को गालियाँ दी थी, आप के रास्ते में काँटे बिछाये थे, आप पर कूड़े के टोकरे डाले थे और इन्तिहा यह कि आप के क़त्ल के दरपै हुये थे उन्हीं में आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के चचा के वह क़ातिल भी थे जो उन का कलेजा निकाल कर चबा गये थे और वह भी थे जिन्हों ने बहुत से मुसलमानों को सिर्फ़ इसी लिये क़त्ल किया था कि वह एक ख़ुदा की बन्दगी का एलान करते थे। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उन सब की तरफ़ देखा और पूछा कि "कहो, आज तुम जानते हो कि अब तुम्हारे साथ क्या मुआमला करने वाला हूँ?" यह लोग देख चुके थे कि अल्लाह के रसूल ने मक्के में किस तरह क़दम रखा है। और उन का अब तक का रवय्या क्या रहा है। फ़ौरन बोल उठे कि:–

"आप शरीफ़ भाई हैं और शरीफ़ भाई के बेटे"

यह सुन कर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इरशाद फ़रमायाः-

"जाओ आज तुम पर कोई इलज़ाम नहीं, तुम सब आजाद हो"।

जिन लोगों ने मुसलमानो के छोड़े हुये मकानात पर क़ब्ज़ा कर लिया था आप ने उन को भी वापस नही कराया बल्कि मुहाजिरों से फ़रमाया कि वह अपने हक़ से दस्तबरदार हो जाएँ।

नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के इस ग़ैर मामूली बरताव का यह असर हुआ कि बड़े-बड़े सरकश क़दमों में थे और उन्हों ने एलान कर दिया कि वाक़ई आप अल्लाह के रसूल हैं। मुल्क फ़त्ह करने वाले बादशाह नहीं हैं और आप जो दावत देते हैं वही हक़ है।

यह था फ़त्हे मक्का का नक़्शा। यह फ़त्ह ज़मीन, जायदाद और माल पर फ़त्ह न थी बल्कि उस के ज़रिया दिलों को जीत लिया गया था और यही बड़ी फ़त्ह थी।

ग़ज़्व-ए-हुनैन

फ़त्हे मक्का का असरः- आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के रहीमाना बरताव और मुसलमानों के मेल जोल से एक तरफ़ तो मक्के में लोग जूक़ दर जूक़ इस्लाम कुबूल करने लगे और दूसरी तरफ़ मक्का फ़त्ह होने का असर तमाम अरब क़बीलों पर यह पड़ा कि उन्हों ने समझ लिया कि वाक़ई इस्लाम की तरफ़ दावत देने वाला कोई हुकूमत और दौलत का भूका नहीं है बल्कि अल्लाह का पैग़म्बर ही है। फिर उस वक़्त तक

इस्लाम की खुसूसियात कोई ढकी छुपी चीज़ न रह गई थीं बल्कि तक़रीबन तमाम अरब जान गया था कि यह दावत क्या है और जिन लोगों के दिलों में सलाहियत थी वह जानते थे कि हक़ यही है चुनाचे मक्का फ़त्ह होते ही अरब के गोशे-गोशे से मुख़तलिफ़ क़बीलों के वुफ़ूद आने लगे और इस्लाम कुबूल करने लगे। यह सूरते हाल ऐसी थी कि अभी जिन लोगों के दिलों में इस्लामी तहरीक के ख़िलाफ़ नफ़रत और गुस्सा मौजूद था वह इस कैफ़ियत को देख कर इन्तिहाई बेचैन हो गये। उन के अन्दर तअस्सुब और मुख़ालिफ़त की आग भड़क उठी। इस एतबार से हवाज़िन और सक़ीफ़ नामी दो क़बीले पेश-पेश थे। यह वैसे भी बहुत लड़ने वाले लोग थे और इस्लाम की तरक़्क़ी देख कर इन्तिहाई बेचैन थे उन्हों ने समझ लिया कि मक्के के बाद अब उन की बारी है। दोनों क़बीलों के सारदारों नें मिल कर मशवरा किया और यह तैय पाया कि जो कुछ भी हो मुसलमानों का डट कर मुक़ाबिला करना चाहिये और इस बढ़ते हुये ख़तरे को रोकना चाहिये वरना फिर हमारी ख़ैर नहीं है। उन्हों ने अपने एक सरदार मालिक इब्ने औफ़ नज़री को अपना बादशाह बनाया और मुसलमानों से निमटने के लिये तयारियाँ शुरू कर दीं उन्हों ने और भी बहुत से क़बीलों को अपना साथी बना लिया।

मअरक-ए-हुनैनः- नबी-ए -अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को जब यह हाल मालूम हुआ तो आप ने भी सहाबा केराम से मशवरा फ़रमाया और यह तैय पाया कि उस बढ़ते हुये फ़ितने को भी बर वक़्त दबा देने की कोशिश ज़रूरी है। चुनाचे 10 शव्वाल 8 हिजरी को तक़रीबन 12 हज़ार मुसलमानों

के लशकर के साथ आप दुश्मन के मुक़ाबिले के लिये रवाना हुये। उस वक़्त इस्लामी लशकर इतनी ज़्यादा तादाद में था और सरोसामान इतना काफ़ी था कि उसे देख कर पूरा यक़ीन होता था कि दुश्मन मुक़ाबिले की ताब न ला सकेगा और फ़ौरन ही मैदान छोड़ कर भाग खड़ा होगा। चुनाचे कुछ मुसलमानों की ज़ुबान से यह अलफ़ाज़ भी निकल गये कि "आज हम पर कौन ग़ालिब आ सकता है" लेकिन यह ख़याल मुसलमानों की शान से बईद है उसे किसी मौक़ा पर भी अपनी ताक़त पर भरोसा नहीं करना चाहिये उस की ताक़त और उस का भरोसा सिर्फ़ अल्लाह तआला का फ़ज़्ल व करम ही होना चाहिये कुरआन पाक में अल्लाह तआला ने इरशाद फ़रमाया हैः-

हुनैन का दिन याद करो। जब तुम अपनी कसरत पर नाज़ाँ थे लेकिन वह तुम्हारे कुछ काम न आई और ज़मीन वुस्अत के बावजूद उस दिन तुम्हारे लिये तंग हो गई। और तुम पीठ फेर कर भाग खड़े हुये फिर अल्लाह ने अपने रसूल पर और मुसलमानों पर अपनी तरफ़ से तसल्ली और इतमीनान की कैफ़ियत नाज़िल फ़रमाई और ऐसी फ़ौजें भेजीं जो तुम ने नहीं देखीं और काफ़िरों को अज़ाब दिया और काफ़िरों की यही सज़ा है"। (सूरह तोबा, आयत 25-26)

हुनैन मक्के और ताइफ़ के दर्मियान एक वादी का नाम है। इसी मक़ाम पर यह जंग हुई जब इस्लामी लशकर दुश्मन के सामने आया तो उन्हों ने इर्द गिर्द की पहाड़ियों से बेतहाशा तीर बरसाने शुरू कर दिये मुसलमान उस के लिये बिल्कुल तयार न थे। उन तीरों की वजह से उन की सफ़ें बिगड़ गईं और थोड़ी देर के लिये उन के क़दम उखड़ गये। बहुत से बदवी क़बाइल

भाग खड़े हुये। उन में बहुत से लोग वह थे जो अभी ईमान लाये थे और अभी उन की तर्बियत मुकम्मल नहीं हुई थी। इस भगदड़ की हालत में आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम निहायत इतमीनान के साथ मैदाने जंग में जमे रहे और बराबर मुसलमानों को पुकारते रहे कि वह दुश्मन का मुक़ाबिला करें और मैदान से मुँह न मोड़ें। आप के इस्तिक़लाल और आप के गिर्द बहुत से मुख़्लिस सहाबा की साबित क़दमी को देख कर मुसलमानों के क़दम फिर से जमना शुरू हो गये और फिर हर एक ने पूरी जवाँमर्दी और बहादुरी के साथ दुशमन का मुक़ाबिला शुरू किया। अल्लाह तआला ने नबीए करीम और सहाबा केराम की उसी साबितक़दमी को अपनी तरफ़ से नाज़िल की हुई सकीनत (इतमीनान और सुकून की कैफ़ियत) फ़रमाया है। इस का नतीजा यह हुआ कि अल्लाह के फ़ज़्ल से थोड़ी ही देर में लड़ाई का पाँसा पलट गया और मुसलमानों को मुकम्मल फ़त्ह हासिल हुई काफ़िरों के तक़रीबन 70 आदमी क़त्ल हुये और हज़ारों क़ैद हुये।

दुश्मन का तआक़ुब और दुआ-ए-ख़ैरः- काफ़िरों की बाक़ी फ़ौजों ने भाग कर ताइफ़ में पनाह ली। यह एक महफ़ूज़ मक़ाम समझा जाता था। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने दुश्मन का पीछा किया और ताइफ़ का मुहासरा कर लिया ताइफ़ में एक मशहूर और मज़बूत क़िला भी था जिस में काफ़िरों ने पनाह ली थी। मुहासरा तक़रीबन 20 रोज़ तक जारी रहा लेकिन जब आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को अच्छी तरह अंदाज़ा हो गया कि दुश्मन की असल ताक़त टूट चुकी है और अब उस की तरफ़ से किसी सरकशी का अंदेशा नहीं है

तो आप ने मुहासरा उठा लिया और उन के हक़ में यह दुआ फ़रमाई "ऐ अल्लाह! सक़ीफ़ को हिदायत कर और तौफ़ीक़ दे कि वह मेरे पास हाज़िर हो जाएँ"। सिवाए ख़ुदा के नबी के जो महज़ दीन की ख़ातिर कशमकश कर रहा हो कौन इतना रहीम और शफ़ीक़ हो सकता है कि ऐसे मौक़े पर भी अपने मुख़ालिफ़ों के लिये दुआ करे।

ग़ज़्व-ए-तबूक

सलतनते रूम से कशमकशः- अरब के शुमाल में रूम की बड़ी सलतनत थी। इस सलतनत के साथ कशमकश तो मक्का फ़त्ह होने से पहले ही शुरू हो गई थी। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक वफ़्द इस्लाम की दावत ले कर शुमाल की तरफ़ उन क़बाइल के पास भी भेजा था जो शाम की सरहद के क़रीब आबाद थे यह लोग ज़्यादातर ईसाई थे और रूमी सलतनत के ज़ोरे असर थे। उन लोगों ने इस्लामी वफ़्द के 15 आदमियों को क़त्ल कर दिया था और सिर्फ़ वफ़्द के रईस हज़रत कअब बिन उमर गफ़्फ़ारी बच कर वापस आये थे उस ज़माने में आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने बसरा के रईस शरजील के नाम भी दावते इस्लाम का पैग़ाम भेजा था मगर उस ने भी आप के एलची हज़रत हारिस बिन उमैर को क़त्ल कर दिया था। यह रईस भी क़ैसरे रूम के अहकाम के मातहत था। इन्हीं असबाब की बिना पर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जमादिल-ऊला 8 हिजरी में तीन हज़ार मुसलमानों की एक फ़ौज शाम की सरहद की तरफ़ भेजी थी ताकि उस इलाक़े में अब फिर मुसलमानों को बिल्कुल कमजोर समझ कर तंग न किया

जाये। जब उस फ़ौज के आने की इत्तला शरजील को मिली तो वह तक़रीबन एक लाख फ़ौज साथ ले कर मुक़ाबिले के लिये निकला लेकिन मुसलमान इस इत्तला के बावजूद आगे बढ़ते रहे क़ैसरे रूम उस वक़्त हिमस के मक़ाम पर मौजूद था। उस ने भी अपने भाई थ्यूडोर के साथ एक लाख मज़ीद फ़ौज भेज दी मगर मुसलमान बराबर आगे बढ़ते रहे और आख़िरकार मोता के मक़ाम पर यह तीन हज़ार सरफ़रोश इतनी बड़ी रूमी फ़ौज से टकरा गये। बज़ाहिर हालात इस इक़दाम का नतीजा तो यह होना चाहिये था कि मुसलमानों की यह थोड़ी सी जमाअत इतने कसीर लशकर के मुक़ाबिले में बिल्कुल ख़त्म हो जाती लेकिन अल्लाह का फ़ज़्ल ऐसा हुआ कि रूमियों की इतनी बड़ी फ़ौज भी उन मुसलमानों का कुछ न बिगाड़ सकी। यह वाक़िआ ऐसा था कि उसने आस पास के तमाम क़बीलों पर मुसलमानों की एक क़िस्म की धाक बिठा दी और दूर-दूर तक बसने वाले क़बीले भी इस्लाम की तरफ़ मुतवज्जेह हो गये और उन में से हज़ारों आदमी मुसलमान हो गये।

सब से ज़्यादा असर डालने वाला वाक़िआ यह हुआ कि ख़ुद रूमी फ़ौज के एक कमान्डर फ़रवा बिन अमर अलजुज़ामी ने इस्लाम की तालीमात पर तवज्जोह की और वह मुसलमान हो गये। और फिर उन्हों ने अपने ईमान का ऐसा ज़बरदस्त सुबूत दिया कि जब क़ैसर ने उन्हें गिरिफ़्तार कर के उन से कहा कि या तो इस्लाम छोड़ कर फिर अपने उहदे पर बहाल हो जाओ नहीं तो क़त्ल के लिये तयार रहो तो उन्हों ने उहदे और मंसब पर लात मार दी और कह दिया कि वह आख़िरत की कामियाबी के मुक़ाबिले में दुनिया की सरदारी क़ुबूल करने के लिये तयार

नहीं हैं। चुनाचे उन्हें क़त्ल कर दिया गया यह वाक़िआ ऐसा था कि उस से हज़ारों आदमियों को इस्लाम की अख़लाक़ी ताक़त और उस की वाक़ई अहमियत का अंदाज़ा हुआ और उन्हों ने जान लिया कि इस नई तहरीक का जो सैलाब उन की तरफ़ बढ़ रहा है उस का मुक़ाबिला करना कोई मामूली बात नहीं है।

क़ैसर की तरफ़ से हमले की तयारीः– दूसरे ही साल क़ैसर ने मुसलमानों को ग़ज़्व-ए-मोता की सज़ा देने के लिये शाम की सरहद पर फ़ौजी तयारियाँ शुरू कर दीं और अपने मातहत अरब क़बीलों से फ़ौजें इकट्ठी करने लगा। नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को भी इन तयारियों का हाल मालूम हुआ। यह मौक़ा इस्लामी तहरीक के लिये बड़ा नाज़ुक था उस वक़्त अगर ज़रा भी सुस्ती दिखाई जाती तो सारा काम ख़राब हो जाता। एक तरफ़ तो अरब के वह सब क़बीले फिर सिर उठाते जिन्हें अभी-अभी मक्के और हुनैन की जंग में शकिस्त उठाना पड़ी थी। दूसरी तरफ़ मदीने के मुनाफ़िक़ जो बराबर इस्लाम के दुश्मनों से साज़ बाज़ रखते थे ऐन वक़्त पर इस्लामी जमाअत के अन्दर ऐसा फ़साद बरपा करते कि फिर तहरीक और तंज़ीम का संभालना बड़ा दुश्वार हो जाता। ऐसे हालात में रूम की सलतनत के भरपूर हमले का मुक़ाबिला करना कोई आसान बात न होती। और इस बात का अंदेशा था कि उन तीन हमलों की ताब न ला कर इस्लामी तहरीक कुफ़्र के मुक़ाबिले में शकिस्त खा जाती, यही वुजूह थीं जिन के पेशे नज़र आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपनी बेमिसाल ख़ुदादाद बसीरत से काम ले कर बिला तअम्मुल यही फ़ैसला फ़रमाया कि उस मौक़ा पर क़ैसर की अज़ीमुशशान ताक़त से

टक्कर लेना ही मुनासिब है क्यों कि इस मौक़ा पर ज़रा सी भी कमज़ोरी दिखाने से सब बना बनाया काम बिगड़ जाता।

मुक़ाबिला करने का फ़ैसला:- मुसलमानों के लिये उस वक़्त किसी जंगी तयारी के लिये आमादा हो जाना एक बड़ा सख़्त इम्तिहान था, मुल्क में क़हतसाली थी, सख़्त गर्मी का मोसम था, फ़सलें पकने के क़रीब थीं और जंगी सामान भी मुकम्मल न था, दूर दराज़ का सफ़र था और मुक़ाबिला भी एक बहुत ज़बरदस्त ताक़त से था इन हालात के बावजूद नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मौक़ा की नज़ाकत का अंदाज़ा फ़रमानें के बाद जंग का एलान कर दिया। और साफ़-साफ़ बता दिया कि कहाँ जाना है और किस लिये जाना है।

यहाँ यह बात पेशे नज़र रखना चाहिये कि उस वक़्त तक इस्लामी तहरीक का मुक़ाबिला खुल कर बैरूनी दश्मनों से हो रहा था और मक्के और हुनैन की लड़ाई के बाद उस मुख़ालिफ़त का ज़ोर टूट चुका था लेनि उस वक़्त तक अंदरूनी दुश्मन यानी मुनाफ़िक़ों के साथ ज़्यादातर मुआमला दरगुज़र का बरता गया था। और यह इस लिये था कि अभी तक तहरीक़ इतनी मज़बूत नहीं हुई कि एक ही वक़्त में बाहर के और घर के दुश्मनों से लड़ाई मोल ली जाती दूसरे यह कि मुनाफ़िक़ों में सब एक ही तरह के लोग थे। उन में ऐसे भी थे जो या तो कमज़ोरी-ए-ईमान में मुबतला थे या कुछ शुकूक व शुबहात रखते थे ऐसे लोगों को एक मुनासिब मुद्दत तक मुहलत देना ज़रूरी था ताकि वह अपनी कमज़ोरी और अपने शुकूक व शुबहात दूर कर लें। और आख़िर में सिर्फ़ वही लोग बाक़ी रह जाएँ जो जान बूझ कर और सोच समझ कर इस्लाम की जड़ें

काटने के लिये मुसलमानों के अन्दर घुस आये थे चुनाचे एक अरसा तक ऐसे लोगों को नर्म और गर्म हर अंदाज़ में समझाने की कोशिश होती रहीं और उस के नतीजे में जिन लोगों के अन्दर कुछ भी सलाहियत थी वह सीधे रास्ते पर आते चले गये। अब यह सब मरहले तैय हो चुके थे। मुसलमानों ने मुल्क के अन्दर अपने मुख़ालिफ़ों को बड़ी हद तक ज़ेर कर लिया था और अब उन का मुक़ाबिला मुल्क की बाहर की ताक़तों से शुरू हो रहा था। ऐसे नाजुक मौक़ों पर घर के अन्दर के दुश्मनों का सिर कुचलना बहुत ज़रूरी था वरना अंदेशा था कि यह लोग बाहर के दुश्मनों से साज़ बाज़ कर के मालूम नहीं किस वक़्त क्या नुक़सान पहुँचा दें।

मुनाफ़िक़त का पर्दा फ़ाशः– मुनाफ़िक़ों से निमटने के लिये पहला मरहला यह था कि यह सब लोग खुल कर सामने आ जाएँ और उन्हों ने जो अपने चेहरे पर ईमान और इस्लाम की नक़ाब डाल रखी है वह हट जाये और उन की असल हैसियत पूरी इस्लामी सोसाइटी को मालमू हो जाये। उन के लिये फिर यह मौक़ा बाक़ी न रहे कि यह मुसलमानों के मुआमलात में मुसलमान बन कर दख़ल देते हैं और उन्हें मुसलमानों में वही मक़ाम और दरजा हासिल रहे जो मुख़्लिस मुसलमानों को हासिल है। चुनाचे जंगे तबूक का यह एलान मुनाफ़िक़ों को बेनक़ाब करने में निहायत कारगर साबित हुआ। उस मौक़ा पर वह सब लोग जो अपने ईमान के दावे में मुख़्लिस थे दिल व जान से जिहाद के लिये तयार हो गये। सरमाया की ज़रूरत सामने आने पर उन के पास जो कुछ था लाकर हाज़िर कर दिया और जब सवारी का इन्तिज़ाम मुकम्मल न होने की वजह

से उन में से कुछ लोगों को आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथ जाने का मौक़ा न मिला तो वह उस महरूमी पर रो दिये और इस तरह साफ़ मालूम हो गया कि इस्लामी जमाअत में कितने लोग मुख़्लिस हैं लेकिन उन के बरख़िलाफ़ जिन लोगों के दिलों में ईमान नहीं था, जंग का एलान सुन कर गोया उन की जान ही निकल गई। उन लोगों ने तरह-तरह के हीले बहाने बनाने शुरू किये और जंग पर न जाने के लिये आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से रुख़सत हासिल करने लगें। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने भी उस मौक़ा पर नर्म रवय्या इख़्तियार फ़रमाया और ऐसे तमाम लोगों को रुख़सत देदी। फिर उन मुनाफ़िकों ने इतना ही नहीं किया कि ख़ुद जंग पर जाने से जान चुराई बल्कि यह दूसरों को भी रोकते और वरग़लाते रहे कभी कहते कि गर्मी बहुत सख़्त है ऐसे में जंग के लिये जा कर क्या जान देना है कभी कहते कि भला रूम की सलतनत के मुक़ाबिले में यह थोड़े से मुसलमान क्या कर सकेंगे। यह तो जान बूझ कर अपने आप को हलाकत में डालना है। ग़र्ज़ यह कि यह एलाने जंग एक ऐसा इम्तिहान साबित हुआ जिस में मुख़्लिस मोमिनीन और मुनाफ़िक़ खुल कर सामने आ गये और अब यह मुम्किन हो गया कि ऐसे लोगों के ख़िलाफ़ जो मुनासिब कारवाई हो वह की जाये। चुनाचे आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने तबूक से वापसी पर इस का जो इन्तिज़ाम फ़रमाया उस का ज़िक्र आइंदा अपने मौक़े पर आएगा।

तबूक के लिये रवानगी:- ग़र्ज़ आप रजब 9 हिजरी में 30 हज़ार फ़ौज के साथ मदीने से निकले जिन में 10 हज़ार सवार

थे ऊँटों की इतनी कमी थी कि एक ऊँट पर कई-कई आदमी बारी-बारी सवार होते थे। उस पर गर्मी की शिद्दत और पानी की कमी। मगर मोमिनों ने इस मौक़ा पर अपने ईमान के ख़ुलूस, नबी की इताअत और अल्लाह की राह में सरफ़रोशी के जिस शौक़ का सुबूत दिया था अल्लाह तआला ने उसे कुबूल फ़रमाया और ऐसा इन्तिज़ाम फ़रमा दिया कि बग़ैर किसी लड़ाई के ही वह मक़सद हासिल हो गया जिस के लिये नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मदीने से कूच फ़रमाया था। तबूक पहुँच कर मालूम हुआ की क़ैसर ने सरहद से अपनी फ़ौजें हटा ली हैं। और अब कोई मुक़ाबिले के लिये मौजूद ही नहीं है। हुआ यह कि जब क़ैसर को यह मालूम हुआ कि उस की इतनी ज़बरदस्त तयारी की इत्तला पाने के बावजूद मुसलमान इस बेख़ौफ़ी के साथ मुक़ाबिले के लिये ख़ुद मदीने से निकल पड़े हैं। और बराबर बढ़ते चले आ रहे हैं तो उस ने यही मुनासिब समझा कि अपनी फ़ौजें हटा ले वह इस से पहले देख चुका था कि ग़ज़्व-ए-मोता के मौक़े पर तीन हज़ार मुजाहिदों ने दो लाख फ़ौज के मुक़ाबिले में कैसी शुजाअत दिखाई थी इस लिये जब उसे मालूम हुआ कि ख़ुद नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम 30 हज़ार की जमइय्यत (जमाअत) के साथ तशरीफ़ ला रहे हैं तो उस ने यही फ़ैसला किया कि इस सैलाब का मुक़ाबिला न किया जाये कहीं ऐसा न हो कि पाँसा पलट जाये और उस की साख ख़त्म हो जाये।

तबूक पर कयामः- क़ैसर के इस तरह मैदान से हट जाने को नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने काफ़ी समझा और उस का पीछा करने के बजाये उस इलाक़े में अपने

असरात को मज़बूत करना मुनासिब ख़याल फ़रमाया आप वहाँ 20 दिन तक ठहरे और उस दर्मियान बहुत सी छोटी-छोटी रियासतों को जो सलतनते रूम और इस्लामी हुकूमत के दर्मियान वाक़ेअ थीं और अब तक रूमियों के ज़ेरे असर थीं इस्लामी हुकूमत का मुतीअ (फ़रमाँबरदार) और बाज़गुदाज़ बना लिया। और इस तरह अब तक जो अरब क़बीले क़ैसरे रूम का साथ देते थे अब वह इस्लामी हुकूमत के मददगार और मुआविन बन गये।

मुनाफ़िक़ों की चालः- जिस वक़्त आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम तबूक की मुहिम पर मदीना से रवाना हुये उस वक़्त वह सब लोग जो दरअसल मुसलमान नहीं थे लेकिन इस्लामी जमाअत में अपने किसी न किसी मफ़ाद के लिये घुस आये थे। मदीने में ही पीछे रह गये थे उन लोगों को पूरा यक़ीन था कि मुसलमान इस मुहिम से बख़ैरियत वापस न आ सकेंगे कुछ तो मोसम की सख़्ती और सफ़र की मुसीबतों का शिकार हो जाएँगे और नहीं तो क़ैसर की बेपनाह फ़ौज के मुक़ाबिले में उन का क़लअ क़मअ (तोड़ फोड़) हो जाएगा। उन मुनाफ़िक़ों ने एक मस्जिद भी बना ली (मस्जिदे ज़ेरार) जहाँ यह नमाज़ के बहाने आम मुसलमानों से अलग जमा होते थे और ख़ुफ़िया मशवरे किया करते थे। उन लोगों ने उस मौक़े पर इस्लामी तहरीक को इन्तिहाई नुक़सान पहुँचाने के लिये क़िस्म क़िस्म की साज़िशें कीं और यहाँ तक तैय कर लिया कि तबूक की जंग का फ़ैसला मालूम होने के बाद जिस के बारे में उन्हें यक़ीन था कि वह मुसलमानों की शकिस्त ही की सूरत में निकलेगा, अब्दुल्लाह बिन उबई को मदीना का बादशाह बना लिया जाएगा।

लेकिन अल्लाह तआला की मशिय्यत का फ़ैसला कुछ और ही था। और अब दरअसल वह वक़्त बिल्कुल क़रीब आ रहा था जब इस्लाम की शकिस्त के बारे में अहले कुफ़्र की हर उम्मीद पर मुकम्मल पानी फिरने वाला था। चुनाचे तबूक की इस बिला जंग फ़त्ह के हालात जब इस्लाम के दुश्मनों को मालूम हुए तो उन की कमर टूट गई और उन्हें ऐसा मालूम हुआ कि अब उन की उम्मीदों का आख़िरी सहारा भी उन के हाथ से छूट गया।

तबूक से वापसी के बादः– तबूक से वापसी के बाद आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के सामने तीन अहम काम थेः–

(1) मुनाफ़िक़ों के बारे में वाज़ेह पालीसी पर अमल और उन की रेशादवानियों (साज़िश) से इस्लामी तहरीक को महफ़ूज़ करने का पूरा पूरा बनदोबस्त।

(2) मोमिनीन सादिक़ीन की तर्बियत और उन के बारे में किरदार साज़ी के उन गोशों की तकमील जिन के बग़ैर सालेहीन का यह गिरोह जो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की निगरानी में तयार हो रहा था। शहादते हक़ के उस बार (बोझ) को नहीं उठा सकता था जो बहुत जल्द उन के काँधों पर आने वाला था।

(3) दारूल-इस्लाम की इस वाज़ेह सियासी पालीसी का एलान जिस पर इस नई इस्लामी ममलेकत की तशकील होना थी।

मुनाफ़िक़ों के साथ मुआमलाः– अभी आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम तबूक से मदीना वापस तशरीफ़ नहीं लाये थे कि रास्ता में ही सूरह तोबा नाज़िल हुई और अल्लाह तआला ने अपने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को बहुत सी ऐसी हिदायात से सरफ़राज़ फ़रमाया जिन पर आप को मदीना वापस आने के

बाद अमल करना था। अब तक मुनाफ़िक़ों के साथ जिस नर्म पालीसी पर अमल किया गया था। और जिस के मातहत उन के वह उज़रात (माफ़ी) कुबूल कर लिये गये थे जो उन्हों ने लड़ाई से जान बचाने के लिये तबूक के सफ़र के वक़्त आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत में पेश किये थे उस को बिल्कुल बदल देने की हिदायत की गई और साफ़-साफ़ कह दिया गया कि उन के साथ मुआमला सख़्ती का किया जाये। यह अगर अपने झूटे दाव-ए-ईमान को सही साबित करने के लिये माली इमदाद पेश करें तो वह कुबूल न की जाये उन में से कोई मर जाये तो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम उस के जनाज़े की नमाज़ न पढ़ाएँ मुसलमान उन से शख़्सी और ख़ानदानी तअल्लुक़ात की बिना पर ख़ुलूस और दोस्ती का मुआमला न रखें।

अबूआमिर की साज़िशें:- आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के मदीना तशरीफ़ लाने से पहले एक ईसाई राहिब अबू आमिर की दुर्वेशी और इल्म (ज्ञान) का मदीना में बड़ा चर्चा था लोग उस को बहुत मानते थे। जब आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मदीने तशरीफ़ लाये तो उस की दुर्वेशी और ख़ुदापरस्ती का नतीजा तो यह निकलना चाहिये था कि वह हिदायत की रोशनी से फ़ायदा उठाता और ख़ुदापरस्ती के सही तसव्वुर को सब से पहले बढ़ कर कुबूल करता। लेकिन जिस तरह इल्म और तक़वा का ग़लत पिन्दार (तसव्वुर) और रस्मी और रिवाजी दीनदारी का मुज़ाहिरा आम तौर पर इंसान को हिदायत की पैरवी से रोक देता है उसी तरह अबू आमिर पर भी इस्लामी दावत का उल्टा ही असर पड़ा। उस की नज़र अपने दीनदारी के कारोबार पर गई और उस ने महसूस किया

कि अब इस नई तहरीक के मुक़ाबिले में उस की दुर्वेशी और पीरी का सिक्का नहीं चल सकेगा और इसी लिये वह तहरीके इस्लामी का सब से सख़्त मुख़ालिफ़ बन गया।

पहले तो उसे यह उम्मीद रही कि चार दिन की चाँदनी है भला कहीं इस क़िस्म की ख़ुदापरस्ती और दीनदारी के कुयूद को लोग कुबूल किया करते हैं। लेकिन जब बद्र की लड़ाई में कुरैश ने शकिस्त खाई तो वह तिलमिला उठा और उस ने कुरैश और दूसरे अरब क़बीलों को इस्लाम के ख़िलाफ़ भड़काने में एड़ी चोटी का ज़ोर लगाया और उहुद की लड़ाई और अहज़ाब के हमले में जो कुछ मुसलमानों के सामने आया उस में उस दुर्वेश की कोशिशों को बहुत कुछ दख़ल था। उस ईसाई अहले किताब ने मुसलमानों के ख़िलाफ़ मुश्रिकों से साज़ बाज़ करने और तौहीद के चिराग़ को बुझाने के लिये शिर्क की आँधियाँ उठाने में कोई कसर न उठा रखी लेकिन जब अल्लाह तआला का यह फ़ैसला खुल कर सामने आने लगा कि "फूँकों से यह चिराग़ बुझाया न जाएगा" और यह कि इस्लाम ही तमाम अरब का ग़ालिब दीन हो कर रहेगा तो उस "ख़ुदापरस्त दुर्वेश" की बेचैनी की कोई इन्तिहा न रही। और अब उस ने रूम का सफ़र इख़्तियार किया ताकि वहाँ जा कर वह ख़तरे की घंटी बजाये और क़ैसर को मुतवज्जेह करे कि वह उस उठते हुये तूफ़ान को रोकने के लिये जो कुछ कर सके करे।

मस्जिदे ज़ेरारः– अबू आमिर की इन तमाम कोशिशों में मदीना के मुनाफ़िक़ों का एक गिरोह उस का शरीकेकार था और बाहम मशवरों से यह लोग इस्लामी तहरीक को मिटाने की तदबीरें किया करते थे चुनाचे उसी शख़्स की तजवीज़ के मुताबिक़

मदीने के कुछ मुनाफ़िक़ों ने अपनी एक अलग मस्जिद बनाने का फ़ैसला किया जिस का ज़िक्र पहले आ चुका है इस जगह यह लोग नमाज़ के बहाने जमा होते और मुसलमानों के ख़िलाफ़ साज़िशें किया करते।

उस वक़्त मदीने में दो मस्जिदें थीं। एक मस्जिदे कुबा जो शहर के एक किनारे थी और दूसरी मस्जिदे नबवी जो दर्मियान शह्र वाक़े थी। उन की मौजूदगी में किसी तीसरी मस्जिद की वाक़ई ज़रूरत न थी लेकिन उन मुनाफ़िक़ों ने यह बहाना कर के कि कुछ बूढ़े और माज़ूर लोगों को उन दोनों मस्जिदों तक जाने में बहुत तकलीफ़ होती है एक तीसरी मस्जिद बनाई। और आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से दरख़्वास्त की कि उस में आप एक बार नमाज़ पढ़ा दें ताकि उस मस्जिद की शुरूआत ख़ैर व बरकत के साथ हो। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि इस वक़्त तो मैं तबूक की मुहिम पर जाने की तयारी में मशग़ूल हूँ वापसी पर देखा जाएगा। वापसी पर रास्ते ही में वह आयात नाज़िल हुईं जिन में अल्लाह तआला ने वाज़ेह तौर पर आप को उस मस्जिद में नमाज़ पढ़ने से ममानिअत (मनाही) फ़रमा दी। और यह बता दिया कि यह दरअसल एक ऐसी जगह है जो मुसलमानों के ख़िलाफ़ मशवरे करने के लिये और बतौरे घात के काम में लाई जाती है यह इस क़ाबिल नहीं कि आप इस में नमाज़ पढ़ें चुनाचे आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कुछ लोगों को हुक्म दिया कि वह मदीना जा कर उस मस्जिद को आप के वहाँ पहुँचने से पहले ढा दें। इस तरह उस मस्जिद का ढाना दरअसल मुनाफ़िक़ों के ख़िलाफ़ मुसलमानों के आइंदा तरज़ेअमल का एक खुला हुआ

एलान था और उसी पर आइंदा अमल किया गया।

अह्ले ईमान की तर्बियत की तकमीलः– अब इस्लमी तहरीक एक आलमगीर जद्दोजहद की मन्ज़िल में दाख़िल होने वाली थी और वह वक़्त क़रीब था जब अरब के यह मुस्लिम तमाम ग़ैर मुस्लिम दुनिया को अल्लाह के दीन का पयाम पहुँचाने की मुहिम पर निकलने वाले थे ऐसे मरहले में मोमिनीन के अन्दर कोई मामूली सी कमज़ोरी भी बड़ी रूकावट का सबब बन सकती थी इसी लिये उस मरहले पर मोमिनीन की तर्बियत की तकमील पर पूरी तवज्जोह की गई। और उन के अन्दर ईमान की कमज़ोरी की एक-एक अलामत को चुन-चुन कर निकाला गया और उस को दूर करने की ताकीद की गई।

तबूक की जंग के मौक़े पर जहाँ वह लोग पीछे रह गये थे जिन के अन्दर वाक़ई ईमान और इस्लाम मौजूद नहीं था वहाँ कुछ ऐसे मोमिनीन भी पीछे रह गये थे जो अगरचे सच्चे मुसलमान थे लेकिन किसी वक़्ती कमज़ोरी या सुस्ती की बिना पर उन से यह कोताही सरज़द हो गई थी। ऐसे लोगों की इस्लाह के लिये काफ़ी सख़्त रवय्या इख़्तियार किया गया। ताकि आइंदा ऐसी कमज़ोरी ज़ाहिर न हो सके। इस ज़ैल में तीन सहाब-ए-किराम हज़रत कअब बिन मालिक, हिलाल बिन उमय्या और मुरारह बिन रबीअ रज़िअल्लाहु तआला अनहुम का वाक़िआ निहायत सबक़ आमोज़ है जिस की रोशनी में यह अंदाज़ा बख़ूबी हो सकता है कि उस वक़्त मोमिनीन की तर्बियत किस अंदाज़ पर की जा रही थी। यह तीनों सहाबी अगरचे सच्चे मोमिन थे और इस से पहले उन के अख़लासे ईमान का तजर्बा भी हो चुका था लेकिन चूँकि महज़ सुस्ती की वजह से

वह तबूक की मुहिम के मौक़ा पर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का साथ न दे सके थे इस लिये उन की सख़्त गिरिफ़्त की गई और नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने तबूक से वापस तशरीफ़ लाने के बाद मुसलमानों को हुक्म दे दिया कि कोई उन से सलाम कलाम न करे और चालीस दिन के बाद उन की बीवियों को भी उन से अलग रहने की ताकीद कर दी गई। 50 दिन के बाद अल्लाह तआला ने उन की तौबा कुबूल फ़रमाई और उन की माफ़ी का हुक्म नाज़िल फ़रमाया जो सूरह तौबा में मज़कूर है उन में एक साहब हज़रत कअब बिन मालिक का वाक़िआ तफ़सील के साथ खुद उन की जुबानी मनकूल हुआ है निहायत ही सबक़आमोज़ है वह फ़रमाते हैं कि:-

हज़रत कअब का वाक़िआ:- "जब आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मुसलमानों को तबूक की मुहिम के लिये तयार कर रहे थे तो मैं भी यह इरादा कर लेता था कि अब चलने की तयारी करूँ मगर फिर सुस्ती कर जाता था और कहता था अभी क्या है, जब वक़्त आएगा तो तयार होते क्या देर लगती है, इसी तरह बात टलती रही यहाँ तक कि रवानगी का वक़्त आ गया और मैं तयार न था मैं ने दिल में कहा कि लशकर को चलने दो, मैं दो एक रोज़ बाद भी चलूँगा तो क़ाफ़िले से जा मिलूँगा। ग़र्ज़ यह कि इसी सुस्ती में वक़्त निकल गया और मैं जा न सका।

जब मैं यह देखता था कि जिन लोगों के साथ मैं पीछे रह गया हूँ वह या तो मुनाफ़िक़ हैं या ऐसे कमज़ोर और मजबूर लोग हैं जिन को अल्लाह ने माज़ूर रखा है तो मेरा दिल बेइन्तिहा कुढ़ता था और मुझे अपनी हालत पर बड़ा अफ़सोस

होता था।

जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम सफ़र से वापस तशरीफ़ लाये तो हस्बे मामूल आप ने पहले मस्जिद में आकर दो रकअत नमाज़ अदा फ़रमाई। फिर लोगों से मुलाक़ात के लिये बैठे अब मुनाफ़िक़ों ने आ आ कर अपने उज़रात पेश करना शुरू किये और क़स्में खा खा कर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को अपनी मजबूरी का यक़ीन दिलाने लगे। ऐसे लोग 80 आदमियों से कुछ ज़्यादा थे। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उन की बनावटी बातें सुनीं। और उन के ज़ाहिरी उज़्र कुबूल फ़रमा कर उन के बातिन को ख़ुदा पर छोड़ दिया और उन्हें माफ़ कर दिया। अब मेरी बारी आई मैं ने आगे बढ़ कर सलाम अर्ज़ किया। आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मेरी तरफ़ देख कर मुसकुराये और फ़रमाया "कहिये आप को किस चीज़ ने रोका था" मैं ने अर्ज़ किया ख़ुदा की क़सम अगर मैं किसी अहले दुनिया के सामने हाज़िर होता तो ज़रूर कोई न कोई बात बना कर उसे राज़ी कर लेता मगर आप के बारे में तो मेरा ईमान है कि अगर इस वक़्त कोई बात बना कर आप को राज़ी भी कर लूँ तो अल्लाह ज़रूर आप को मुझ से नाराज़ कर देगा। अलबत्ता अगर सच-सच कह दूँ तो चाहे आप नाराज़ ही क्यों न हों, मुझे उम्मीद है कि अल्लाह तआला मेरे लिये कोई न कोई माफ़ी की सूरत पैदा फ़रमा देगा। सच तो यह है कि मेरे पास कोई उज़्र नहीं है जो मैं पेश कर सकूँ। मैं जाने पर पूरी कुदरत रखता था" इस पर हुज़ूर ने फ़रमाया "यह शख़्स है जिस ने सच्ची बात कही, अच्छा उठ जाओ और इन्तिज़ार करो। यहाँ तक कि अल्लाह तआला तुम्हारे

मुआमले में कोई फ़ैसला फ़रमाए" मैं उठा और अपने क़बीले के लोगों में जा बैठा। मेरी तरह दो और आदमियों (मुरारह बिन रबीअ और हिलाल बिन उमय्या) ने भी वही सच्ची बात कही जो मैं ने कही थी।

इस के बाद नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हुक्म दे दिया कि हम तीनों आदमियों से कोई बात न करे। वह दोनों तो घर में बैठ गये मगर मैं निकलता था। जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ता था बाज़ारों में चलता फिरता था और कोई मुझ से बात न करता था ऐसा मालूम होता था कि यह सरज़मीन बिल्कुल बदल गई है, मैं यहाँ अजनबी हूँ और यहाँ कोई मेरा जानने वाला नहीं है, मस्जिद नमाज़ के लिये जाता तो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को सलाम करता और इन्तिज़ार ही करता रह जाता कि जवाब के लिये आप के होंट हिलते हैं या नहीं, नमाज़ में नज़रें चुरा कर हुज़ूर को देखता था कि आप की निगाहें मुझ पर कैसी पड़ती हैं। मगर वहाँ हाल यह था कि जब तक मैं नमाज़ पढ़ता आप मेरी तरफ़ देखते रहते और जहाँ मैं ने सलाम फेरा आप ने मेरी तरफ़ से नज़रें हटा लीं। एक रोज़ मैं घबरा कर अपने चचाज़ाद भाई और बचपन के दोस्त अबूक़तादा के पास गया और उन के बाग़ की दीवार पर चढ़ कर उन्हें सलाम किया मगर उस अल्लाह के बन्दे ने सलाम का जवाब तक न दिया। मैं ने कहा "अबूक़तादा! मैं तुम को खुदा की क़सम दे कर पूछता हूँ क्या मैं खुदा और उस के रसूल से मुहब्बत नहीं रखता?" वह ख़ामोश रहे। मैं ने फिर पूछा, फिर ख़ामोश रहे। तीसरी बार बस इतना कहा "अल्लाह और उस का रसूल ही बेहतर जानता है" इस पर मेरी आँखों से आँसू

आ गये और मैं दीवार से उतर आया।

उन्हीं दिनों एक दफ़ा बाज़ार से गुज़र रहा था कि शाम के एक शख़्स ने शाहे ग़स्सान का ख़त हरीर में लिपटा हुआ मुझे दिया। मैं ने खोल कर पढ़ा तो उस में लिखा था "हम ने सुना है तुम्हारे साहब ने तुम पर सितम तोड़ रखा है। तुम कोई ज़लील आदमी नहीं हो न इस लायक़ हो कि तुम्हें ज़ाया किया जाये हमारे पास आ जाओ हम तुम्हारी क़द्र करेंगे"। मैं ने कहा "यह और बला आई" और उसी वक़्त ख़त को चूल्हे में झोंक दिया।

40 दिन इस हालत में गुज़र चुके थे कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का हुक्म आया कि अपनी बीवी से भी अलग हो जाओ। मैं ने पूछा "क्या तलाक़ देदूँ? जवाब मिला "नहीं बस अलग रहो"।

मैं ने अपनी बीवी को उन के मैके भेज दिया और कहा "इन्तिज़ार करो यहाँ तक कि अल्लाह तआला इस मुआमले का फ़ैसला फ़रमा दे।

पचासवें दिन सुब्ह की नमाज़ के बाद मैं अपने मकान की छत पर बैठा था। और अपनी जान से बेज़ार हो रहा था कि यकायक किसी शख़्स ने पुकार कर कहा "मुबारक हो कअब बिन मालिक" मैं यह सुनते ही सज्दे में गिर गया। और मैं ने जान लिया कि मेरी माफ़ी का हुक्म हो गया है फिर तो फ़ौज दर फ़ौज लोग भागे चले आ रहे थे। और हर एक दूसरे से पहले पहुँच कर मुझ को मुबारकबाद दे रहा था कि तेरी तौबा क़ुबूल हो गई मैं उठा और सीधा मस्जिदे नबवी की तरफ़ चला। देखा कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का चेहरा ख़ुशी से चमक रहा है। मैं ने सलाम किया तो फ़रमाया तुझे मुबारक हो,

यह दिन तेरी ज़िन्दगी में सब से बेहतर है मैं ने पूछा "यह माफ़ी हुज़ूर की तरफ़ से है या ख़ुदा की तरफ़ से?" फ़रमाया "ख़ुदा की तरफ़ से" और कुरआन की वह आयात सुनाईं जिस में इस तौबा की कुबूलियत का ज़िक्र है।

मैं ने अर्ज़ किया "या रसूलुल्लाह! मेरी तौबा में यह भी शामिल है कि मैं अपना सारा माल ख़ुदा की राह में सदक़ा कर दूँ" फ़रमाया "कुछ रहने दो यह तुम्हारे लिये बेहतर है"। मैं ने इस इरशाद के मुताबिक़ अपना हिस्सा रख लिया। बाक़ी सब सदक़ा कर दिया। फिर मैं ने ख़ुदा से अहृद किया कि जिस सच के बदले में अल्लाह ने मुझे माफ़ी दी है उस पर तमाम उम्र क़ायम रहूँगा, चुनाचे आज तक मैं ने कोई बात जान बूझ कर ख़िलाफ़े वाक़िआ नहीं कही। और उम्मीद रखता हूँ कि आइंदा भी अल्लाह मुझे इस से बचाएगा।

मुस्लिम मुआशरे की ख़ुसूसियातः- इस वाक़िआ की तफ़सीलात में सहाब-ए-केराम की सोसाइटी का जो नक़्शा सामने आता है उस की कुछ नुमायाँ ख़ुसूसियात ऐसी हैं जो हर मोमिन के सामने रहना चाहिऐं। उन से अंदाज़ा होता है कि इस्लमी तहरीक अपने अलमबरदारों का मिज़ाज कैसा बनाती है।

सब से पहली बात तो यह सामने आती है कि जब कुफ़्र और इस्लाम की कशमकश का मुआमला दरपेश हो तो यह मोमिनों के लिये इन्तिहाई सख़्त इम्तिहान का वक़्त होता है। उस वक़्त इस बात का अंदेशा होता है कि कहीं किसी ग़फ़लत की वजह से सारी उम्र का किया कराया ग़ारत न हो जाये क्योंकि ऐसे वक़्त में अगर कोई मोमिन इस्लाम का साथ न दे तो चाहे उस की यह कोताही किसी बदनिय्यती की बिना पर न हो और

चाहे सारी उम्र में एक ही बार ऐसी कोताही सरज़द हो ताहम इस बात का ख़तरा पैदा हो जाता है कि कहीं इस का यह तरज़े अमल उस की सारी उम्र की नेकियों और इबादतों को बरबाद न कर दे। मोमिन के लिये किसी मौक़े पर इस अम्र की गुंजाइश नहीं निकलती कि वह इस्लाम के बदले कुफ़्र का साथ दे और कोई ऐसा अमल करे जिस से किसी ग़ैर इस्लामी तहरीक को तक़वियत पहुँचती हो। यह सूरते हाल इस मौक़ा पर और ज़यादा नाज़ुक हो जाती है जब ग़ैर इस्लामी तहरीकों के मुक़ाबिले में कोई इस्लामी तहरीक मौजूद हो और मोमिनों की सलाहियतें अल्लाह के दीन को बुलंद करने के बदले किसी दूसरे काम में लग रही हों।

दूसरी बात यह है कि जब किसी फ़र्ज़ के अदा करने का वक़्त आ जाये तो उस वक़्त मोमिन के लिये सुस्ती दिखाना ठीक नहीं कभी सुस्ती ही सुस्ती में काम का वक़्त निकल जाता है और फिर यह उज़्र कुछ काम नहीं देता कि उस का कुसूर बदनिय्यती की बुनियाद पर नहीं था।

सहाब-ए-केराम की सोसाइटी का हाल यह है कि एक तरफ़ मुनाफ़िक़ीन हैं जो बनावटी उज़्र पेश कर रहे हैं और सब जानते हैं कि यह झूट कह रहे हैं मगर नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम उन की ज़ाहिरी बातों को सुन कर उन का कुसूर माफ़ कर देते हैं क्यों कि उन से यह उम्मीद ही कब थी कि वह किसी इम्तिहान के वक़्त ईमान के ख़ुलूस का सुबूत देंगे। लेकिन दूसरी तरफ़ कुछ सच्चे मोमिन हैं जो अपने ईमान और अख़लास का सुबूत इस से पहले कई बार दे चुके हैं वह झूटी बातें बनाना पसन्द नहीं करते साफ़-साफ़ अपनी ग़लती को मान

लेते हैं। लेकिन उन के साथ इतना सख़्त मुआमला किया जाता है कि पूरी सोसाइटी से उन का बाईकाट कर दिया जाता है। इस लिये नहीं कि उन के ईमान और अख़लास के बारे में कोई शुबहा पैदा हो गया था बल्कि सिर्फ़ इस लिये कि उन्हों ने वह काम क्यों किया जो मुनाफ़िक़ों के करने का था। फिर लुत्फ़ यह कि उस मुआमले में लीडर जिस शान से सज़ा देता है और पैरू जिस शान से उस सज़ा को भुगतते हैं और पूरी जमाअत जिस शान से लीडर की मंशा के मुताबिक़ अमल करती है उस का हर पहलू बेनज़ीर है लीडर इन्तिहाई सख़्त सज़ा दे रहा है। लेकिन न गुस्सा है और न नफ़रत बल्कि गहरी मुहब्बत के साथ सज़ा दी जा रही है। बिल्कुल उसी तरह जैसे कोई मेहरबान बाप कुसूरवार बेटे को सज़ा दे और इस बात का मुतमन्नी (ख़्वाहिश मन्द) रहे कि कब बेटा दुरूस्त हो जाये तो फिर उसे सीने से चिमटा ले। पैरू सज़ा की सख़्ती से इन्तिहाई बेचैन है मगर क्या मजाल कि किसी मौक़ा पर भी अपने महबूब लीडर की इताअत के बदले किसी सरकशी का वहूम दिल में आ जाये न कोई शिकायत है, न अपने पहले कारनामों की दाद की तलब, फिर उस जमाअत को देखिये कि उस के अन्दर अपने लीडर के अहकाम की इताअत का जज़्बा किस शिद्दत से मौजूद है उधर हुक्म मिला कि फ़लाँ शख़्स से तअल्लुक़ात ख़त्म कर दिये जाएँ, तो मालूम हुआ कि पूरी बस्ती में शायद उस शख़्स का कोई शनासा ही न था। और उधर माफ़ी का एलान हुआ तो फिर हर शख़्स बेचैन हो गया कि वही सब से पहले जा कर मुबारकबाद पेश करे।

इताअते रसूल का यह एक नमूना है जो क़ुरआन अपने

पैरूओं में पैदा करना चाहता है, और जो दीन की ख़ातिर काम करने वालों में अपने सरबराहकार (इन्तिज़ाम करने वाला) और ऊलुलअमूर (बाइख़्तियार लोग) के लिये मौजूद रहना लाज़िमी है। क़ुसूरवार को देखिये कि वह देखता है कि उस से ज़्यादा बड़े-बड़े क़ुसूरवार महज़ झूट बोल कर साफ़ बच गये। और उस को उस के सच बोलने पर इतना सख़्त पकड़ा जा रहा है लेकिन इस बात पर उस के अन्दर न गुस्सा पैदा होता है और न किसी नागवारी का इज़हार होता है। सज़ा मिलने के बाद उस ने पूरे 50 दिन तक इन्तिहाई सख़्ती के साथ सज़ा झेली। लेकिन किसी एक घड़ी के लिये भी उस के दिल में यह ख़्याल पैदा न हुआ कि उस के साथ बड़ी ज़्यादती की गई, उस के पिछले कारनामों पर पानी फेर दिया गया है उस के ईमान और अख़लास पर शुब्हा किया गया है, हालाँकि वह न बदनिय्यत है और न उस के रसूल की मुहब्बत से उस का दिल ख़ाली है। उस ने जमाअत में कोई साज़िश नहीं की, लोगों में बददिली नहीं फैलाई, दूसरों को अपना हमख़याल बना कर जमाअत के अन्दर एक और जत्था पैदा करने की कोशिश नहीं की, बल्कि इन्तिहाई सब्र व सुकून के साथ सज़ा को बरदाश्त किया और हर आन इस उम्मीद में रहा कि कब उस की कोताही को माफ़ किया जाता है। यही वह मिसाली तर्ज़े अमल है जिस की बुनियाद पर अल्लाह तआला ने इन्तिहाई प्यार भरे अलफ़ाज़ में उन बुज़ुर्गों की तौबा की क़ुबूलियत का एलान फ़रमाया और यही सब से बड़ी कामियाबी है। यह वह फ़ज़्ल है जो उसी को मिलता है जिसे अल्लाह तआला अता फ़रमाये।

दाव-ए-ईमान की हक़ीक़तः- ईमान और इस्लाम का दावा

एक शख़्स पर कितनी ज़िम्मेदारियाँ आयद कर देता है उस की वज़ाहत के लिये उस मौक़ा पर साफ़-साफ़ जता दिया गया कि दरअसल इस दावा की हैसियत यह है कि अल्लाह तआला ने मोमिनों से उन की जान और उन के माल जन्नत के बदले में ख़रीद लिये हैं (सूरह तौबा आयत 111) ईमान की यह वज़ाहत जब तक अच्छी तरह ज़ेहनों में बैठी हुई न हो और हर मौक़ा पर इंसान के सामने न रहे वह दीन के तक़ाज़े पूरा करने में लाज़िमन सुस्ती बरतेगा। अल्लाह तआला ने ईमान को एक मुआहिदे से ताबीर किया है जो मोमिन अल्लाह तआला से करता है वह मुआहिदा यह है कि बन्दा अपना नफ़्स और अपना माल गोया खुदा के हाथ बेच देता है, और उस के बदले में खुदा के उस वादे को कुबूल कर लेता है कि मरने के बाद उस हमेशा रहने वाली ज़िन्दगी में उसे अल्लाह तआला जन्नत अता फ़रमाएगा।

जहाँ तक असल हकीक़त का तअल्लुक़ है इस एतबार से तो इंसान की जान और माल सब कुछ अल्लाह ही का है, उसी ने इन सब चीज़ों को पैदा किया है, और वही उन का हक़ीक़ी मालिक है, ऐसी सूरत में बन्दे का अपना है ही क्या जो वह अल्लाह के हाथ बेचे। इस तरह तो बेचने और मोल लेने का कोई सवाल पैदा ही नहीं होता। लेकिन एक चीज़ ऐसी है जो अल्लाह तआला ने अपने हर बन्दे को अता कर दी है और उसे पूरा इख़्तियार दिया है कि वह उसे जैसे चाहे काम में लाये, वह है उस के इरादे और इख़्तियार की आज़ादी। उसे इस अमर की आज़ादी दी गई है कि अल्लाह की दी हुई जान और उस के बख़्शे हुये माल को वह चाहे तो अल्लाह ही की मिल्कियत

तसलीम करता रहे जैसा कि वह हक़ीक़त में है, और चाहे तो वह खुद अपने आप उन चीज़ों का मालिक बन बैठे हालाँकि वह उन चीज़ों का मालिक नहीं है, अल्लाह तआला ने उसे यह इख़्तियार दिया है कि वह चाहे तो ख़ुदा से मुँह मोड़ कर अपनी जान और अपने माल को अपनी ख़्वाहिश या अपने जैसे दूसरे इंसानों की ख़्वाहिश के मुताबिक़ जिस राह पर चाहे लगा दे और अगर चाहे तो असल मालिक को मालिक नहीं कर के उस की बख़्शी हुई जान और उस के दिये हुये माल को उसी मालिक की मर्ज़ी के मुताबिक़ काम में लाये और इस हक़ीक़त को तसलीम करे कि दरअसल उस के पास जो कुछ है वह अल्लाह की अमानत है और वह उन चीज़ों के इस्तेमाल में खुदमुख़तार और मालिक की हैसियत नहीं रखता है।

इरादे और इख़्तियार की यही थोड़ी सी आज़ादी दरअसल उस मुआमले की बुनियाद है, जिसे अल्लाह तआला ने अपने करम से ख़रीद व फ़रोख़्त फ़रमाया है, अल्लाह तआला बन्दे से मुतालबा करता है कि मेरी बख़्शी हुई अमानत में अगर तू बावजूदे इख़्तियार के ख़यानत का रवय्या इख़्तियार न करेगा। बल्कि उस अमानत को उसी तरह काम में लायेगा जिस तरह मेरी मर्ज़ी हो तो मैं तुझे इस ज़िन्दगी के बाद आने वाली दायमी ज़िन्दगी में अपनी उस नेमत से नवाज़ूँगा जिस का नाम जन्नत है। अब जो शख़्स अल्लाह तआला के इस मुतालबे को कुबूल कर के यह इक़रार करता है कि वह अपने जान और माल को सिर्फ़ अल्लाह की मर्ज़ी के कामों में लगायेगा और उस के बदले वह आख़िरत की ज़िन्दगी में अल्लाह की जन्नत लेने पर राज़ी है वह दरअसल मोमिन है और उस का यह मुआमला जिसे

अल्लाह तआला ने ख़रीद व फ़रोख़्त फ़रमाया है उस के ईमान का इक़रार है और जो शख़्स इस मुतालबे को कुबूल नहीं करता बल्कि अपनी जान और माल को अल्लाह की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ काम में लाने का फ़ैसला करता है वह गोया अल्लाह के साथ इस ख़रीद व फ़रोख़्त के मुआमले को नहीं करता वही काफ़िर है और उस का यही इंकार कुफ़्र है।

जंगे तबूक की तयारी के लिये जिन लोगों को नबी-ए -करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हुक्म दिया था वह सब वह लोग थे जिन्हों ने अपने मोमिन होने का इक़रार किया था। गोया यह सब वह लोग थे जिन्हों ने अल्लाह के साथ इस ख़रीद व फ़रोख़्त के मुआमले को तैय किया था जिस का ज़िक्र ऊपर हुआ लेकिन जब इस दावा के इम्तिहान का नाजुक मौक़ा आया तो उन में से कुछ लोग ऐसे भी निकले जो इस इम्तिहान में पूरे न उतरे। और उन्हों ने अपनी जान और माल को अल्लाह की राह में लगाने से रोक लिया। उन में ज़्यादा तर वह लोग थे जो मुनाफ़िक़ थे जिन के ईमान का दावा झूटा था और जो महेज़ मसलेहत या दबाव की वजह से इस्लामी जमाअत में घुस आये थे। लेकिन कुछ ऐसे भी थे जिन से यह ग़लती महेज़ सुस्ती और ग़फ़लत की वजह से सरज़द हो गई थी। लिहाज़ा इस मौक़ा पर उन सब लोगों पर खुल कर तनक़ीद करने के बाद उन्हें साफ़-साफ़ बता दिया कि ईमान महेज़ यह मान लेने का नाम नहीं है कि ख़ुदा है और वह एक है। बल्कि ईमान दरअसल इस इक़रार का नाम है कि ख़ुदा ही हमारी जानों और मालों का तन्हा मालिक है और इस तरह उसे मालिक मान लेने के बाद अगर कोई अपनी जान और माल को अल्लाह की राह

में लगा देने से जी चुराता है और उसे उस राह के सिवा किसी दूसरी राह में लगाता है तो दरअसल वह यह साबित करता है कि वह अपने इक़रार में झूटा है ईमान के तमाम मुद्दइयों को अपने दावा की यह असल हक़ीक़त हमेशा अपने सामने रखना चाहिये और अल्लाह की राह में जद्दोजहद करने से किसी मौक़ा पर जी न चुराना चाहिये।

अवाम की दीनी तर्बीयतः– इब्तिदा-ए-इस्लाम के वक़्त जो लोग इस तहरीक का साथ देने के लिये आमादा हुये थे वह वही लोग होते थे जिन के दिलों में इस्लाम की सच्चाई घर कर लेती थी और जो बात को पूरी तरह समझ कर इस्लाम कुबूल करते थे लेकिन अब जबकिं इस्लाम का असर चारों तरफ़ फैलने लगा तो आबादियों की आबादियाँ फ़ौज दर फ़ौज इस्लाम में दाख़िल होने लगीं ज़ाहिर है कि उन में थोड़े ही लोग ऐसे होते थे जो इस्लाम को पूरी तरह समझ कर ईमान लाते थे। ज़्यादातर लोग वह होते थे जो बग़ैर कुछ ज़्यादा सोचे समझे इस्लाम का साथ देने के लिये तयार हो जाते थे। बज़ाहिर तो यह सूरते हाल इस्लाम की कुव्वत का सबब थी क्यों कि हज़ारों आदमी इस में शामिल होते जा रहे थे लेकिन जब तक कोई गिरोह इस्लाम के तक़ाज़ों को अच्छी तरह न समझता हो और उन तमाम अख़लाक़ी बन्दिशों को पूरा करने के लिये तयार न हो जो इस्लाम अपने मानने वालों पर आयद करता है तो दरहक़ीक़त ऐसा गिरोह इस्लामी निज़ाम की कमज़ोरी का बाइस होता है। यही सूरते हाल उस वक़्त पैदा हो रही थी जिस का कुछ न कुछ अंदाज़ा ग़ज़व-ए-तबूक के मौक़ा पर हो भी गया था लिहाज़ा उस मौक़ा पर तहरीके इस्लामी को इस अंदरूनी कमज़ोरी से बचाने

के लिये एक निहायत अहम हिदायत दी गई कि आबादी में से कुछ लोग इस्लाम के मरकज़ों पर आएँ जैसे मदीना और मक्का वग़ैरा। और यहाँ आ कर इस्लामी तालीमात और उस की तफ़सीलात को सीखें। और सही इस्लामी रूह को अपने अन्दर जज़्ब करें फिर वापस जा कर अपनी-अपनी बस्तियों में अवाम की तालीम और तर्बियम का इन्तिज़ाम करें ताकि मुसलमानों की पूरी आबादी में सही इस्लामी शुऊर पैदा हो और अल्लाह तआला के अहकाम से वाक़फ़ियत हो।

इस अवामी इस्लामी तालीम से मुराद दरअसल लोगों को महेज़ लिखना पढ़ना सिखाना नहीं था बल्कि मक़सद यह था कि लोगों में दीन की समझ पैदा हो और उन में यह बात पैदा हो जाये कि वह इस्लामी और ग़ैर इस्लामी ज़िन्दगियों के तरीक़ों में तमीज़ कर सकें। चाहे यह काम लिखना पढ़ना सिखाने के बाद किया जाये या बग़ैर इस के किया जाये। असल मक़सद दीन का सही शुऊर पैदा करना होना चाहिये। पढ़ना लिखना उस के लिये ज़रिया बन सकता है मक़सद नहीं बन सकता।[1]

दारूल-इस्लाम की पालीसी का साफ़ एलानः- तबूक की मुहिम की कामियाबी के बाद उन सब लोगों की उम्मीदों पर पानी फिर गया जो अभी तक यह आस लगाये बैठे थे कि किसी न किसी वक़्त इस्लामी तहरीक को कोई ऐसा धक्का पहुँचाएँगे कि उस का ख़ात्मा ही हो जायेगा। अब ऐसे तमाम लोगों के लिये इस के सिवा कोई चारा बाक़ी न रह गया कि वह इस्लाम

---

1. वह लिखना पढ़ना जिस का मक़सद इस्लामी शुऊर पैदा करना न हो बल्कि जिस का नतीजा इस्लामी शुऊर से महरूमी हो, वह इल्म नहीं बल्कि जिहालत है।

के दामन में पनाह लें। और अगर खुद इस नेमत से फ़ायदा न उठाएँ तो कम से कम उन की आइंदा नसलें बिल्कुल इस्लाम के रंग में रंग जाएँ।

उस वक़्त तक़रीबन तमाम अरब की हुकूमत अहले ईमान के हाथ में थी और उन के मुक़ाबिले के लिये कोई क़ाबिले लिहाज़ ताक़त बाक़ी नहीं रही थी। इस लिये अब वह वक़्त आ गया था कि इस्लामी हुकूमत की दाख़िली पालीसी का वाज़ेह एलान कर दिया जाये। चुनाचे वह हसब ज़ैल हुकूमत में पेश कर दी गई।

(क) अरब से शिर्क को बिल्कुल मिटा दिया जाये। और पुराना मशिरकाना निज़ाम बिल्कुल ख़त्म कर के अरब को हमेशा के लिये ख़ालिस इस्लामी मरकज़ बना दिया जाये। इस ग़र्ज़ के लिये मुशिरकीन से क़तई बेतअल्लुक़ी इख़्तियार की जाये और उन के साथ जितने मुआहिदे हैं उन को ख़त्म करने का एलान कर दिया जाये।

चुनाचे 9 हिजरी में हज के मौक़े पर नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हज़रत अली रज़ि० के ज़रिए हाजियों के आम मजमअ में एलान करा दिया कि:-

(1) जन्नत में कोई ऐसा शख़्स दाख़िल न होगा जो दीने इस्लाम कुबूल करने से इंकार कर दे।

(2) इस साल के बाद कोई मुशिरक ख़ान-ए-काबा के हज के लिये न आयेगा।

(3) बैतुल्लाह के गिर्द नंगे हो कर तवाफ़ करने की किसी को इजाज़त नहीं दी जाएगी।

(4) जिन लोगों के साथ रसूलुल्लाह का मुआहिदा बाक़ी है

और जिन्हों ने अपने मुआहिदे की मुद्दत तक ख़िलाफ़वर्ज़ी नहीं की है उन के साथ इस मुआहिदे की मुद्दत तक वही मुआमलात रखे जाएँगे जिन के बारे में मुआहिदा हुआ है।

लेकिन जिन लोगों ने मुआहिदे के बावजूद इस्लामी तहरीकें के ख़िलाफ़ साज़िशें की हैं उन को मुत्तला किया जाता है।

क. बस अब उन के लिये सिर्फ़ 4 महीने की मोहलत बाक़ी है इस मोहलत के अन्दर चाहे तो वह मुसलमानों से लड़ कर अपनी क़िस्मत का फ़ैसला कर लें या मुल्क छोड़ कर चले जाएँ या फिर सोच समझ कर अल्लाह के दीन को कुबूल करें और इस्लामी निज़ाम में शामिल हो जाएँ।

ख़. काबे का इन्तिज़ाम और उस की तौलियत (देखभाल) मुकम्मल तौर पर अहले तौहीद के हाथ में रहेगी। मुश्रिकों को इस में कोई दख़ल न होगा और अब काबे में कोई मुश्रिकाना रस्म अदा न होने पाएगी बल्कि अब मुश्रिक इस पाक घर के क़रीब भी न आने पाएँगे।

बारहवाँ बात

आख़िरी हज और वफ़ात

हज के लिये रवानगीः– हिजरत के दसवें साल आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हज का इरादा फ़रमाया। ज़ीक़ादा 10 हिजरी में एलान किया गया कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम हज के लिये तशरीफ़ ले जा रहे हैं। यह ख़बर तमाम अरब में फैल गई। और उस मुबारक मौक़े पर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथ हज अदा करने की सआदत हासिल करने के शौक़ में तमाम अरब उमंड आया। ज़ीक़ादा की आख़िरी तारीख़ों में आप मदीने से रवाना हुये और ज़िलहिज्जा की 4 तारीख़ को सुब्ह के वक़्त मक्के तशरीफ़ ले आये आने के बाद पहले काबे का तवाफ़ किया। और फिर मक़ामे इब्राहीम में दो रकअत नमाज़ अदा फ़रमाई फिर सफ़ा की पहाड़ी पर तशरीफ़ ले गये। और वहाँ से उतर कर मरवा पर तशरीफ़ लाये। और उस दौरान बराबर अल्लाह तआला की हमद व सना फ़रमाते और दुआएँ करते रहे, तवाफ़ और सफ़ा व मरवा की सई से फ़ारिग़ हो कर आप ने जुमेरात के दिन आठवीं तारीख़ को तमाम मुसलमानों के साथ मिना में क़याम फ़रमाया। दूसरे दिन 9 ज़िलहिज्जा को सुब्ह की नमाज़ पढ़ कर आप मिना से रवाना हो गये। और अरफ़ात तशरीफ़ लाये। यहाँ आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने वह तारीख़ी ख़ुतब-ए- हज पढ़ा जिस में इस्लाम

अपने पूरे जाहो जलाल के साथ नुमूदार हुआ। उस खुतबे में आप ने बहुत से अहम उमूर के बारे में हिदायात दीं। उन में से कुछ हसब ज़ैल हैं। फ़रमायाः-

हज का खुतबाः- "सुन रखो जाहिलियत के तमाम दस्तूर मेरे दोनों पाँव के नीचे हैं" अरबी को अजमी पर और अजमी को अरबी पर कोई फ़ज़ीलत नहीं। तुम सब आदम की औलाद हो, और आदम मिट्टी से पैदा हुये थे"।

"मुसलमान, मुसलमान आपस में भाई भाई हैं"।

तुम्हारे गुलाम! तुम्हारे गुलाम!! जो खुद खाओ वही उन को खिलाओ जो खुद पहनों वही उन को पहनाओ"।

"जाहिलियत के तमाम ख़ून बातिल कर दिये गये। (अब किसी को किसी से पुराने खुन का बदला लेने का हक़ नहीं) और सब से पहले मैं अपने ख़ानदान का ख़ून रबीआ बिनुलहर्स के बेटे का ख़ून बातिल करता हूँ"।

जाहिलियत के तमाम सूद भी बातिल कर दिये गये (अब किसी को किसी से सूद का मुतालिबा करने का हक़ नहीं) और सब से पहले मैं अपने ख़ानदान का सूद, अब्बास बिन अब्दुलमुत्तलिब का सूद बातिल करता हूँ"।

"औरतों के मुआमिले में खुदा से डरो तुम्हारा औरतों पर और औरतों का तुम पर हक़ है"।

तुम्हारा ख़ून और तुम्हारा माल क़यामत तक के लिये एक दूसरे पर हराम (क़ाबिले एहतराम) है उसी तरह जिस तरह यह दिन, यह महीना और यह शहर हराम है।

"मैं तुम में एक चीज़ छोड़े जाता हूँ अगर तुम ने उस को मज़बूत पकड़ लिया तो गुमराह न रहोगे। और वह है अल्लाह की किताब"।

इस के बाद आप ने बहुत से उसूली अहकामे शरीअत बयान फ़रमाये। फिर मजमअ की तरफ़ ख़िताब कर के पूछाः-

"तुम से ख़ुदा के यहाँ जब मेरे बारे में पूछा जाएगा तो क्या कहोगे"।

सहाबा ने अर्ज़ किया कि हम कहेंगे कि "आप ने ख़ुदा का पैग़ाम पहुँचा दिया और अपना फ़र्ज़ अदा कर दिया आप ने आसमान की तरफ़ उंगली उठाई और तीन बार फ़रमाया "ऐ अल्लाह! तू गवाह रहना" इसी मौक़े पर कुरआन पाक की यह आयात नाज़िल हुईः-

اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَ اَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِىْ وَ رَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْناً۔

अलयौमा अकमल्तो लकुम दीनकुम व अतमम्तो अलैकुम नेमती वरज़ीतो लकुमुल-इस्लामा दीना।

आज मैं ने तुम्हारे लिये तुम्हारा दीन मुकम्मल कर दिया। और अपनी नेमत पूरी कर दी और तुम्हारे लिये इस्लाम को बहैसियते दीन के पसंद किया।

इस हज के मौक़े पर आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने हज के तमाम तरीक़े ख़ुद बरत कर दिखा दिये, कि हज किस तरह करना चाहिये। इसी मौक़ा पर आप ने यह भी फ़रमाया कि "मुझ से हज के मसाइल सीख लो। मैं नहीं जानता शायद इस के बाद मुझे दूसरे हज की नौबत न आये"।

इसी मौक़े पर आप ने तमाम मुसलमानों से यह भी फ़रमायाः-

فَلْيُبَلِّغِ الشَّاهِدُ الْغَائِبَ۔

फ़लयुबल्लिग़िश-शाहिदुल-ग़ालिबाः

जो लोग इस वक़्त मौजूद हैं वह (यह सब बातें) उन तक पहुँचा दें जो मौजूद नहीं हैं।

बीमारीः- सफ़र 11 हिजरी की 18 या 19 तारीख़ थी, कि मिज़ाजे मुबारक कुछ नासाज़ हुआ। यह बुध्ध का दिन था। पीर के दिन मर्ज़ में शिद्दत हो गई। जब तक कुव्वत रही आप मस्जिद में तशरीफ़ ला कर नमाज़ पढ़ाते रहे। सब से आख़िरी नमाज़ जो आप ने पढ़ाई वह मग़रिब की नमाज़ थी। सिर में दर्द था। रूमाल बाँध कर तशरीफ़ लाये और नमाज़ में सूरह वलमुरसलाते उरफ़न पढ़ी। इशा के वक़्त कमज़ोरी बढ़ गई। और आप मस्जिद तशरीफ़ न ला सके और फ़रमाया कि अबूबक्र नमाज़ पढ़ाएँ। चुनाचे कई दिन तक हज़रत अबूबक्र रज़ि० ने नमाज़ पढ़ाई।

आख़िरी ख़ुतबा और हिदायातः-दर्मियान में एक दिन तबीयत कुछ संभली तो आप ने गुस्ल फ़रमाया। मस्जिद तशरीफ़ लाये और एक ख़ुतबा दिया। यह आप की ज़िन्दगी का सब से आख़िरी ख़ुतबा था। आप ने फ़रमायाः-

★ "ख़ुदा ने अपने एक बन्दे को इख़्तियार अता फ़रमाया कि चाहे तो वह दुनिया की नेमतों को कुबूल करे या ख़ुदा के पास (आख़िरत में) जो कुछ है उस को कुबूल कर ले। लेकिन उस ने ख़ुदा ही के पास की चीज़ें कुबूल कीं। यह सुन कर हज़रत अबूबक्र समझ गये कि इस में इशारा किस तरफ़ है, और आप रो पड़े आँहज़रत स० ने मज़ीद फ़रमायाः-

★ "सब से ज़्यादा मैं जिस की दौलत और रिफ़ाकत का ममनून हूँ वह अबूबक्र हैं। अगर में दुनिया में किसी को अपनी उम्मत में से अपना दोस्त बना सकता तो अबूबक्र को बनाता लेकिन इस्लाम का रिश्ता दोस्ती के लिये काफ़ी है।

★ और हाँ सुन लो तुम से पहले क़ौमों ने अपने पैग़म्बरों और बुज़ुर्गों की क़ब्रों को इबादतगाह बना लिया, देखो तुम ऐसा न

करना मैं तुम को मना किये जाता हूँ"। फिर फ़रमायाः-

★ "हलाल और हराम की निसबत मेरी तरफ़ न की जाये मैं ने वही चीज़ें हलाल की हैं जो ख़ुदा ने हलाल की हैं और वही चीज़ें हराम की हैं जो ख़ुदा ने हराम की हैं।

उसी मर्ज़ की हालत में एक दिन आप ने अहले ख़ानदान को मुख़ातब कर के फ़रमायाः-

"ऐ पैग़म्बरे ख़ुदा की बेटी फ़ातमा और ऐ पैग़म्बरे ख़ुदा की फूफी सफ़िया! कुछ कर लो! जो ख़ुदा के यहाँ तुम्हारे काम आये मैं तुम्हें ख़ुदा से नहीं बचा सकता"।

एक दिन मर्ज़ की तकलीफ़ ज़्यादा थी आप कभी चादर मुँह पर डाल लेते और कभी उलट देते। इस हालत में हज़रत आयशा रज़ि० ने ज़ुबाने मुबारक से यह अलफ़ाज़ सुनेः-

यहूद और नसारा पर ख़ुदा की लानत हो। उन्हों ने अपने पैग़म्बरों की क़ब्रों को इबादतगाह बना लिया"।

आप ने हज़रत आयशा के पास कभी कुछ अशर्फ़ियाँ रखवाई थीं। उसी बेचैनी की हालत में एक बार फ़रमाया "आयशा वह अशर्फ़ियाँ कहाँ हैं? क्या मुहम्मद ख़ुदा से बदगुमान हो कर मिलेगा? जाओ उन को ख़ुदा की राह में ख़ैरात कर दो"।

रफ़ीक़े आला की तरफ़ कूचः- मर्ज़ में कभी ज़्यादती हो जाती और कभी कमी। जिस दिन वफ़ात हुई। यानी दोशम्बा के दिन उस दिन बज़ाहिर तबीयत को सुकून था। लेकिन जैसे-जैसे दिन चढ़ता गया आप पर बार-बार ग़शी तारी होती गई। उस हालत में अकसर ज़ुबाने मुबारक से यह अलफ़ाज़ अदा होते रहे।

مَعَ الَّذِيْنَ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ۔

मअल्लज़ीना अनअमल्लाहु अलैहिम।

उन लोगों के साथ जिन पर ख़ुदा ने इनआम किया।

और कभी फ़रमातेः-

اَللّٰهُمَّ فِى الرَّفِيْقِ الْاَعْلٰى.

अल्लाहुम्मा फ़िर्रफ़ीकि-ल-अअला।

ख़ुदावन्द बड़े रफ़ीक़ हैं।

और कभी फ़रमातेः-

بَلِ الرَّفِيْقِ الْاَعْلٰى.

बलिर्रफ़ीकि-ल-अअला।

अब और कोई नहीं बल्कि वह बड़ा रफ़ीक़ दरकार है।

यही कहते कहते हालत ग़ैर होने लगी। और रूहे पाक आलमे कुद्स में पहुँच गई।

اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى مُحَمَّدٍ بَارِكْ وَسَلِّمْ.

अल्लाहुम्मा सल्ले अला मुहम्मदिन बारिक वसल्लिम

साले वफ़ात 11 हिजरी है रबीउल-अव्वल का महीना था। दोशम्बा का दिन आम तौर पर मशहूर है कि तारीख़ 12 थी। लेकिन इस में इख़्तिलाफ़ है। मौलाना सय्यद सुलेमान साहब नदवी की तहक़ीक़ के मुताबिक़ यह रबीउल-अव्वल की पहली तारीख़ थी।

दूसरे दिन तजहीज़ व तकफ़ीन की तकमील हुई और शाम तक़ जिस्मे मुबारक उसी हुजरे में जहाँ आप ने इन्तिक़ाल फ़रमाया था। सुपुर्दे ख़ाक कर दिया गया।

اِنَّكَ مَيِّتٌ وَ اِنَّهُمْ مَيِّتُوْنَ

इन्नका मय्येतुन व इन्नहुम मय्येतून

اِنَّا لِلّٰهِ وَ اِنَّا اِلَيْهِ رَاجِعُوْنَ

इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन